हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर-सीरीजका ५५ वाँ ग्रन्थ

९५

अञ्जना

[भावपूर्ण पौराणिक नाटक]

लेखक—

श्रीयुत सुदर्शन

प्रकाशक—

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय, बम्बई

तृतीयावृत्ति } कार्तिक, १९९३ वि॰ नवम्बर, १९३६ { मूल्य १=)

प्रकाशक—
नाथूराम प्रेमी,
हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,
हीराबाग, बम्बई नं० ४

मुद्रक—
रघुनाथ दिपाजी देसाई,
न्यू भारत प्रिंटिंग प्रेस,
६, केळेवाडी गिरगांव मुंबई.

१५

निवेदन

कई वर्ष हुए, मैने एक नाटक लिखा था। उस समय मुझे साहित्य-ससारके इस बाजारका जरा भी अनुभव न था। मै समझता था, केवल तुकबन्दी कर लेना ही काफी है। इसके सिवा नाटककारको किसी अन्य प्रयत्नकी आवश्यकता नही। गद्य और पद्य दोनाके ढेर लगा दिये। इसके बाद सौभाग्यसे जब फ्रासीसी, ॲगरेजी और बगाली नाटक देखनेका अवसर मिला, तब मेरी ऑखें खुल गई। पहले विचार एकदम बदल गये। अब पता चला कि नाटकमे कविता रखना कैसी भूल है। नाटक मानव-जीवनका चित्र है। इसमे सबसे बड़ा गुण यह होना चाहिए कि यह स्वाभाविक हो। यदि यह नही तो इसे नाटक कहना साहित्य-ससारका सबसे बड़ा झूठ बोलना है। यह सच है कि पद्यसे नाटकमें जोर आ जाता है और स्टेजपर सौन्दर्य छा जाता है, परन्तु क्या किसीने कभी देखा है कि स्त्री-पुरुष बैठे हों और कवितामे बातचीत कर रहे हो, या किसीको नागने काट खाया हो, और वह ताल-स्वरके साथ गाने लगा हो? और हमारा स्टेज तो इतना निकृष्ट हो चुका है कि राजा-रानी, अमीर वजीर, ब्राह्मण-योद्धा, सभी गाते हैं और गजब यह है कि उनके गानेका कोई समय नियत नहीं। वह हर समय गाते हैं और बात बातमे छन्द और दोहे पढ़ते हैं। अञ्जनामे यह गुण या अवगुण नही। इसमें मानव-जीवनकी एक असाधारण घटनाका साधारण चित्र खींचा गया है।

नाटककारकी इच्छा होती है कि उसका हरएक पात्र सुकवि हो, और वह जो कुछ कहे, देखने और सुननेवालोंके दिलमें बैठ जाय। परन्तु उसे सयम रखना चाहिए। उच्चकोटिके सद्विचार प्रकट करनेके लिए एक-दो पात्रोंको चुन लेना चाहिए। अन्य पात्र साधारण मनुष्य ही रहे, तो अच्छा है।

इस समयतक मै कहानियाँ लिखता रहा हूँ। नाट्य-ससारमे मेरा यह पहल ही प्रयत्न है। इसमे मुझे सफलता हुई है या नही, यह मैं नही कह सकता, समय आप कह देगा। मुझे केवल यही कहना है कि इस समयतक हिन्दीमे जो उत्तम नाटक छपे हैं, वे प्रायः बगला या अँगरेजी नाटकोंके अनुवाद हैं, हिन्दीमे मौलिक नाटकोका अतिशय अभाव है। मुझे कमसे कम इतना सतोष है कि मैंने मौलिक नाटकोमे एककी वृद्धि की है। नाटक अच्छा है या बुरा, यह दूसरी बात है, परन्तु इसके लिए हिन्दी भाषाको किसी अन्य भाषाके सम्मुख सिर झुकानेकी आवश्यकता नही। और मैं इसे बडी बात समझता हूँ।

रामकुटिया बुकडिपो, लाहौर
१८ अगस्त १९२३

—सुदर्शन

प्रस्तावना

अञ्जना और पवनकी कथा बहुत प्रसिद्ध है। इसका वर्णन जैन-ग्रन्थोमे पाया जाता है। सर्वप्रिय बनानेके लिए अनेक लेखकोने इसको बड़े बडे रोचक रूपोमे प्रकट करनेका यत्न किया है। एकने इसे यदि साधारण जीवन-चरितके रूपमे लिखा है तो दूसरेने इसे उपन्यासका रग देकर चित्ताकर्षक बनाया है। हनुमान-चरित आदि पुस्तकोकी सहस्रो प्रतियाँ भारतीय भाषाओमे निकल चुकी हैं। भारतीय नारी-समाज सती अञ्जनाके पवित्र चरित्रका बडी श्रद्धा और प्रेमसे पाठ करता है। उसकी पुनीत जीवनीसे उसे अपने जीवनोको उच्च और पवित्र बनानेके लिए, प्रोत्साहन मिलता है। इस पतित अवस्थामे, आज भी भूमण्डलकी किसी भी खण्डकी स्त्रियाँ पातिव्रत्य आत्मत्याग, और धर्मपरायणता आदि दिव्य गुणोमे आर्य्य ललनाओका सामना नही कर सकती। इसका कारण वह अदृश्य परन्तु प्रबल प्रभाव है जो माता सीता, सती सावित्री और देवी अञ्जनाके पावन आदर्श भारतीय स्त्रियोपर डाल रहे हैं। इस प्रभावको बनाये रखनेके लिए जो भी यत्न हो वह स्तुत्य है। इसलिए श्रीयुत सुदर्शनने इस पावनी कथाको नाटक रूपमे लिखकर वस्तुत. समाज-सेवाका एक भारी काम किया है। हिन्दीमे इस समय उच्च कोटिके मौलिक नाटकोका भारी अभाव है। इस समय हिन्दीमे जितने भी अच्छे नाटक मिलते हैं, वे प्राय. सबके सब दूसरी भाषाओके अनुवाद-मात्र हैं। यह कोई अपमानकी बात नहीं है। प्रत्येक भाषाकी उन्नतिके आरम्भिक कालमे ऐसा ही हुआ करता है। इधर दो-तीन वर्षसे हिन्दीमे मौलिक नाटक लिखनेके लिए भी उद्योग होने लगा है। कुछ नाटक निकले भी हैं, किन्तु उनमे लेखकोको बहुत कम सफलता हुई है। किसी किसी नाटकमे तो ऐसी अस्वाभाविक बाते भरी हुई हैं कि देखकर हँसी आती है। एक पात्र फॉसीपर लटकाया जानेको है और वह गाता है, चोट लगती है और वह नाचता है। कैसी अस्वाभाविकता है! इनमे कुछ नाटक ऐसे भी हैं जिन्हें दृश्य काव्य कहना कठिन है, वे श्रव्य या पाठ्य ही कहे जा सकते हैं, और जो काव्य रगभूमिपर खेला नहीं जा सकता उसे नाटक कहना ठीक नही। नाट्यकलाकी दृष्टिसे नाटकोकी रचनामे पात्रोका चरित्र-चित्रण एक

बहुत आवश्यक गुण है। इसमे सफल होनेमे ही नाटककारका कौशल है। जो लेखक जीता जागता चित्र खींच सकता है वही सफल है। हमारे हिन्दीके मौलिक नाटकोमे बहुतसे ऐसे हैं जिनमे यत्नपूर्वक ढूंढनेसे भी ऐसा कोई पात्र नहीं मिलता जिसे हम नियमानुकूल नायक कह सके, और न कोई उसके उपयुक्त नायिका ही मिलती है।

रंग बहुतोपर चढानेका यत्न किया गया है, परन्तु पूर्ण रूपसे कोई नही रँगा जा सका। परन्तु बडी प्रसन्नताकी बात है कि सुदर्शनजीकी इस कृतिमे इनमेसे कोई भी दोष नही। हिन्दीके मौलिक नाटकोमे इस नाटकका स्थान बहुत ऊँचा है। यह एक ऐसी वस्तु है जिसको हिन्दीवाले बगालियोको दिखलाकर गर्व-पूर्वक कह सकते है कि यह भी द्विजेन्द्रलाल रायकी रचनाओकी टक्करकी चीज है।

अञ्जनाकी मूल कथामे अनेक बाते अस्पष्ट है। उनके कारण-कार्यका सबध साधारण पाठकोकी समझमे नही आता। उदाहरणार्थ,—अञ्जनाका अपनी सासको पवनकी अँगूठी दिखा देने पर भी सासका उसपर विश्वास न करना, और व्यभिचारके सदेहपर उसे घरसे बाहर निकाल देना पाठकोकी समझमे नही आता। परन्तु सुदर्शनने इस पहेलीको खूब स्पष्ट कर दिया है। आपका कहना है कि पवन अपनी अँगूठीके नगके नीचे एक कागजका टुकडा रक्खा करता था। उसपर उसके हस्ताक्षर रहते थे। ललिताने अञ्जनासे पवनकी असली अँगूठी चुराकर वैसी ही एक नकली अँगूठी उसे पहना दी थी। अञ्जनाको इस बातका बिल्कुल ज्ञान न था। किन्तु जब उसकी सासने अँगूठीको तोड़कर उस कागजपर अपने पुत्रके हस्ताक्षर न देखे तब उसे सदेह होना स्वाभाविक था।

सुदर्शनजीकी यह रचना एक सिद्धहस्त नाटककारकी रचना है। सवाद, अङ्क और दृश्य-वितरण, रग भूमिके सकेत इत्यादि जितनी भी नाटककी विशेषताएँ होती हैं, उन सबपर आपका पूर्ण ध्यान है। प्रत्येक दृश्य आपसमे खूब सम्बद्ध है। कथानक ऐसे ढँगसे रक्खा गया है कि पाठकोकी उत्सुकता बराबर बढती चली जाती है। पुस्तकको समाप्त किये बिना छोड़ना कठिन हो जाता है। सम्पूर्ण नाटक शृङ्गार, वीर, करुण, और अद्भुत रससे ओतप्रोत है। इसमें स्वामिभक्ति, पतिभक्ति, प्रेम तथा प्रकृतिका वर्णन निहायत अनूठा है।

सुदर्शन मानव-मनोविकारोंको खूब समझते हैं। उनको प्रकट करनेमें भी वे कमाल करते हैं। मनोभावों और कल्पनाओंका वर्णन वे ऐसी स्पष्ट रीतिसे करते है कि पाठकोंकी आँखोंके सामने उनका एक जीता जागता चित्र-सा नाचने लगता है। इस नाटकमे एक नहीं अनेक ऐसे स्थल हैं जहाँ पाठक और दर्शकका मन करुणाके अथाह सागरमें निमग्न हो जाता है। ससुरालसे निकाली जानेपर अञ्जना अपने मायके पहुँचती है, परन्तु वहाँ भी आश्रय न पाकर वसन्तमालाके साथ वनमे जानेको विवश होती है। यह दृश्य बड़े ही हृदय-द्रावक शब्दोमे चित्रित है। इसी प्रकार, अञ्जना-पवनका मिलाप हो जानेके पश्चात् वसन्तमाला अपना जीवनोद्देश्य पूरा हुआ समझ सन्यास ग्रहण कर लेती है। अञ्जना और पवन उसे अननुय विनय-पूर्वक घरमे रहनेकी प्रार्थना करते हैं, वह एक नहीं सुनती। जब वे देखते हैं कि वह किसी प्रकार भी नही मानती तब वे अन्तको शिशु हनुमानको उसकी गोदमे डाल देते हैं। बस, उनका जादू चल जाता है, और वह गेरुए वस्त्र उतारकर घरमे रह जाती है। इस घटनाका वर्णन करके नाटककारने नारी-प्रकृतिके गम्भीरतम प्रदेशको टटोलनेके साथ ही अपनी रचना-चातुरीका अपूर्व परिचय दिया है।

सुदर्शन केवल नाटककार ही नहीं, वे सिद्धहस्त गीतनिर्माता और नीतिशिक्षक भी हैं। इस नाटकमे उन्होंने स्थान स्थानपर जो गीत दिये हैं वे बड़े ही मधुर, सरस और हृदय-ग्राही हैं। सवादोंके द्वारा पितृभक्ति, वृद्धोंके सम्मान और वीरोंकी पूजाके उपदेश बड़ी ही उपयुक्त और प्रभावशालिनी भाषामे दिये गये हैं। मुझे विश्वास होता है कि शीघ्र ही कोई नाटकमडली इसको रगभूमिपर खेलनेके लिए उद्यत हो जायगी और यह नाटक जहाँ अपने रचयिताकी कीर्तिको बढायेगा वहाँ हिन्दी-साहित्य-भडारका एक बहुमूल्य रत्न भी समझा जायगा।

पुरानी वस्ती,
होशियारपुर } सन्तराम, बी० ए०

पात्र-परिचय

स्त्री—

अञ्जना—महेन्द्रपुरके राजाकी पुत्री ।
हृदयसुन्दरी—अञ्जनाकी माता ।
केतुमती—अञ्जनाकी सास ।
रविसुन्दरी—अञ्जनाकी मामी ।
सुखदा—अमृतपुरके राजाकी पुत्री ।
वसन्तमाला—अञ्जनाकी सहेली ।
ललिता—सुखदाका बनावटी नाम ।
चम्पा—केतुमतीकी दासी ।
प्रेमसुन्दरी—राजा वरुणकी रानी ।
चन्द्रमुखी, शान्ता, गानेवालियाँ, दासियाँ ।

पुरुष—

पवन—राजा प्रह्लाद विद्याधरका पुत्र ।
प्रहसित—पवनका मित्र ।
प्रह्लाद विद्याधर—पवनके पिता ।
महेन्द्रराय—अञ्जनाके पिता ।
प्रतिसूर्य—अञ्जनाके मामा
विद्युत्प्रभ—एक राजकुमार ।
वरुण—दुर्मति नगरके राजा ।
अश्वपति—वरुणका सेनापति ।
रावण—लंकाके राजा ।
श्रीदेव
रत्नवीर } —चम्पाके भाई ।
दास, सिपाही, साधु, बालक ।

:o:

स्थान—भारतवर्ष ।
समय—महाराज रामचन्द्रसे पहले ।

अञ्जना

पहला अंक

पहला दृश्य

स्थान—अमृतपुरके राजमहलकी वाटिका।

समय—सन्ध्यासे कुछ देर पश्चात्।

[फूलके एक पेड़के सहारे राजकुमारी सुखदा चिन्तामें निमग्न खड़ी है। आठ सहेलियाँ गानेमें लीन हैं। सुखदा गानेकी ओरसे अनमनी प्रतीत होती है।]

सहेलियाँ गाती हैं—

प्रकृतिने सज्यो मनोहर साज।
नव दुलहिनलौ बनी ठनी है, स्वागत-हित रितुराज॥
वन वीथिनमें बगर रही है, सुदरता मधु व्याज।
बिरहिनि-हिय वेधन जनु आयो, रितुपति सहित समाज॥
लता लहलहा उठी ललकिके, बौरे रसिक रसाल।
आम्र-मजरीपै रस चाखन, टूट परी अलि-माल॥
चंचरीक गुंजार स्रवन करि, मनको होत अनन्द।
कोइल-कूक मधुर अति लागत, पवन बहत मँद मद॥
काको मन नहिं होत प्रफुल्लित, देखि वसत बहार।
द्रुम-दल बकुल आदि सब फूले, बहन लगी रस-धार॥

[सहेलियाँ जाती है । सुखदा कुछ देर उसी तरह चुपचाप खडी रहती है । एकाएक चौककर आगे बढती है और पागलोकी नाई चारो ओर देखनेके पश्चात् आप-ही-आप बडबडाने लगती है ।]

सुखदा—एक एक करके दस वर्ष बीत गये, परन्तु मेरी आँखोके सम्मुख अभीतक वही रम्य मूर्ति, उसी सुन्दरताके साथ घूम रही है। यही ऋतु थी, यही समय था । यही स्थान था, यही वृक्ष था । सूर्य्य अस्त हो रहा था, मन्द मन्द वायु चल रहा था । प्रकृतिपर अनूठा यौवन छाया हुआ था । पक्षी अपने अपने घोसलोको लौट रहे थे । मै इसी वृक्षके नीचे बैठी हुई पुष्पोकी माला बना रही थी । इतनेमे देखा, एक नवयुवक सम्मुख उपस्थित है । उसकी आँखोमे आकर्षण था, कपोलोपर मनोहरता थी, मस्तकपर तेज था । मेरा हृदय धडकने लगा, सिर घूमने लगा । नवयुवक मेरे समीप आया । मेरे हाथोने वह माला उसके गलेमे डाल दी, वह चला गया । मैने देखा कि हृदय नही रहा । उसके स्थानमे माधुर्य्यसे मिली हुई पीड़ा थी, शीतलतासे मिली हुई जलन थी, रागसे मिला हुआ रुदन था, परन्तु हृदय नही था । तबसे मै उसीके लिए रो रही हूँ, उसीके लिए तडप रही हूँ । परन्तु माता-पिता उसके साथ विवाह करनेको राजी नहीं है । कौन जाने, मेरे जीवनकी नाव किधर जा रही है !

[प्रियतमाका प्रवेश]

सुखदा—कौन ? प्रियतमा । बोलो, कहो । बताओ क्या समाचार है ?

प्रियतमा—तुम्हारे पिताने तुम्हारा विवाह ठीक कर दिया ।

सुखदा—क्या राजकुमार पवनके साथ ?

प्रियतमा—नही ।

सुखदा—तो—

प्रियतमा—राजकुमार विद्युत्प्रभके साथ।

सुखदा—सत्यानाश! क्या मेरी माताने इसका विरोध नहीं किया? अस्वीकृति जतानेको सिर नहीं हिलाया? क्रोध प्रकाश करनेको अश्रु नहीं बहाये?

प्रियतमा—नहीं, वे इस प्रबन्धसे स्वयं सहमत है।

सुखदा—तो सब कहना-सुनना निष्फल हुआ। अब अन्तिम प्रयत्न करना होगा।

प्रियतमा—क्या?

सुखदा—वही, जिसके सिवा और कोई मार्ग शेष नहीं रहा।

प्रियतमा—अर्थात्—

सुखदा—गृह-त्याग।

प्रियतमा—नहीं नहीं, ऐसा न करो। पहले महारानीसे जाकर भेट करो। सम्भव है, बात बन जाय। जो भी हो वे तुम्हारी माता है, स्त्री है। स्त्रीका हृदय कोमल होता है।

सुखदा—(क्रोधसे) मेरी माता! क्या वह स्त्री है और इसपर भी स्त्रीके प्रेमका रहस्य नहीं जानती है? और इसपर भी एक स्त्रीकी चिताकी ज्वालापर अपनी और पिताजीकी प्रसन्नताका भवन बनाना चाहती है? क्या वह स्त्री है और इसपर भी यह समझती है कि स्त्रीका हृदय ऐसी भूमि है, जिसमे प्रेमाकुर कुशाके समान जन्म लेता है, और उखाड़ा जाकर फिर उग सकता है? क्या वह स्त्री है और फिर भी नहीं जानती कि स्त्रियाँ प्रेमके लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर करनेको प्रस्तुत रहती है?—नहीं नहीं, परमात्माके लिए मुझे धोखा न दो। वह स्त्री नहीं है।

प्रियतमा—राजकुमारी, मै अनुरोध करती हूँ कि एक बार उनके पास जाकर अपने प्रेमका परिचय दो, और प्रार्थना करो जिससे वे तुम्हे इस उलझनसे बाहर निकाले। निश्चय वे तुम्हारी प्रार्थनापर ध्यान देगी, तुमपर करुणा करेगी।

सुखदा—परन्तु मुझे इस प्रकारकी कोई सम्भावना नही दीखती।

प्रियतमा—एक बार जाओ तो सही—

" प्रयत्नेन हि सिद्ध्यन्ति कार्य्याणि न मनोरथैः। "

सुखदा—परमात्मा ! मेरी निराशाके मेघोसे आच्छादित प्रारब्धके आकाशपर आशाका चन्द्र उदय कर। (प्रस्थान)

प्रियतमा—कैसे आश्चर्यकी बात है, कि राजकुमारी जिसको समस्त हृदयसे प्रेम करती है, जिसपर मरती है, जिसको त्यागकर स्वर्गकी भी इच्छा नही करती, जिसके लिए प्रत्येक दुःख भोगनेको अग्रसर है, उसको इसका ध्यान तक भी नहीं है ! (प्रस्थान)

[महारानी और सुखदाका प्रवेश।]

महारानी—तू क्या बक-बक कर रही है, मुझे कुछ पता नही लगता।

सुखदा—मै केवल यह कहना चाहती हूँ कि आपने मुझे उत्पन्न होनेके साथ ही क्यो न मार डाला ? सुनती हूँ, बाल्यावस्थामे एक बार रोग-ग्रस्त होकर मृत्युके किनारे पहुँच गई थी। उस समय परिश्रम करके क्यो बचाया जो आज मेरा बलिदान करनेको उद्यत हुई हो ?

महारानी—पगली !

सुखदा—मुझपर कृपा करो। राजाओके यहाँ सैकड़ो दासियाँ

अन्न पाती है। क्या आपके यहाँ मेरे लिए भोजन नही रहा जो मुझे अपने द्वारसे धक्के दे रही हो?

महारानी—क्या कन्याओका विवाह करनेसे यह सिद्ध होता है कि उनके माता-पिताके घरमे उनके लिए अन्न नही रहा?

सुखदा—परन्तु यह विवाह नही है। इससे तो विष खा करके मर जाना अधिक सुखदायक होगा।

महारानी—तुम्हारे कथनका प्रयोजन यह कि तुम्हारा विवाह पत्रनके साथ हो तभी तुम सुखी-प्रसन्न हो सकती हो, अन्यथा नहीं?

सुखदा—(चुप रहती है।)

महारानी—तुम भारतकी ललना हो। तुम आर्य्यावर्तकी पुत्री हो। तुम्हे यह बेहयाई नही सोहती। भारतवर्षकी कन्याये माता-पिताके सकेतपर विष खा सकती है, अग्निमे कूद सकती है, परन्तु सम्मुख ऑखे उठानेका उन्हे साहस नही हो सकता। भोली भाली गौकी भाँति माता-पिताके द्वारा जिसके हाथ सौंप दी जाती है, उसीके पीछे जानेमे ही वे अपना कल्याण समझती है। माता-पिताकी इच्छा उनकी प्रसन्नता, माता-पिताका कथन उनके लिए आदेश और माता-पिताका चुनाव उनके लिए शिरोधार्य्य होता है। माता-पिताकी प्रत्येक बात उनके लिए निर्भ्रान्त प्रमाण होती है, जिसका वे ऑखे बद करके अनुकरण करना ही परम धर्म समझती है। और यह वह बात है, जिसपर भारतको गौरव और मान है और जिसके लिए अन्य देश उसका आदर करते है। भारतीय ललना ही भारतकी सपत्ति है, जिससे वञ्चित होकर भारतका सिर ऊँचा नही रह सकता। क्या तुम उसी भारत-भूमिसे उत्पन्न हुई बालिका हो? और तिसपर भी

अपने माता-पिताकी इच्छाका उल्लङ्घन करके उस पुरुषसे विवाह करनेकी इच्छुक हो जिसके पितासे न केवल तुम्हारे पिताकी मैत्री नही, किन्तु घोर लडाई हो चुकी है ?

सुखदा—मै बालपनसे सुनती आई हूँ कि मेरी प्रकृति सामान्य भारत ललनाओसे अधिकाश भिन्न है। इसीसे कहती हूँ कि मै माता-पिताको प्राण दे सकती हूँ परन्तु विवाहके विषयमे उनका चुनाव स्वीकार नही कर सकती। हृदय एक पुरुषको देकर शरीर दूसरेके अधिकारमे नही दे सकती।

महारानी—परन्तु, तुम्हारा विवाह पवनके साथ किसी हालतमे भी नहीं हो सकता।

सुखदा—मै आजीवन कुँवारी रहनेको उद्यत हूँ।

महारानी—इसमे, लोक-लज्जाका भय है।

सुखदा—मै मरनेको राजी हूँ।

महारानी—लोग क्या कहेगे ?

सुखदा—उनके कहनेको रोकना ब्रह्माकी शक्तिसे भी बाहर है।

महारानी—जो कुछ भी हो, यह विवाह नही टलेगा।

सुखदा—तो क्या यह अन्तिम निश्चय है ?

महारानी—हाँ अन्तिम।

सुखदा—परिवर्तन नही हो सकता ?

महारानी—नही।

सुखदा—तो परिणामका उत्तरदायित्व भी आपपर ही है।

महारानी—देखा जायगा।

(दोनोंका क्रोधसे प्रस्थान)

दूसरा दृश्य

स्थान—आदित्यपुरमे राजा प्रह्लाद विद्याधरका महल।

समय—दोपहर।

[राजकुमार पवन और प्रहसित।]

प्रहसित—राजकुमार, निश्चय यह आपका परम सौभाग्य है कि आपका विवाह राजकुमारी अञ्जनासे होना निश्चित हुआ है जो इस समय भारत-भरमे न केवल परम सुन्दरी ही है किन्तु परम सुशीला भी है।

पवन—परन्तु चित्र देखनेसे तो यह प्रतीत होता है कि वह वास्तविक नहीं है।

प्रहसित—वास्तविक नही तो क्या कल्पित है?

पवन—मेरा यही विचार है।

प्रहसित—इस विचारका कोई कारण?

पवन—कारण यह कि चित्रमे वह जितनी सुन्दरी दिखाई देती है, उतनी सुन्दरी इस ससारमे होना सभव नही। पुष्पकी भॉति कोमल, सूर्य्यकी भॉति तेजस्विनी, चन्द्रमाकी भॉति प्रकाशमयी, गगाके समान मनोहर। क्या ऐसी स्त्रियॉ इस ससारमे होती है? मेरा तो विचार है कि चित्रकारने हिमालयकी किसी पवित्र कन्दरामे बैठकर अत्यन्त परिश्रमसे मधुर सगीत, उच्चकोटिकी कविता और उत्तम प्रकारकी शिल्पकलाको एक स्थानपर इकट्ठा कर दिया है और उसकी रसगर्भा लेखनीने उसे चित्रके रूपमे कागज़पर बखेर दिया है।

प्रहसित—इस कविताके लिए आपको बधाई देनी चाहिए।

पवन—नहीं मित्र, नहीं। तुम व्यग करते हो, परन्तु मेरा सन्देह

रात्रिकी निद्रा और दिनका आराम भग कर रहा है। क्या इसका कोई उपाय नही ?

प्रहसित—है।

पवन—क्या ?

प्रहसित—यह कि आप इस सन्देहको भग कर दे, चित्त शान्त हो जायगा।

पवन—प्रहसित—

प्रह०—मुझे आश्चर्य्य है, आप इतने व्याकुल क्यो हो रहे है ? यदि आपके पिता आपका विवाह किसी साधारण आकृतिकी राजकुमारीसे करनेको तैयार हो जाते, तो आपका क्या हाल होता ?

पवन—मित्र, मालूम होता है, तुमने इतने दिनो मेरी संगतिमे रहनेके पश्चात् भी मुझे नही पहचाना। मेरी महाराजपर अत्यन्त भक्ति तथा श्रद्धा हैं। मेरा विवाह यदि वे संसारकी सबसे अधिक कुरूपा स्त्रीसे कर देते तब भी मै अप्रसन्न न होता, उनकी भक्तिमे समुद्रकी तरह अचल और हिमालयकी नाई स्थिर रहता, उनके चुनावके सन्मुख सिर झुकाता और समझता कि मेरी ऑखोकी भूल है, मेरी बुद्धिमे विकार है, परन्तु उनको दोष कदापि न देता।

प्रह०—इतनी भक्तिका कारण ?

पवन—यह कि वे मेरे पिता है, और पिता पुत्रका अमगल चाहे, यह असम्भव है। प्रहसित, सोचकर देखो। जो पिता सन्तानके लिए भूखा रहता है, देश छोड़कर विदेश जाता है, रोगमे दिन-रात एक कर देता है, प्यारमे पागल हुआ फिरता है, उसके लिए सब कुछ करनेको उतारू हो जाता है, क्या वह पुत्रका अशुभचिन्तक हो सकता है ?

जिसका हृदय प्रेमका स्रोत है, जिसका ध्यान निद्रामे भी पुत्रकी ओर खिचा रहता है, क्या वह पुत्रको जान-बूझकर दुखी कर सकता है ? जो दस्यु होकर भी सन्तानके लिए आर्य्य, लम्पट होकर भी सन्तानके लिए ऋपि और हत्याकारी होते हुए भी सन्तानके लिए प्रेम-पुञ्ज है, क्या उस पिताद्वारा पुत्रका बुरा हो सकता है ? कदापि नही।

प्रह०—धन्य हो राजकुमार, धन्य हो। परन्तु विवाहके मामलेमे लोगोका मत-भेद है। कुछ पुरुषोका यह विचार है कि वर-वधूका आपसमे सहमत होना ही काफी है। परन्तु अन्य विद्वानोकी यह सम्मति है कि उनको माता-पिता आदिकी सम्मति भी लेनी चाहिए। इसके सम्बन्धमे आपका क्या विचार है ?

पवन—मेरा विचार दोनोसे भिन्न है। यौवनके प्रवाहमे बहते हुए युवक और युवतियाँ केवल सुन्दरताकी ओर ही ध्यान देते है, परन्तु उन विषयोकी ओर नही, जिनपर जीवनकी प्रसन्नता निर्भर है। यही कारण है कि बादमे फिर उनके घरोंसे दुखका धूआँ उठता दिखाई देता है। मेरी सम्मतिमे तो यह विषय माता-पितापर ही छोड़ देना चाहिए, वे जैसा चाहे करे। परन्तु यह आवश्यक है कि अन्तिम निश्चय करनेसे प्रथम वर-वधूसे भी सलाह ले ले कि हमारा यह विचार है, तुम्हे कोई एतराज तो नही।

प्रहसित—(स्वगत) कैसे उत्तम विचार है ! राजकुमारने साधुओका-सा स्वभाव पाया है।

पवन—प्रहसित !

प्रह०—हाँ राजकुमार !

पवन—मै महेन्द्रपुर जाना चाहता हूँ। तुम्हे मेरे साथ चलना होगा। एक ही दिनमे लौट आयेंगे।

प्रह०—क्या अञ्जनाको देखनेके लिए? अपना सन्देह मेटनेके लिए?

पवन—हाँ, और तो कोई प्रयोजन नही है।

प्रह०—परन्तु आपका वहाँ जाना रीति-नीतिके अनुकूल नही है।

पवन—तो क्या किया जाय? भेष बदल ले?

प्रह०—ठीक है। इससे काम चल जायगा। न कोई पहचान सकेगा, न कोई आपत्ति होगी।

पवन—अच्छा तो कब चले?

प्रह०—कल प्रातःकाल।

पवन—बहुत अच्छा, परन्तु भूल न जाना।

प्रह०—नही। भेष बदलनेकी सामग्री तय्यार रहे। मै नियत समयपर उपस्थित हो जाऊँगा। अब जाता हूँ। (प्रस्थान)

पवन—(अञ्जनाका चित्र निकालकर) कितना सुन्दर और कितना पवित्र चित्र है कि देखकर न आँखे तृप्त होती है न हृदय सन्तुष्ट होता है। यदि वह ऐसी ही है, जैसी चित्रसे प्रतीत होती है, तो मेरा जीवन सुखकी, आशाकी और उल्लासकी नदी बन जायगा, जो पुष्पोके घने वृक्षोकी छायामे बह रही हो, और जिसपर देवतागण गगनसे आशीर्वादकी मनोहर तथा मधुर अमृत-धारा बरसा रहे हो। परमात्मा, मुझे इस सुन्दरीके योग्य बना और जो बोझ मेरे कन्धोपर पड़ने वाला है, उसे उठानेका बल दे। (प्रस्थान)

तीसरा दृश्य

स्थान—अमृतपुरसे कुछ दूरीपर सड़क

समय—तीसरा पहर

सुखदा—वे कहते है कि प्रेम एक रोग है, जो स्वास्थ्यको निर्बलता और शान्तिको अशान्तिमे परिवर्तित कर देता है, और अपनी दिखाई न देनेवाली उॅगलियोसे मनुष्यकी ऑखोके नीचे काली लकीरे खीचकर उसपर मृत्युकी छाया डाल देता है। ज्वर, अतिसार, यक्ष्मा, वायु, सबकी औषध है, मगर यह वह रोग है, जिसकी औषध वैद्योकी किसी पुस्तकमे नही लिखी। परतु क्या समस्त ससारमे प्रत्येक जीव इस प्रेमकी लीलामे भाग नही ले रहा है? भॅवर फूलको प्यार करता है, चकोर चन्द्रमाको प्यार करता है, पतग दीपकको प्यार करता है, मक्खी मधुको प्यार करती है, मृग बीणाको प्यार करता है। इससे क्या यह सिद्ध नही होता कि जगदीश्वरने हरएक हृदयपर प्रेमकी मोहर लगा दी है? सब प्रेमी है। सब प्यार करते है। प्यार ही जीवनका उद्देश है। जो प्यारके नाटकमे सफल-काम नही हो सके, वे बगुला-भगत बनकर दूसरोको उपदेश सुनाना अपना कर्तव्य समझते है। सुखदा, इस उपदेशको हृदयमे स्थान न दे। गृहको त्याग, सम्बन्धियोका ध्यान छोड, और जिस प्रकार नदियॉ फूलोकी क्यारियो और सुन्दर खेतोकी पर्वाह न करके समुद्रमे जाकर अपने आपको मिटा देती है, उसी प्रकार तू भी प्रेम-पथपर पॉव बढ़ा और अपने प्रीतमको ढूॅढ़नेका यत्न कर।

[पवनका प्रवेश]

है, यह कौन? वही। हॉ वही। बिल्कुल वही। मेरा खोया हुआ जीवन, मेरे जीवनकी आशा, मेरी आशाका प्रकाश, मेरे प्रकाशका चन्द्रमा।

पवन—बाल्यावस्थाका बीता हुआ समय आँखोमे फिर रहा ह और जिस तरह रात्रिके समय नीले आकाशपर धीरे धीरे प्रकाशपूर्ण तारे निकल आते है, ठीक उसी प्रकार स्मृतिके पटपर पुरानी घटनाये प्रकट हो रही है। सुन्दरी, मैने तुम्हे कभी देखा है। मै—

सुखदा—नही नही, मै कुछ सुना नही चाहती, सुनाना चाहती हूँ। जिन शब्दोंको दस वर्षसे रोक रोक कर बंद रखती रही हूँ, उनको जिह्वासे निकल जाने दो। आज मेरी प्रसन्नताकी कटोरी पूर्ण रूपसे भर गई है। उसे छलक जाने दो। मेरी आँखे तुम्हे ढूँढती थी, उनको दर्शनामृत पी लेने दो। निराशामे आशाकी बिजली चमकी है, हृदयको मस्त हो लेने दो। प्राणेश्वर! प्राणाधिक! तुम कहाँ थे? तुमने मेरी सुधि क्यो न ली? परन्तु अब इन बातोका समय नही रहा। अब हर्षका, आनन्दका और प्रसन्नतासे पागल हो जानेका समय है।

पवन—सुन्दरी, पगली न बनो और—

सुखदा—पगली न बनूँ? अब भी पगली न बनूँ? विश्वास करो कि मै तुमको न पाकर होशमे रही हूँ, परन्तु अब मेरे मस्तिष्कमे अवश्य विकार हो जायगा।

पवन—राजकुमारी—

सुखदा—नही, अब मै राजकुमारी नही हूँ। अब मै तुम्हारे प्रेमकी, तुम्हारे रूपकी भिखारिनी हूँ! पवन, उस बाल्यावस्थाकी पुरानी घटनाको वास्तविक रूप दो और जिस प्रकार मैने अपना सर्वस्व तुम्हारे लिए समर्पण कर रक्खा है, उसी प्रकार तुम भी मेरे बन जाओ।

पवन—बाल्यावस्थाकी क्रीडाओको स्मरण रखना मूर्खता है।

सुखदा—तो क्या तुमने उस प्रेमके खेलको भुला दिया है?

पवन—हाँ, मेरे शरीरपर और उसके साथ ही हृदयपर किसी अन्यका अधिकार हो चुका है। मेरे और तुम्हारे मध्यमे अग्निका समुद्र गर्ज रहा है। इस लिए मुझे विस्मृतिके जलमे विसर्जन कर दो।

सुखदा—निष्ठुर, अन्यायी, यह तुम कह रहे हो? हाँ, तुम कह सकते हो। ये शब्द तुम्हारे मुखसे निकल सकते है, क्योकि तुम मर्द हो और मर्द भूलना जानते है। परन्तु यह विद्या स्त्रियाँ नही जानती। वे प्रेम करना जानती है, बलिदान करना जानती है, परन्तु किसी घटनाको भूल जाना उनकी प्रकृतिके प्रतिकूल है। वे भूल नही सकती।

पवन—देवी, क्षमा करो। तुम्हारा एक एक शब्द सुनकर मै भूमिमे गडा जा रहा हूँ। यदि तुम्हारे मनसे अपनी स्मृति धोनेके लिए मेरे रुधिरकी आवश्यकता हो तो दे सकता हूँ। परन्तु हृदय दूसरेका हो चुका है। उसपर मेरा कोई अधिकार नही है।

सुखदा—मैने तुम्हारे लिए घर-बारका त्याग किया है।

पवन—मै सब कुछ वापस दिला सकता हूँ।

सुखदा—देखो, मेरा दिल न तोडो। मै दस वर्ष तक तुम्हारे स्वप्न देखती रही हूँ। अब मुझे निराश न करो। तुम्हारे रूपने मुझे प्रेमका रहस्य बताया है। अब तुम्हारे होठ मुझे यह उपदेश देते है कि मुझे भूल जाओ। यह असम्भव है।

पवन—परमात्मा! मुझे बल दो, ताकि मेरे निर्बल पैर इस आँधीका मुकाबला कर सके। नेत्रोको अन्धा कर दो, कानोको बहरा कर दो, हृदयको पत्थर कर दो, ताकि मै इस बावली सुन्दरीकी प्रेमभरी बातोको न सुन सकूँ।

सुखदा—प्राणाधिक! मेरी रक्षा करो!

(चरणोंपर गिरकर अचेत हो जाती है।)

पवन—देवताओ, मेरी इस परीक्षामे सहायता करो। (सुखदासे) उठ देवी, उठ और मुझे अपने भाईके समान बिदा कर।

(सुखदा उठ खडी होती है।)

सुखदा—नही, तुम न जाओ। ससार फिर अन्धकारमय हो जायगा।

पवन—प्यारी बहन !

सुखदा—क्या यह सुपना है ?

पवन—नही ! तुम, मै, यह, वह, सब जाग रहे है। अपने आपको सँभालो। मेरी अवस्थाका ध्यान करो और मुझे जानेकी आज्ञा दो।

सुखदा—आज्ञा दूँ ?

पवन—हॉ, आज्ञा दो।

सुखदा—तो मुझे निराश हो जाना चाहिए ?

पवन—मै विवश हूँ। अपनी भावी स्त्रीके प्रेमकी अमानतमे खयानत नही कर सकता।

सुखदा—मैने अपने आपको तुम्हारे चरणोपर गिराया, मगर तुमने मुझे घृणाकी ठोकर लगाई। मैने स्वप्नमे भी अन्य पुरुषका विचार नही किया, परन्तु तुम्हे स्वप्नमे भी मेरा ध्यान न आया। मैने तुम्हारे प्यारकी अग्निको शान्तिसे सहन किया, परन्तु तुमने अपने लिए नई कलीका चुनाव कर लिया। यही तुम्हारा न्याय है, यही तुम्हारा धर्म है, यही तुम्हारी रीति है। ओ सुन्दर सॉपो ! आकाश तुमपर क्यो छाया करता है ? भूमि तुमको क्यो अपनी छातीपर लादे है ?

पवन—बहन, मैने अपनी ओरसे कोई दोष नही किया, तो भी चूँकि तुम्हारे हृदयको मेरे कारण अनुताप पहुँचा है, इस लिए मै क्षमा-प्रार्थी हूँ।

सुखदा—ठहरो, एक प्रश्नका उत्तर देते जाओ।

पवन—क्या ?

सुखदा—जानते हो महापाप कौन-सा है ?

पवन—ब्राह्मणको सताना।

सुखदा—नही।

पवन—गो-हत्या करना।

सुखदा—नही।

पवन—गुरु-वधका भागी होना।

सुखदा—नही।

पवन—तो ?

सुखदा—किसीका दिल तोडना, प्रेममे द्रोह करना। और यह वह पाप है, जिसका प्रायश्चित्त नही। तुमने मर्दोका द्वार मेरे लिए बद करके मुझको जगतमे अकेला छोड़ दिया है; तुमने मेरा दिल तोड़ा है। इस लिए याद रक्खो, तुम सुखकी नीद नही सो सकते। जिसके कारण तुमने मुझ अबलाको ठुकराया है, वह आरामसे जीवन व्यतीत नही कर सकती। स्त्रीको प्रेमके पश्चात् प्रतिकार प्यारा है। मेरा प्रेम तुम देख चुके, अब क्रोधकी बारी है। (तेजीसे प्रस्थान)

(पवन आश्चर्य चकित होकर खडा रह जाता है।)

चौथा दृश्य

स्थान—महेन्द्रनगरमे अञ्जनाका प्रमोद-वन

समय—दोपहर

[फूलोके झूलेमे राजकुमारी अञ्जना झूल रही है। आकाशपर मेघ छाये हुए हैं और उनमे बिजली खेल रही है। एक ओर सखियॉ खेलनेमे लीन हैं। दूसरी ओर बारहदरी है। पीछे झरनेसे जल गिर रहा है।]

एक सखी—आज इस प्रमोद-वनपर कैसी बहार छाई है। ऐसा

प्रतीत होता है कि फूल अपने सौन्दर्य्य और यौवनको इस भूमिपरसे निछावर कर रहे है ।

दूसरी—और क्यो न करे । देखती नही, आकाशमे बिजली औ मेघका विवाहोत्सव हो रहा है ।

तीसरी—लो, बहन चन्द्रमुखी आ रही है ।

चौथी—क्यो चन्द्रमुखी, देव-मन्दिरमे प्रार्थना कर आई ?

पॉचवी—क्यो बहन, क्या प्रार्थना की ? देवतासे काहेकी याचना की ?

पहली—भगतनजी, बता दो न, तुम्हारा हृदय कौन-सी वस्तु मॉगता है ?

दूसरी—बालक खिलौना मॉगता है, परन्तु युवकके लिए उसमे आकर्षण नही । दरिद्र धन मॉगता है, परन्तु धनीको उसकी कद्र नही । वृद्ध यौवन मॉगता है, युवकको उसकी चाह नही । कुँवारी व मॉंगती है, परन्तु ब्याही स्त्रीकी यह इच्छा नही । इस लिए यह तो—

सब—नन्हॉ-सा बालक मॉगती है ।

पहली सखी—अजी आर्य्याजी, कुछ पति-प्रेमकी व्याख्या तो करो ।

दूसरी—क्यो बहन चन्द्रमुखी, क्या बहनोईजीने बात करनेसे रोक दिया है ? उत्तर तो दो ।

चन्द्रमुखी—उत्तर तो दूँ, मगर मेरी व्याख्याका यहॉ कोई अधिकारी भी हो !

तीसरी—लो । अब तो अधिकारी भी आ गया, अब तो मुँह खोलोगी न ?

[शान्ताका प्रवेश]

दूसरी—हॉ मेरी उदास मैना, अब तो बोलोगी न ?

शान्ता—कौन चन्द्रमुखी ? क्योरी तूने सुसरालमे जाकर प

लिखनेकी प्रतिज्ञा की थी ? झूठी कहींकी ! पतिप्रेममें इतनी बँधी, इतनी बँधी कि दो-चार घड़ियाँ भी नहीं निकाल सकी। एक पत्र भी न डाल सकी। यह विवाहके पश्चात् तेरे प्रेमका प्रथम परिचय है।

चन्द्रमुखी—नहीं, क्रोध न करो। मैं तुम्हें स्मरण तो बराबर करती थी, परन्तु पत्र लिखनेको—

शान्ता—जी नहीं चाहा या समय नहीं मिला ? देखो, इस समय जो बिजलीका हाल है, वही तुम्हारी प्रीतिकी मिसाल है।

(बिजली चमकती है। शान्ता गाती है।)

गीत

नवेलिन, प्रीति तनिक थिर नाहिं।
ज्यों सौदामिनि चमक दिखा निज, छिप जावे घनमाहिं॥
जबलौं संग रहै सखियनके, तब लौं नाता नेह।
प्रेम-डोर फिर टूट जातु है, जब जावे पति-गेह।
भूल जातु है सखी सहेली, पाय सुखद पिय-संग।
रंग बड़ो चढ़ि जात अपूरब, बदल जात सब ढंग॥

एक सखी—देखा, शान्ता कैसी चतुर कवि है।

दूसरी—चन्द्रमुखी, अब यदि तुमने जवाब न दिया तो हम यही समझेंगी कि बहनोईजी बिल्कुल नीरस पुरुष हैं। उन्होंने तुमको कुछ नहीं सिखाया।

चन्द्रमुखी—(हँसकर) शान्ता ! (गाने लगती है।)

गीत

अपूरब बड़ो प्रेमको ढंग।
है यह रहन, एक रस नाहीं, बदलत रहत स्वरंग॥
देखहु यद्यपि है गिरितनया, प्रखर प्रवाहिनि गंग।
वासों नेह करत पर तबलौं, जबलौं वाके संग॥

वाकों छाँड़ि बढ़त ज्यो आगे, गति औरहि ह्वै जाय ।
नाता नेह तोडकै सबसौ, मिलत सिन्धुमहँ धाय ॥
याही दशा होत नारिनकी, पीय संग निज पाय ।
नाता नेह त्याग सखियनसौ, सबको देति भुलाय ।

शान्ता—अच्छा गगाबाईजी, अब आप महात्मा समुद्र-प्रसादके पास जा रही है। गरीब खेतियोका क्या है, उनका भी निर्वाह हो ही जायगा।

चन्द्रमुखी—निर्वाह नही हो सकता। इसी लिए तो वे अपना मुख ऊँचा किये हुए इन्द्रदेवताकी प्रतीक्षा किये हुए है।

शान्ता—हूँ! मै तो विवाह ही न करूँगी।

चन्द्रमुखी—जी हाँ, कुँवारी कन्याये इसी प्रकार लजाया करती है, शरमाया करती है। परन्तु विवाहके समय यह इन्कार धरा ही रह जाता है।

पहली सखी—विवाह न करोगी तो क्या करोगी?

शान्ता—जोगन बनूँगी।

दूसरी—जी हाँ, जोगन बनना इतना सहज होता तो ससारमे चारो ओर जोगने ही जोगने दिखलाई देती।

(अञ्जनाका झूलेसे उतरकर धीरे धीरे सखियोकी ओर आना।)

अञ्जना—अहा! चन्द्रमुखी है। कहो सखी! पति-गृहसे कब लौटी? कुशल तो है? तुम्हारी सहेली शान्ताका भी जल्दी विवाह होनेवाला है। (शान्ताकी ओर देखकर) क्यो? तुम उदासीन क्यो हो गई हो?

शान्ता—इसी लिए कि मेरा विवाह होनेवाला है।

अञ्जना—इससे प्रयोजन?

शान्ता—प्रयोजन यह कि मुझे विवाहकी चाह नही। मेरी तो

यह इच्छा है कि जिस प्रकार मोर बनमे अकेला नाचता है और अपने आपको देखकर अपने मनमे प्रसन्न होता है, उसी प्रकार अकेले जीवन व्यतीत कर दूँ। जिस प्रकार जगलका फूल एकान्तमे खिलता है और अपनी बहार आप ही देख कर सूर्यकी अन्तिम किरणकी भाँति मुरझा जाता है, उसी प्रकार अकेली ही जीवन-यात्रा समाप्त कर दूँ।

अञ्जना—सखी, यह तुम्हारी भूल है। यह विचार बिल्कुल निर्मूल है। देखो स्त्री और पुरुष रथके दो पहिये है। जबतक दोनो इकट्ठे न हो तबतक उन्नतिके मार्गपर चलना कठिन ही नही, असम्भव है। जिस प्रकार ऋतुकी गुलाबसे, मोतीकी आबसे, रेशमकी नरमीसे, सूर्य्यकी गरमीसे, बहार है, उसी प्रकार पुरुष स्त्रीका शृगार है।

शान्ता—परन्तु आश्चर्य है, प्राय स्त्रियाँ विवाहके पश्चात् माता-पिता भाई-बन्धु सबकी अपेक्षा पतिका अधिक समान करती है। मेरी बुद्धि कहती है कि यह ठीक नही।

अञ्जना—(हँसकर) परन्तु मेरी बुद्धि कहती है कि तुम्हारी बुद्धि भूल करती है। कारण यह कि पति ससारमे स्त्रीके लिए ईश्वरके समान है। जो उसे त्यागकर दूसरेको रिझाया चाहती है, वह मूर्ख है। तुम ही कहो, जो पुरुष सोनेके डलोको छोड़कर ककरोमे भटकता फिरे उसके विषयमे तुम्हारी क्या सम्मति है? जो पुरुष प्रकाशमान सूर्य्यकी ओरसे आँखे बद करके दिनके समय दीपकसे काम लेना चाहे, उसके बारेमे तुम्हारा क्या विचार है?

(शान्ता सिर झुका लेती है।)

चन्द्रमुखी—क्यो तोते, अब बोलता क्यो नही?

अञ्जना—(बातका रुख बदलनेके ढगसे) चलो, उस बारहदरीमे चल कर विश्राम करे। (सबका प्रस्थान)

[पवनका एक चित्र हाथमे लिये हुए प्रवेश]

पवन—(चित्रकी ओर देखकर) तू कौन है ? तू किसका चित्र है ? तेरे मुखमण्डलपर किसका रंग झलकता है ? तेरे सुन्दर होठोपर किसकी सुरखी खेलती है ? तूने मेरी प्रसन्नता, निद्रा और शान्ति भग कर दी है। भला मैने तेरा क्या बिगाडा है ?—अँगुलियॉ कहती है यह भोजपत्र है। ऑखे कहती है यह देवी अञ्जनाका चित्र है। हृदय कहता है यह सुन्दरी है। लोग कहते है यह मेरी है। यदि तू मेरी है, तो मुझसे बोलती क्यो नही ? मुझसे प्रश्न कर कि मै विवाहसे पहले ही इस नगरमे क्यो आ गया हूॅ ? आहा ! यह इस प्रकार मौन साधन कर देख रही है कि मेरी व्याकुलतामे कितनी वृद्धि हो सकती है !

[प्रहसितका प्रवेश]

पवन—प्रहसित, कुछ पता लगा ?

प्रह०—नही।

पवन—तो फिर ?

प्रह०—आदित्यपुर लौट चलना चाहिए। ऐसा न हो कि हमे कोई पहिचान ले। यदि ऐसा हुआ तो बहुत बदनामी होगी

पवन—प्रारब्धमे न हो तो गगा-तटसे भी प्यासा ही जाना पडता है। (कुछ देखकर) परन्तु यह क्या ! हम तो अञ्जनाकी वाटिकामे है !

(दीवारपर 'अञ्जना-वाटिका' लिखा दिखाई देता है।)

प्रह०—राजकुमार, यह बहुत बुरी बात है। यदि किसीपर भेद खुल गया तो हमारी बदनामी तो होगी ही, किन्तु राजकुमारी अञ्जनाका सच्चरित्र भी कलङ्कित हो जाना सम्भव है। इस लिए अपने आपपर नहीं तो उस अबलापर दया करो। अपनी भावी भार्य्यापर

कृपा करो, और जितनी जल्दी हो सके इस वाटिकासे बाहर निकल चलो—देखो ये आवाजे कैसी आ रही है! लो वह कोई आ रहा है। अब क्या किया जाय?

पवन—घबराते क्यो हो? आओ, इस वृक्षकी ओटमे हो जायॅ।

(पवन और प्रहसितका वृक्षकी ओटमे हो जाना)

[अञ्जनाका सखियो सहित प्रवेश]

एक सखी—राजकुमारी, बधाई हो।

दूसरी—पवन जैसा सुन्दर तथा बलवान् शूरवीर पति मिलना परम सौभाग्यकी बात है। इस लिए सौ सौ बार बधाई हो।

तीसरी—क्यो राजकुमारी, विवाहके पश्चात् हमे भी याद रखोगी या बिलकुल ही भूल जाओगी?

अञ्जना—कृपा करके इस वार्तालापको समाप्त करो, और मेरा सिर न खाओ। (धीरे धीरे प्रस्थान।)

एक—विवाहका विचार तो पहले विद्युत्प्रभके साथ था; परन्तु चूॅकि ज्योतिषियोने उसको दीर्घायु नही बताया है इस लिए हमारे महाराजने अपनी लाड़ली पुत्रीका विवाह राजकुमार पवनके साथ ठहराया है।

दूसरी—विद्युत्प्रभ बहुत सुन्दर है।

तीसरी—परन्तु पवन बहुत वीर है।

चौथी—इसपर भी मेरी तो यही सम्मति है कि अञ्जनाका विवाह विद्युत्प्रभके साथ होता तो अच्छा था।

पॉचवी—परन्तु क्यो?

शान्ता—इसका कारण मुझसे न सुन लो—

बुरा है वृक्ष कीकरका फला ही बूॅट अच्छा है।
समन्दर विषका हो तो उससे अंमृत-घूॅट अच्छा है।

सब—इस कविताकी बलिहारी।

शान्ता—या इसको यो कह लो।—

ज़ियादे कीमती है एक हीरा लाख पत्थरसे।
है अच्छा घूँट अमृतका, हलाहलके समन्दरसे॥

दूसरी—क्यो बहन, यह कविता कबसे सीखी ? एक एक शब्द तौलकर रक्खा हुआ है। वाहवा ! बलिहारी बलिहारी !

(धीरे धीरे सबका प्रस्थान)

पवन—तुमने कुछ सुना ?

प्रहसित—हॉ किसी युवतीने कहा है कि विष-समन्दरसे अमृतका एक घूँट ही अच्छा है।

पवन—इसका प्रयोजन भी समझते हो ?

प्रह०—आप अब यहॉसे खिसकनेकी कृपा करे। प्रयोजन समझनेकी कोई आवश्यकता नही। (वाटिकामे घूमने लगता है।)

पवन—देख लिया कि वह वास्तवमे सुन्दरी है। जो कुछ चित्रमे है उससे भी सुन्दरी है, परन्तु इसके साथ ही अभिमानकी मात्रा बहुत बढी हुई है। ये शब्द उसीके थे। नही तो सखियॉ सहेलियॉ बलिहारी बलिहारी करके खुशामद न करने लग जाती। इतना गर्व, इतना अभिमान ! इस वाटिकामे नीले आकाशके नीचे हिमालयकी नाई स्थिरभावसे महारानी केतुमतीका पुत्र पवन प्रतिज्ञा करता है कि इस अभिमानकी मूर्तिका विवाहके पश्चात् बारह वर्ष तक न मुँह देखेगा, न उससे बात ही करेगा। यह प्रतिज्ञा एक क्षत्रियका व्रत है, पत्थरकी लकीर है। प्रहसित !

प्रह०—राजकुमार।

पवन—चलो चले, यहॉ आना अच्छा न हुआ।

(दोनोका प्रस्थान)

———

पॉचवॉ दृश्य

स्थान—रास्ता

समय—प्रातःकाल

(विद्युत्प्रभ और उसके मित्र बातचीत कर रहे हैं।)

विद्युत्०—दोनो बार हार हुई।

एक मित्र—हॉ, दोनो बार हार हुई।

दूसरा—और दोनो बार पवन ही इसका कारण हुआ।

तीसरा—यह आश्चर्यका विषय है।

चौथा—आश्चर्य्यका नही, यह उसकी शरारत है।

पॉचवॉ—अब आपका क्या विचार है ?

पहला—और किसी सुन्दरी युवतीसे ब्याह कर लेगे। भारतमे अञ्जना और सुखदाके सिवाय और रमणियॉ भी है और उनसे अधिक सुन्दरी, अधिक सुशीला।

दूसरा—यह तो सत्य है। फिर भी राजकुमारका जी तो लेना उचित है कि उनकी अब सम्मति क्या स्थिर हुई है ?

विद्युत्०—क्या पूछते हो ?

दूसरा—यह कि अब आपका विचार क्या है ?

विद्युत्०—आप सोचो कि जो अपना सर्वस्व हार चुका हो, उस जुवारीका क्या विचार हो सकता है ? जिसको युद्ध-क्षेत्रमे अपमानित किया गया हो उस योद्धाका क्या विचार हो सकता है ? जिसके मुँहसे शिकार छीन लिया गया हो, उस सिंहका क्या विचार हो सकता है ? मै अपने जीवनका एक एक क्षण इस घड़ीसे प्रतिकारके लिए

समर्पण करता हूँ। घरका सुख, धनका जीवन, राज्यका आनन्द, सबका परित्याग करता हूँ और—

[एकाएक सुखदाका प्रवेश]

सुखदा—ठहरो, मै तुमसे कुछ कहा चाहती हूँ।

विद्युत्०—उन्मादिनी, तू कौन है?

सुखदा—एक परित्यक्ता स्त्री।

विद्युत्०—मुझसे क्या चाहती है?

सुखदा—यह अकेलेमे कहूँगी।

विद्युत्०—(मित्रोसे) तुम जरा परे चले जाओ।

(मित्रोका प्रस्थान)

सुखदा—क्या तुम राजकुमार विद्युत्प्रभ हो?

विद्युत्०—हाँ, और तुम?

सुखदा—अमृतपुरकी राजकन्या सुखदा।

विद्युत्०—सुखदा?

सुखदा—हाँ हाँ सुखदा।

विद्युत्०—मेरा अपमान करनेवाली सुखदा, मुझे तिरस्कारकी ठोकर लगानेवाली सुखदा, अपने माता-पिताकी इच्छाका उल्लघन करनेवाली सुखदा, मेरे सम्मुख क्यो आई हो? तुम्हारे साथ बातचीत करनेमे भी लज्जा आती है।

सुखदा—मै तुम्हारे निकट सहायताके लिए आई हूँ।

विद्युत्०—सहायताके लिए? मै तुम्हारी सहायता नही कर सकता।

सुखदा—मै सहायता लेने नही, देने आई हूँ।

विद्युत०—मतलब?

सुखदा—विवाहके सम्बन्धमे तुम्हारा दो बार तिरस्कार हुआ है ?

विद्युत्०—हॉ।

सुखदा—और वह पवनके कारण हुआ है ?

विद्युत्०—हॉ ।

सुखदा—तुम प्रतिकार चाहते हो ?

विद्युत्०—हॉ।

सुखदा—प्रतिकारके लिए सब कुछ करनेको उद्यत हो ?

विद्युत्०—हॉ हॉ ।

सुखदा—तो मै तुम्हारी सहायता करूॅगी। तुम परित्यक्त पुरुष हो, मै परित्यक्ता स्त्री हूॅ। आओ, दोनो मिलकर काम करे। तुम अग्नि हो, मै तुम्हारी ज्वाला बनूॅगी। तुम भयानक समन्दर हो, मै तुम्हारी लहर बनूॅगी। तुम विषधर सर्प हो, मै तुम्हारा दॉत बनूॅगी। तुम्हारा जो तिरस्कार कर चुकी हूॅ, उसका बदला चुकाऊॅगी और पवन और अञ्जनाका जीवन अन्धकारमय बना दूॅगी !

विद्युत्०—तुम क्या करोगी ?

सुखदा—जो कुछ तुम चाहोगे मै वही करूॅगी। मनोरथ-सिद्धिके लिए ससारमे ऐसा कोई कर्म नही जिसका करना मेरे हाथ अस्वीकार करे।

विद्युत्०—यदि इसके लिए असत्य भाषण करना पड़े तो ?

सुखदा—करूॅगी ।

विद्युत्०—चोरीकी आवश्यकता हो तो ?

सुखदा—परहेज न होगा।

विद्युत्०—हत्या करनेसे काम चलता हो तो ?

सुखदा—सो भी कर डालूॅगी

विद्युत्०—तब मुझे सफल-काम होनेसे रोकनेवाली शक्ति उत्पन्न ही नही हुई। याद रखो, विजय यत्नकी छाया है और पराजय निर्बलताका परिणाम है। जो साहसी है, जो यत्न करते है, जो परिश्रममे निरन्तर लीन रहते है, जो साधारण बातोपर हृदय कमजोर नहीं करते, विजय उनको जय-माला पहिनाती है, और यश उनका कीर्तन करता है। परन्तु जिनका जी छोटा है, जीमे यथेष्ट बल नही, कठिन कामोमे जो हिम्मत हार देते है, ससारके सग्राममे वे निर्जीव लोथकी नाई मसले जाते है, और लोग उनके शरीरोको पद-दलित करते हुए ऊपरसे गुजर जाते है।

सुखदा—तुम्हारे शब्द भयजनक है।

विद्युत्०—साहससे काम लो तो दुनियामे तुम्हे किसीका भी भय न रहेगा।

सुखदा—तो हमे अपना काम कहाँसे आरम्भ करना चाहिए, पहले इसका निर्णय हो जाना ठीक होगा।

विद्युत्०—मेरे विचारमे अञ्जनाका विवाह पवनसे होनेमे थोडा समय ही बाकी है।

सुखदा—हाँ।

विद्युत्०—तो हमारे पाखण्ड-काण्डका प्रारम्भिक पर्दा आदित्यपुरके राजमहलमे उठना चाहिए।

सुखदा—अर्थात् हमारा कोई भेदीया वहाँ रहे।

विद्युत्०—नही, भेदीयेसे काम न चलेगा, वहाँ स्वय तुम्हारी उपस्थितिकी आवश्यकता है। भेस बदल डालो, नाम कोई और रख लो, और आज ही आदित्यपुरको प्रस्थान कर दो।

सुखदा—बहुत अच्छा। मै वहाँ दासी बनकर रह जाऊँगी ओर ललिता कहकर अपना परिचय दूँगी।

विद्युत्—बस, अब तुम राजकन्या नही, दासी हो, सुखदा नही, ललिता हो, समझ गई ?

सुखदा—खूब अच्छी तरह ।

विद्युत०—सुखदा !

सुखदा—वह मर चुकी है और उसकी अस्थियोसे एक दासीका जन्म हुआ है । उसे सम्बोधन करना है, तो ललिता कह कर करो । अब वह राजकुमारी नही दासी है, जिसके सम्मुख जीवन भरका काम पडा है, और वह उसे आरम्भ करनेको है ।

विद्युत्प्रभ—शाबाश, ललिता, शाबाश । मैने तुम्हारी परीक्षा करनेके लिए ही यह कहा था । इसमे तुम उत्तीर्ण हुई ।

सुखदा—तो मै अब रत्नपुरको जाऊँ । मेरा जीवन प्रतिकारके लिए समर्पित हो चुका है, उसे अन्य बातोमे नष्ट नही कर सकती । तुम मुझे कहॉ और कब मिलोगे ?

विद्युत्०—यह मै आप देख लूँगा । पहले तुम वही अपने प्रति विश्वासका भाव उत्पन्न करो ।

(सुखदाका प्रस्थान)

विद्युत्०—अद्भुत स्त्री है, कैसी बेधड़क, मुहफट और उन्मादिनी है । कल जिसे प्रेम करती थी, जिसके नामकी माला जपती थी, जिसके चित्रको हृदयपर अङ्कित किये हुए थी, आज क्रोधमे उससे ही बदला लेनेकी इच्छासे सब कुछ करनेको उद्यत है ! अन्धी उन्मादिनी, पगली !

[मित्रोका प्रवेश]

एक—राजकुमार, यह कौन थी ?

विद्युत्०—कड़ँकती हुई बिजली, चमकती हुई तलवार, धधकती हुई अग्नि ।

दूसरा—हम कुछ नही समझे ।

विद्युत्०—मेरे रोगकी ओषधि, मेरे घावका मरहम, मेरे हृदयकी शान्ति ।

तीसरा—अब भी अस्पष्ट है ।

विद्युत्०—अमृतपुरकी राजकन्या सुखदा ।

चौथा—सुखदा ?

पाँचवाँ—क्या सुखदा ?

पहला—कौन-सी सुखदा ?

दूसरा—जिसने आपसे विवाह करना अस्वीकार किया था, वह तो नहीं ?

तीसरा—वह नहीं हो सकती ।

चौथा—हाँ, यह तो असम्भव है। वह नही हो सकती ।

पाँचवाँ—उसके साथ तो सुना है पवनका विवाह हो गया है ।

विद्युत्०—नहीं, वही थी । पवनने इसका परित्याग करके महेन्द्रपुरकी राजकुमारी अञ्जनाके साथ विवाह करनेका निश्चय किया है।

पहला—ठीक है, मै समझ गया ।

दूसरा—मेरा पहले ही यह विचार था कि यह वही है ।

तीसरा—निर्लज्जा अब फिर आपसे विवाह करना चाहती है ।

चौथा—जिसे पहले अस्वीकार कर चुकी है।

पाँचवाँ—यह भी हो सकता है ?

पहला—नही नही, यह असम्भव है ।

दूसरा—राजकुमार उसकी प्रार्थना कभी स्वीकार न करेगे ।

विद्युत्०—तुम सब भूल रहे हो। वह पवनसे तिरस्कारका बदला लेनेपर उतारू हुई है और उसके रुधिरकी प्यासी हो रही है। अब

मुझे उसपर शोक और क्रोध नहीं रहा, क्यों कि हम दोनों एक ही पथके पथिक—एक ही व्रतके व्रती हैं। वह तरवार है, मैं उसे सान-पर चढाऊँगा, वह अग्नि है, मैं उसे भडकाऊँगा। वह सर्पिनी है, मैं उसे क्रोधमें लाऊँगा और जिन्होंने मेरा तिरस्कार किया है उनसे बदला लेकर अन्तमें जिस प्रकार समझदार पुरुष काँटेसे काँटा निकाल कर काँटेको अग्निमें फेंक देता है, उसी प्रकार इसे भी दण्ड दिये बिना न रहूँगा। (वेगसे प्रस्थान)

(मित्रोंका आश्चर्यमें खडे रह जाना)

छट्ठा दृश्य

स्थान—राजा महेन्द्ररायका अन्तःपुर

समय—दोपहर

(अञ्जना और उसकी सखियाँ उदासीन भावसे बैठी हैं।
सामने गानेवालियाँ गा रही हैं।)

खमाच।

आज हुआ घर बार पराया।
माता पिता बन्धु सब छूटे, छूटी ममता माया॥
अपने घरका आँगन छूटा, छुटी स्नेहकी छाया॥
छूटीं सखियाँ जिनसे मिलकर, बरसों समय बिताया॥
अपनी मरजी सोना छूटा, अपनी मरजी खाना।
जो मन चाहे करना छूटा, छुटी प्रेमकी माया॥
सास ससुरकी जेठ पतीकी, आज्ञा पालन करना।
वही हुआ तेरा घर बेटी, यह घर होत पराया॥
सँभल सँभल पग धरना बेटी, पर-घर अब है रहना।
सास ननद तानें मारेंगी, यदि कछु अवगुण पाया॥
आज हुआ घर-बार पराया॥

अञ्जना—सच है, आज सब कुछ छूट गया। माता पिता भ्राता बन्धु सखियॉ सबको छोडकर आज नये स्थानको जाना होगा। यह जन्म-स्थान जिसके एक एक परमाणुसे प्रेमकी सुगन्धि आ रही है, यह महल जिसकी एक एक ईट मुझे सखीके समान प्यारी है, यह भूमि जिसका एक एक चप्पा मेरा लाखो बारका देखा हुआ है, यह नगर जिसका एक एक महल मेरे अपने घरके सदृश है, आज इन सबको छोडना होगा। लोग कहते है, यह शुभ मुहूर्त्त है, परन्तु फिर भी मेरी ऑख रो रही है, मेरा हृदय शोकमे मग्न है। (ऑसू पोछती है।)

एक सखी—राजकुमारी, यह अनुचित है।

दूसरी—ऐसे शुभ अवसरपर रोती क्यो हो राजकुमारी ?

तीसरी—दूसरोको कई बार उपदेश देती रही हो कि विवाहोत्सवपर रोना बेहूदा बात है, अब स्वय रो रही हो !

अञ्जना—वृक्षका पत्ता तोडो, पानी जरूर निकलेगा। मिट्टीका ढेला तोडो, आवाज जरूर निकलेगी। पक्षीका बच्चा ले लो, पक्षी जरूर चीखेगा। परन्तु यह सब क्यो ? वृक्ष रोता है, मिट्टीका ढेला दुहाई देता है, पक्षी हृदयका शोक प्रकट करता है। फिर विचार करो कि यदि प्रकृतिका नियम ही यह है, तो कैसे हो सकता है कि मनुष्यका बच्चा अपने माता पितासे सर्वदाके लिए बिछुड़नेको हो और उसकी ऑखसे जलके दो चार बिन्दु न निकले ? गला शोकसे न भर आवे ?

सखी—परन्तु क्या तुम माता पितासे सदाके लिए बिछुड रही हो ?

अञ्जना—हॉ सदाके लिए।

तीसरी—सदाके लिए ?

चौथी—यह तो असम्भव है।

पॉचवी—तुम कई बार यहॉ आओगी।

अञ्जना—यह ठीक है कि मै कई बार यहाँ आऊँगी। परन्तु मेरा यह आना दूसरे प्रकारका होगा। जिस ढगसे अब यहाँ रह रही हूँ, जिस अधिकारसे अब जिस वस्तुकी आवश्यता होती है, माँग लेती हूँ, जो चाहती हूँ करती हूँ, जिस प्रकार चाहती हूँ अपना सुभीता देख लेती हूँ, जिस तरह अब प्रत्येक वस्तुपर अपना स्वत्व समझती हूँ, कहती हूँ, बताती हूँ। क्या यह अवस्था फिर भी इसी प्रकारकी रहेगी ? नही। दूसरी बार आऊँगी, तो अपने घरके सदृश नही, परन्तु अतिथिके समान आऊँगी। माता-पिताका मन बदले या न बदले, परन्तु मेरे मनमे, वचनमे, कर्ममे जो अब स्वत्व जतानेका स्वभाव है, वह नही रहेगा। अब दूसरी बार आऊँगी तो पराई बनकर आऊँगी। इसीसे कहा है कि माता-पिता सर्वदाके लिए छूटे। यह जन्म-भूमि सर्वदाके लिए छूटी। यह नगर पराया हुआ, मै पराई बनी।

एक सखी—कैसे हृदय-विदारक शब्द है।

दूसरी—परन्तु कितने सत्य और सरल है।

तीसरी—राजकुमारी साक्षात् लक्ष्मी है।

चौथी—वर भी तेजस्वी वीर है।

पाँचवी—परमात्मा इस जोडेको सदा प्रसन्न रखे।

सब—तथास्तु।

[वसन्तमालाका रोते रोते प्रवेश]

अञ्जना—वसन्तमाला !

एक सखी—वह नही बोलेगी।

दूसरी—रूठी हुई है।

तीसरी—रो रही है।

चौथी—नही, धूआँ लग रहा है।

पाँचवीं—उत्तर तो दो।

अञ्जना—वसन्तमाला !

वसन्तमाला—(रोते रोते) हाँ राजकुमारी ।

अञ्जना—रोती क्यों हो ?

एक सखी—विवाह न होनेके कारण ।

दूसरी—हो जायगा ।

तीसरी—धीरज रक्खो ।

चौथी—बस एक मासके अन्दर अन्दर ।

पाँचवी—अवश्य हो जायगा ।

अञ्जना—वसन्तमाला, उत्तर दो ।

वसन्तमाला—जबसे तुम्हारे जानेका सुना है, मेरे दिलमे न जाने क्या हो रहा है ।

एक सखी—कुछ गडबड है ।

दूसरी—पीडा होती है ।

तीसरी—सौंफका अर्क पीओ ।

चौथी—नही, गाजरका हलवा खाओ ।

पाँचवी—नही, अजवायन फाँको ।

अञ्जना—क्या बक बक लगा रक्खी है । बात भी करने दोगी या नही ? जाओ, मै एकान्तमे इससे बात करूँगी ।

दूसरी—सचमुच ?

तीसरी—समझ लो, चली गई ।

चौथी—और एकान्त हो गया ।

पाँचवी—हम कुछ न सुनेगी, जो कहना है कह लो ।

अञ्जना—(हँसकर) बहुत दिक न करो• मुझे, जरा परे चली जाओ ।

(सखियोंका प्रस्थान)

वसन्तमाला—आपने मुझ अनाथको प्यार-दुलारसे पाला है, हर समय मेरा दिल रक्खा है, बहनोंके समान मुझसे सलूक किया है, मैं आपके बिना और किसीको नहीं जानती। मैं यहाँ नहीं रहूँगी, मुझे अपने साथ ले चलो।

अञ्जना—तुम्हे यहाँ किसी प्रकारका कष्ट न होगा, इस बातका विश्वास रक्खो।

वसन्तमाला—परन्तु आपके बिना यहाँ मेरा दिल नहीं लगेगा।

अञ्जना—धैर्य्य धरो।

वसन्तमाला—मैं हाथ जोडती हूँ, अनुरोध करती हूँ, आपसे भिक्षा माँगती हूँ। कृपा करके मुझे यहाँ न छोड जाओ, अपने साथ ले चलो।

अञ्जना—यह कैसे हो सकता है ?

[महारानी हृदयसुन्दरीका प्रवेश]

महारानी—अञ्जना !

अञ्जना—हाँ माताजी।

महारानी—यह पगली कलसे बराबर रो रही है। तुम्हारे पीछे और भी तग करेगी।

अञ्जना—मैं भी इसे समझा रही थी।

महारानी—नहीं, इसे अपने साथ ही ले जाओ।

वसन्तमाला—बस, अब तो महारानीजीने भी आज्ञा दे दी है। असबाब बाँध लूँ ?

महारानी—हाँ जाओ, तयारी करो।

(वसन्तमालाका प्रस्थान)

[महाराजा महेन्द्रराय, राजकुमार पवन और
महाराजा प्रह्लाद विद्याधरका प्रवेश।]

महेन्द्रराय—बेटी, ये तुम्हारे श्वसुर हैं, प्रणाम करो।

अञ्जना—(हाथ जोड कर विनीत स्वरसे) प्रणाम करती हूँ पिताजी !

विद्याधर—सौभाग्यवती भव, आयुष्मती भव ।

महेन्द्रराय—महाराज, इस समय मेरा हृदय उमड रहा है, इसीसे कुछ कह नही पाता । केवल इतना ही कहता हूँ कि अञ्जना बालिका है । व्यवहारसे अपरिचित, और ससार-मर्यादासे सर्वथा अनभिज्ञ है । इसपर कृपादृष्टि रखिएगा । और यदि कोई अपराध इससे हो जाय, तो इसे अबोध बालिका जानकर क्षमा कर दीजिएगा ।

विद्याधर—राजन्, मै अञ्जनाके गुणोपर चिरकालसे मुग्ध हूँ । यह बालिका नही, साक्षात् लक्ष्मी है, देवी है, गुणोकी खान है। इस हीरेकी कनीको पाकर मै आज फूला नही समाता। यह सुमगला भाग्यवती जहाँ जायगी, वहीपर यश कीर्ति और आनन्द साथ साथ जायगा । पवन मेरा एक ही पुत्र है । मै इसे उससे भी अधिक प्यार करूँगा । पुत्रीके समान चाहूँगा ।

महेन्द्रराय—पुत्री, तूने मेरी आज्ञाका आज तक पालन किया है । इस समय भी दो चार बाते ध्यानसे सुन और उनको गाँठमे बाँध ले। आज तक तू हमारी थी, हमारा तुझपर अधिकार था। परन्तु अब ये (प्रह्लाद विद्याधर) तुम्हारे पिता है और यह कुमार (पवन) तुम्हारा पति है । इन्हीका तुझपर अधिकार है—इन्हीका स्वत्व है । यह (पवन) ही तुम्हारा इहलोक और यही परलोक है । यही तुम्हारा धर्म और यही तुम्हारा सुख है । इनका चित्र हृदयपर अङ्कित करो और अपने जीवनका एक एक पल इनके और इनके विचारके प्रति समर्पण कर दो । भगवान् तुम्हारा कल्याण करे और तुम दोनो धर्म यश और धन सम्पत्तिमे खेलते हुए और ससारके लिए आदर्श बनते हुए जीवन-यात्राको पूर्ण करनेका प्रयत्न करो । मेरा आशीर्वाद है ।

हृदयसुन्दरी—पुत्री, पिताके उपदेशके एक एक अक्षरको हृदयमे थान देना। आजसे सास-ससुरको माता-पिताके समान समझना, उनकी आज्ञाका पालन करना, और पतिका देवताके समान पूजन करना ही अब तुम्हारा धर्म है।

विद्याधर—पुत्र पवन, पिताका धर्म अब मुझको प्रेरणा करता है कि मै तुमको एक आध उपदेशकी बात कहूँ। तुम स्वयं समझदार हो। आज तक स्वाधीन, चिन्तारहित और ससारके व्यवहारसे पृथक् थे। अब यह स्वाधीनता नही रही। समाजने तुम्हारे कधोको यथेष्ट बलवान् देखकर उनपर एक सजीव व्यक्तिका बोझा रख दिया है और तुमने पवित्र मन्त्रोद्वारा उस बोझेको उठाना स्वीकार कर लिया है। यह साधारण बोझा नही, जीवन-भरके लिए एक उत्तरदायित्व है, जिसे सफलतासे निभाना ही तुम्हारा उद्देश्य है। पहले तुम एक थे, अब दो हो। पहले तुम्हे केवल अपनी चिन्ता थी, अब तुम एक अन्य जीवके सुख-दु ख, उन्नति अवनति और यश अपयशके लिए भी उत्तरदाता हो। ब्रह्मचर्य-का समय बीत चुका। अब तुम्हे एक मित्र दिया गया है। जो तुम्हारे एकान्तको प्रकाशित, तुम्हारे हृदयको प्रफुल्लित, और तुम्हारे जीवनको आनन्दमय बना देगा। उसके द्वारा तुम्हारे सुखोमे वृद्धि और तुम्हारे दु.खोमे कमी होगी। तुम उसका और वह तुम्हारा सुभीता देखेगा। यही गार्हस्थ्य है, यही विवाह है, यही ससार है। यही प्रेमका पहला अक्षर है, यही परोपकारका पहला पाठ है, यही जीवन-यात्राकी पहली मजिल है। इसीकी देवताओने महिमा वर्णन की है। इसीको शास्त्रोने चारों आश्रमोमे उच्च पदवी दी है।

दूसरा अङ्क

पहला दृश्य

स्थान—रामनाथसे कुछ दूर सुन्दरा नदी

समय—रात्रि ।

[सेनाका पडाव । थोडे थोडे अन्तरपर आग जल रही है, और सैनिक बैठे ताप रहे है । कुछ दूरीपर राजकुमार पवनका कैम्प है, जिसमे पवन और प्रहसित बाते कर रहे हैं ।]

पवन—दुर्मतिनगरके अधिपति वरुणने यह छेडछाड आरम्भ करके अपनी अदूरदर्शिताका परिचय दिया है ।

प्रह०—इसमे क्या सन्देह है । अकारण युद्ध करना, सहस्रो पुरुषोके रक्त-पातका कारण बनना, बालकोको अनाथ, स्त्रियोको विधवा और निर्दोष प्राणियोकी हत्या कर देना क्या ये ऐसी बाते है, जिनको प्रकृतिका नियम और न्याय चुपचाप सह सकता है ?

पवन—कदापि नही ।

प्रहसित—महाराजको जो पत्र आया है, उसमे यह भी लिखा है कि महाराज रावणने वरुणसे कहा कि मै युद्ध करनेके विरुद्ध हूँ । इस लिए यदि आप चाहे, तो इस विषयको एक न्याय-सभाके सम्मुख रख दिया जाय । परन्तु वरुणने बलके गर्व्वमे अन्धे होकर इस उचित प्रार्थनाको भी अस्वीकार किया और उत्तर दिया कि वीरोके झगडे तलवारसे तय हुआ करते है । उसीसे महाराज रावणको विवश होकर युद्धका प्रबन्ध करना पडा है ।

पवन—हॉ, यह सब मै पढ़ चुका हूँ ।

प्रहसित—इतना घमण्ड !

पवन—मुझे जहाँ उसके अन्याय आचरणपर खेद है, वहाँ इस बातकी प्रसन्नता भी है कि मुझे रणभूमिमे जाने और अपनी वीरता दिखानेका अवसर प्राप्त हुआ है।

प्रहसित—यह आपने क्षत्रियोके योग्य वचन कहे है। मुझे पूर्ण आशा है कि महाराज रावण आपसे बहुत प्रसन्न होगे।

(किसी पक्षीकी हृदय-वेधक आवाज सुनाई देती है।)

पवन—यह किसका स्वर है प्रहसित ?

प्रहसित—यह दीप नदीके समीप है। इस लिए उसके दोनो तीरोपर चकवा चकवी बोल रहे है।

पवन—परन्तु स्वरसे ऐसा प्रतीत होता है, मानो वे रो-रोकर एक दूसरेको बुला रहे है।

प्रहसित—यही बात तो है राजकुमार ! प्रकृतिने कुछ ऐसा नियम बाँध दिया है कि चकवा-चकवी दिनभर तो एक साथ रहते है, परन्तु रात्रिको उनका मिलाप नही हो सकता। नदीके एक तीरपर चकवी और दूसरेपर चकवा होता है। इधरसे चकवी बोलती है उधरसे चकवा उत्तर देता है, और दोनो उड़कर मिलना चाहते है। परन्तु जब चकवा इधर आता है, तो चकवी उधर पहुँच जाती है। इसी प्रकार रोते रोते सारी रात कट जाती है।

पवन—अद्भुत बात है।

प्रहसित—वास्तवमे अद्भुत है। परन्तु प्रकृतिका नियम है और इसे ससार-भरकी शक्तियाँ एकत्र होकर भी तोड़ना चाहे, तो सफलता नही हो सकती।

पवन—और यह रुदन केवल रात्रिके वियोगके कारण है।

प्रहसित—हॉ, केवल रात्रिके वियोगके कारण।

पवन—(स्वगत) ओ निर्दयी पवन ! प्रकृति माताके इन बेसमझ पक्षियोसे शिक्षा ले, और उस अबलाका ध्यान कर, जो तेरे वियोगमे दिनरात रो-रोकर अपना यौवन बिता रही है। ये पक्षी एक एक रात्रिके वियोगमे इतने व्याकुल हो जाते है तो अञ्जनाकी दशा क्या होगी जो कई वर्षोंसे विरह-अग्निमे जल रही है ?

प्रहसित—यह आप क्या कह रहे है ?

पवन—अपने आपको धिक्कार रहा हूँ। अपने आत्माको फटकार रहा हूँ।

प्रहसित—क्यो ?

पवन—तुम्हे स्मरण है कि विवाहसे पहले अञ्जनाका चित्र देख मै अधीर हो उठा था, और तुम्हे साथ लेकर महेन्द्रपुर चला गया था।

प्रह०—और वहॉ घूमते घूमते हम भूलसे देवी अञ्जनाकी वाटिकामे चले गये थे।

पवन—हॉ, और वृक्षकी ओटसे रमणियोकी बाते सुनते रहे थे।

प्रह०—यह घटना मुझे भली भॉति याद है।

पवन—परन्तु यह तो याद न होगा कि वहॉ अञ्जनाके मुखसे अपने विषयमे अपमानसूचक शब्द सुनकर मैने एक भीषण प्रतिज्ञा की थी।

प्रहसित—भीषण प्रतिज्ञा ?

पवन—हॉ हॉ भीषण प्रतिज्ञा।

प्रहसित—क्या ?

पवन—यह कि विवाहके पश्चात् बारह वर्ष तक उसका न मुख देखूँगा, न उससे बात करूँगा।

प्रहसित—राजकुमार, यह आपने जो कुछ किया, बुरा किया। मैंने उस समय भी पूछा था और अब भी पूछता हूँ कि आपके पास इसके लिए क्या प्रमाण है कि वे शब्द अंजनादेवीके मुखसे निकले थे?

पवन—मुझे सन्देह था।

प्रह०—सन्देह था तो विवाहके पश्चात् दूर कर लेते। परन्तु शोक है कि आपने यह भी न किया और उस अबलाको घोर विपत्तिमें डाल रक्खा। विचार तो कीजिए कि जो अबला माता-पितासे बिछुडकर गृहका त्याग करके केवल आपके प्यारसे आदित्यपुरको अपना गृह बनाये हुए है, आपने उसकी सुधि इस प्रकार भुला दी जिस प्रकार बालक खिलौना तोड़कर उसे भूल जाता है। तो उसकी क्या गति होगी?

पवन—मित्र, मेरा आत्मा मुझको फटकार रहा है। अधिक शरमिन्दा न करो—बताओ मैं क्या करूँ?

प्रह०—इसी स्थानसे वापस जाओ। उसके आगे गिड़गिड़ाओ और अपना वस्त्र फैलाकर उससे क्षमाकी भिक्षा माँगो।

पवन—यह असम्भव है। क्योंकि मेरी प्रतिज्ञा भंग नहीं हो सकती।

प्रह०—आपका यह विचार भी निर्मूल है, क्योंकि प्रतिज्ञाके बारह वर्ष बीत चुके हैं।

पवन—बीत चुके?

प्रह०—हाँ बीत चुके। अब आप उससे भेंट कर सकते हैं।

पवन—तो तुम्हारी रायमें मुझे यहाँसे वापस चला जाना चाहिए?

प्रह०—हॉ हॉ।

पवन—परन्तु माता-पिता क्या यह न समझ लेगे कि मै युद्ध क्षेत्रसे भयभीत होकर लौट आया हूॅ।

प्रहसित—उनसे भेट करनेकी आवश्यकता ही क्या है। सीधे अजनाके महलमे जाइए, और दो तीन दिन रहकर आ जाइए।

पवन—और तुम ?

प्रहसित—मै सेनासमेत रामनाथमे आपकी प्रतीक्षा करूॅगा।

पवन—अच्छी बात है। तो मै अभी जाऊॅ ?

प्रह०—हॉ अभी। अश्वपाल !

[अश्वपालका प्रवेश]

प्रह०—जाओ, जाकर राजकुमारका घोडा तैय्यार करो। वे आदित्यपुर जायॅगे।

(अश्वपालका सर झुकाकर प्रस्थान)

प्रह०—(हॅसकर) राजकुमार, एक बातका ध्यान रखना होगा।

पवन—वह किस बातका ?

प्रह०—आते समय अपनी ॲगूठी देवी अजनाको देते आना।

पवन०—क्यो ?

प्रह०—वह फिर बताऊॅगा।

पवन—मै समझ गया कि तुम्हारा इशारा किस ओर है।

[अश्वपालका प्रवेश]

अश्वपाल—श्रीमान्, घोड़ा तयार है।

पवन—चलो, (प्रहसितसे) अब तुम विश्राम करो।

प्रह०—नहीं, मै कुछ दूर तक आपके साथ चलूॅगा।

(सबका प्रस्थान)

[विद्युत्प्रभका ओटसे निकलना]

विद्युत्प्रभ—जो अँगूठी अञ्जनाको दी जावेगी, उसका उड़ाना आवश्यक है, नही तो बना बनाया खेल बिगड जानेका भय है। चल विद्युत्प्रभ, चल और ललिताको उसके कर्तव्यकी सूचना दे।

(ठहरकर और अपनी छातीपर हाथ मारकर)

निष्ठुर, अन्यायी, तू किधर जा रहा है ? तू क्या कर रहा है ? बलिदानके बकरे, ऑखे खोल और इस पापाचरणका त्याग कर। ससार दिन-रात ऊँचा प्रयत्न करता है, परन्तु तू प्रतिक्षण पापकी खोहमे उतरता जाता है। नही, मगर नही। मेरा तिरस्कार हुआ है, मेरा अपमान हुआ है। मै प्रतिकारके अवसरको नहीं छोड सकता। (प्रस्थान)

दूसरा दृश्य

स्थान—आदित्यपुरमे अञ्जनाका महल।

समय—सन्ध्यासे कुछ पहले।

[अञ्जना स्थिर भावसे आकाशकी ओर देख रही है।
वसन्तमाला परे बैठी है। ललिता प्रवेश करती है।]

ललिता—राजकुमारी, क्या विचार कर रही हो ? आकाशकी ओर क्या निहार रही हो ?

अञ्जना—देख रही हूँ कि विधाताने मेरे प्रारब्धके आकाशपर अपने निर्दय हाथोसे कितने दु ख लिखे है। उनमेसे कितने भोग चुकी हूँ और कितने भोगने अभी बाकी है। ललिता, क्या ये दु खकी घड़ियॉ कभी समाप्त न होगी ?

ललिता—दुःखकी घड़ियॉ ?

अञ्जना—हाँ, दु:खकी घड़ियाँ।

ललिता—आपको क्या दु.ख है ?

अञ्जना—यह क्यो नहीं पूछतीं कि मुझे क्या सुख है ?

ललिता—क्या आपके पास उत्तम उत्तम आभूषण नही ?

अञ्जना—है।

ललिता—अनमोल वस्त्र ?

अञ्जना—है।

ललिता—सुन्दर भवन ?

अञ्जना—है।

ललिता—सेवा करनेको दास-दासियाँ ?

अञ्जना—है।

ललिता—धन-सम्पत्ति, ऐश्वर्य्य, नीरोगता और यौवनके होते हुए भी इस दु.खका क्या कारण हो सकता है ?

अञ्जना—ललिता, सचमुच यौवन अवस्थामे, स्वादिष्ट भोजन करके उत्तम उत्तम वस्त्र पहनकर, सिरसे पैरो तक जवाहरात और हीरोसे सुसज्जित होकर, चॉदीके महलमे सोनेके पलगपर बैठकर भी वह स्त्री प्रसन्न नही हो सकती, जिसके हृदयमे पति-वियोगका अँधेरा छाया हुआ है। जिस पुरुषको नेत्र छीनकर मनोहर दृश्यके मध्यमे बैठा दिया जाय, उसको उससे क्या लाभ हो सकता है ? जिस पुरुषको सुननेकी शक्ति न रहते हुए तान-भरे गीतोका सितार सौंप दिया जाय, उससे उसको क्या लाभ हो सकता है ? धन-सम्पत्ति-ऐश्वर्य श्मशानके दीपक है, यदि स्त्रीपर उसके पतिकी प्रेमदृष्टि न हो तो।

ललिता—हा दैव ! क्या राजकुमार पवनने अभीतक अपना हृदय तुमसे साफ नही किया ?

अञ्जना—हाँ बहन, मेरे दुर्भाग्यकी मेघाच्छादित रात्रिमे अभी तक चंद्र उदय नही हुआ।

ललिता—ओ निष्ठुर, अन्यायी पवन! तू इस कोमल फूलको मिट्टीमे क्यो मिला रहा है!

अञ्जना—परिचित होनेके कारण मैने ये बाते तुमसे कह दी है, परन्तु, तुमको कोई अधिकार नही कि मेरे पतिपर आक्षेप करो।

ललिता—कैसी प्रेमकी पुतली स्त्री, और कैसा अन्यायी पति।

अञ्जना—मै कह चुकी हूँ कि मै उनकी स्त्री हूँ, और कोई भारतीय स्त्री यह नही सह सकती कि उसकी उपस्थितिमे उसके पतिके प्रति तिरस्कारसूचक शब्द बोले जायँ।

ललिता—रानी—

अञ्जना—सावधान! मै इससे अधिक कुछ नही सुन सकती।

ललिता—मेरा प्रयोजन—

अञ्जना—बस चली जाओ, मै एक शब्द भी नही सुनूँगी। वसन्तमाला, इसे समझा दो कि दोबारा अपने श्वाससे इस महलका वायु अपवित्र न करे।

ललिता—मै यह कहे बिना नही रह सकती कि आपका व्यवहार दास-दासियोके लिए सर्वथा असह्य हो रहा है। (प्रस्थान)

अञ्जना—प्राणनाथ! यदि तुम आ जाओ, तो मै अपने जीवनके एक एक क्षणको एक एक वर्ष—एक एक शताब्दि बना दूँ। परन्तु जब तुम लौटने लगो तो इस समाप्त न होनेवाले समयको अश्रुके एक बिन्दुमे बद करके आपके चरणोपर निछावर कर दूँ। इतना समय बीत गया, इतने दिन गुजर गये, ससारमे अनेकानेक परिवर्तन हो

गये परन्तु मेरे दुर्भाग्यचक्रमे कोई फेर नही हुआ । क्या मेरा जीवन एक लम्बी रात्रिकी नाई रहेगा और उसके आकाशपर कोई प्रकाशपूर्ण नक्षत्र उदय नही होगा ? (सोचते सोचते सो जाती है ।)

वसन्तमाला—दुनियाँ हँसती है, क्या इसीके होठ रोनेके लिए बनाये गये है ? लोग आनन्द मनाते है, क्या इसीके नेत्र अश्रुधारा बहानेको उत्पन्न हुए है ? परन्तु नही, यह जो कुछ हो रहा है, उसी दयामय हरिकी आज्ञासे, उसी जगत्पति परमेश्वरकी इच्छासे, जिसके सकेत मात्रपर आधा संसार रोता और आधा हँसता है। आधा मास चद्रमा चमकता है, और आधा मास अन्धकारका राज्य रहता है।

(अञ्जना निद्रामे बडबडाती है ।)

अञ्जना—कृपा ! प्राणनाथ कृपा ! आज प्रारब्ध बडी अच्छी है, जो आपके दर्शन हुए ।

वसन्तमाला—दुखियारी स्वप्नमे न जाने क्या बडबडा रही है। भगवान् ! इसके हृदयकी प्रार्थनाओको सुन और इसके दु:खोको समाप्त कर।

अञ्जना—(पुन: स्वप्नमे) यह फूलोकी माला—

वसन्तमाला—(अञ्जनाके निकट जाकर) राजकुमारी !

[अञ्जना उठकर वसन्तमालाके पैरोपर गिर पड़ती है ।]

अञ्जना—पापिनी, डायन, यह तूने क्या किया। बोल जवाब दे, नही तो तेरा गला घोट दूँगी ।

वसन्तमाला—कौन ? क्या ? राजकुमारी होशमे आओ । मै वसन्तमाला हूँ ।

अञ्जना—(ऑख खोलकर) वसन्तमाला ?

वसन्तमाला—हॉ, मै तुम्हारी वसन्तमाला हूँ। क्या तुमने स्वप्न देखा है ?

अञ्जना—हॉ, स्वप्न देखा है । बड़ा मनोहर, बडा सुखदायक, परन्तु, अन्तमे बडा खेदजनक ।

वसन्तमाला—क्या ?

अञ्जना—मैने देखा कि मै एक वाटिकाके अन्दर पुष्प-लताओकी छायामे प्राणनाथको ढूँढ़ रही हूँ और बार बार उनका नाम लेकर उनको पुकार रही हूँ । मेरे नेत्रोसे अश्रुधारा बह रही है और शब्द मेरे होठोपर जम जाते है । चारो ओर अधकार है, और मै पग पगपर गिर रही हूँ । एकाएक बादल फट गये, और आकाशमे बिजलीका चमत्कार हुआ ।

वसन्तमाला—फिर ?

अञ्जना—ऑख उठाई तो देखा, प्राणनाथ मेरे निकट खड़े थे। मै दौड़कर उनके चरणोमें गिर पड़ी और उन्होने मुझे उठाकर गले लगा लिया । इसके अनन्तर हम घासपर बैठकर प्रेमसे बाते करने लगे कि इतनेमे एक राक्षसीने आकर कुछ पढ़ा, तो प्राणनाथ वृक्ष बन गये और मुझे किसीने उठाकर नदीमे धकेल दिया ।

वसन्तमाला—रक्षा करो, परमात्मन रक्षा करो ।

अञ्जना—परन्तु आश्चर्यकी बात तो अभी तुमने सुनी ही नही ।

वसन्तमाला—वह क्या है ?

अञ्जना—उस राक्षसीको मैने पहचान लिया । क्योकि मै उसे भली भॉति जानती हूँ ।

वसन्तमाला—कौन थी ?

अञ्जना—ललिता ।

वसन्तमाला—निद्रा मैय्याकी गोदमे जानेसे पहले, जिस वस्तुके विचार मनमे धारण किये जायॅ, वही वस्तु नाना प्रकारके रूप धारण

करके स्वप्नमे दिखाई देती है। यही कारण है कि ललिताके विचारने शरीर धारण करके तुम्हारे स्वप्नको भयानक बना दिया है। इसमे कोई विचार करनेकी आवश्यकता नही।

(द्वारपर खटका होता है।)

अञ्जना—जाओ देखो, द्वारपर कौन है?

(वसन्तमालाका प्रस्थान)

अञ्जना—क्या मेरे नेत्र इतने भाग्यवान् है कि मेरा स्वप्न ठीक उतरे, और उनको प्राणनाथके दर्शन प्राप्त हो? यह नही हो सकता। क्योकि सुना है, वे तो लकाको चले गये है।

[वसन्तमालाका प्रसन्नतासे प्रवेश]

अञ्जना—कौन है?

वसन्तमाला—राजकुमारी, प्रसन्न होओ, आनन्द करो, आज तुम्हारे दु.खका अन्त हो गया। आज मेरे शरीरका एक एक परमाणु नाच रहा है। हृदयमे आनन्दकी तरगे उठ रही है।

अञ्जना—क्या बात है जो इतनी प्रसन्न हो रही हो।

वसन्तमाला—उठो, सर्वदयालु प्रभुको धन्यवाद दो और द्वारपर जाकर राजकुमारका स्वागत करो।

अञ्जना—राजकुमार?—प्राणनाथ आ गये? कहॉ है? बोलो—कहो—बताओ। मेरे कान यह शुभसमाचार सुननेके भूखे थे। मेरे नेत्र उनके दर्शनके लिए व्याकुल थे—

वसन्तमाला—द्वारपर खडे है। जाकर सम्मानसे अन्दर ले आओ।

अञ्जना—मेरे प्रारब्धका सितारा! मेरे जीवनकी आशा—

(जाना चाहती है । एकाएक पवन अन्दर आ जाते हैं, अञ्जना
उनके चरणोमे गिर पडती है और पवन उठाकर
उसके मुखकी ओर देखने लगते हैं ।

वसन्तमाला—आज मेरी मनोकामना सिद्ध हुई । परमात्माकी यह अपार दया है । (प्रस्थान)

पवन—प्रिये !

अञ्जना—नाथ !

(अञ्जना दीवारोकी ओर देखती है ।)

पवन—दीवारोकी ओर क्या देखती हो ?

अञ्जना—मे देख रही हूॅ कि यही दीवारे जो आपके विना भूत बन बनकर मुझे काटने दौड़ती थी, आज आपके आगमनके साथ ही कैसी सुन्दर और मनोहर दीखती है। ससारमे आज नया प्रकाश दृष्टि-गोचर होता है । निराशाके स्थानमे आशाका आसन है ।

पवन—मै भी तुम्हारे देखनेके लिए अधीर था, व्याकुल था, परन्तु विवश था, प्रतिज्ञा मार्गमे खड़ी हो जाती थी । शुकर है कि बारह वर्ष समाप्त हो गये ।

अञ्जना—परन्तु प्रतिज्ञाका कारण ?

पवन—तुम्हारा एक दोष ।

अञ्जना—मेरा दोष ?

पवन—हॉ हॉ, तुम्हारा दोष । तुम्हे स्मरण है कि विवाहसे कुछ पहले तुम सखियोसहित अपनी वाटिकामे घूम रही थी और विवाह-प्रसग छिड़नेपर तुमने मुझे विषसमुद्र और विद्युत्प्रभको अमृतके घूॅटकी उपमा दी थी । उस समय मैने एक वृक्षकी ओटसे सब कुछ सुना, और विवाहके पश्चात् तुमको बारह वर्षके लिए त्याग दिया ।

अञ्जना—परन्तु, यह मैने तो नही कहा था।

पवन—तुमने नही कहा था?

अञ्जना—नही।

पवन—तो?

अञ्जना—हमारे यहाँ एक प्रेमदत्त भट्ट है, उसकी कन्या शान्ता बडी नटखट है। ये शब्द उसने कहे थे।

पवन—इसपर तुमने उसे कुछ कहा होगा?

अञ्जना—उस समय नहीं। क्योकि मै उस समय बारहदरीमे जा चुकी थी। इसकी सूचना मुझे पीछे मिली, जिसपर मैंने उसे यथा-योग्य विधिसे समझा दिया। परन्तु अगर मै जानती कि आप वहाँ खड़े हुए शब्द सुन गये है तो—

पवन—क्षमा करो। शान्ति और धैर्य्यकी देवी! क्षमा करो। मैने क्रोधमे आकर वह पाप किया है, जिसका प्रायश्चित्त नही।

अञ्जना—नाथ, यह आप क्या कह रहे है! मै आपकी दासी हूँ। ये शब्द कहते हुए आप शोभा नही पाते।

पवन—(स्वगत) कैसा कोमल स्वर है, कैसे मधुर शब्द है, जिसमे तनिक क्रोध नही, घृणा नही, असन्तोष नही। (प्रकाश्य) क्षमा करो देवी, मुझे क्षमा करो। मैने तुम्हे बडा दु ख दिया है। तुमपर अन्याय किया है।

अञ्जना—नाथ, बारह वर्षका सुदीर्घ समय अब भूल गया है और स्मरण तक नही रहा कि आपके वियोगमे हृदयकी व्यथा किस प्रकारकी थी। आपके दर्शन करके, आपके वचन सुनकर, ससार एक अनवरत गीत मालूम होता है, जिसका एक एक पद आत्मामे उतर जाता है। मालूम होता है कि ससार केवल एक स्वर है, जो चहुँ

ओर गूँज रहा है। केवल एक प्रकाश है, जो प्रत्येक स्थानपर व्याप्त है। केवल एक सुगन्धि है, जिसका कोई अन्त नहीं।

[वसन्तमालाका प्रवेश]

वसन्तमाला— आज चन्द्र-सूर्य्यकी जोड़ी देखकर हृदय शान्त हुआ है। उठिए, चलकर सन्ध्या आदिसे निवृत्त हूजिए।

पवन—क्या आसन बिछवा दिये है ?

वसन्तमाला—जी हॉ और जलके पात्र भी रखवा दिये है।

(सबका प्रस्थान)

तीसरा दृश्य

स्थान—सम्राज्ञी केतुमतीके भवनका बाहरी भाग

समय—रात्रि।

[ललिता और चम्पा]

ललिता—यह तुमसे किसने कहा ?

चम्पा—स्वय वसन्तमालाने।

ललिता—तो फिर यह सूचना असत्य नही, सत्य है।

चम्पा—हॉ, सत्य है।

ललिता—अञ्जना गर्भवती है।

चम्पा—हॉ, और हर समय पवनकी दी हुई ॲगूठी अपने पास रखती है।

ललिता—तो हमे एक काम और करना होगा।

चम्पा—वह क्या ?

ललिता—(एक ॲगूठा देकर) यह ॲगूठी पवनकी दी हुई ॲगूठीके सदृश है। अञ्जनाकी ॲगुलीसे वह ॲगूठी निकालकर यह नकली ॲगूठी उसकी ॲगुलीमे पहरा देना ही तुम्हारा काम होगा।

चम्पा—परन्तु, मै यह नही कर सकती। दूसरोकी बुराई करके धनवान् बननेकी अपेक्षा भिक्षा करके पेट भर लेना या, वह भी न मिले तो, भूखसे मर जाना अधिक प्रशसनीय है। मेरा काम पापकी कमाईके बिना भी भली भॉति चल सकेगा। मै इस पापमे तुम्हारे साथ सम्मिलित नहीं हूॅगी।

ललिता—तो तुम्हे यह अस्वीकार है?

चम्पा—हॉ, अस्वीकार है।

ललिता—समझकर बोलो, धन मिलेगा।

चम्पा—उसे मै नही चाहती।

ललिता—सुख प्राप्त होगा।

चम्पा—मेरा अन्त.करण नही मानता।

ललिता—हाथ आये हुए उन्नतिके अवसरको ठोकर मारना मूर्खता है।

चम्पा—मै इसी अवस्थामे सन्तुष्ट हूॅ।

ललिता—तो मालूम हो गया कि तुम उन लोगोमेसे हो जो उन्नतिको लोभ, आलस्यको शान्ति और निर्बलताको अन्त·करण कह कर पुकारते है, और ससारकी सबसे निकृष्ट वस्तु निर्धनताको प्रिय-पुत्रके समान प्यार करके पालते है।

चम्पा—जो भी हो, मनुष्यको मनुष्यकी बुराई नही करनी चाहिए, आत्म-हननसे बचना चाहिए।

ललिता—बेसमझ स्त्री! क्या दुनियामे पग-पगपर हननका नियम दिखाई नहीं दे रहा है? यदि ऑख उन अगणित परमाणुओको देख सकती, जो वायुमे उड़ रहे है, तो तुम्हे आश्चर्य होता कि किस तरह प्रत्येक परमाणु दूसरे परमाणुको खानेके लिए व्याकुल हो रहा है। यह अदृश्य सृष्टिका हाल है। इस लोकमे कीड़ोको मीन खाती है, मीनको

मेढ़क खाता है, मेढ़कको सर्प खाता है, सर्पको गरुड़ खाता है और गरुड़को, मृत्युके पश्चात्, फिर वही छोटे छोटे कीड़े अपना आहार बनाते है। क्या ससारमे प्रत्येक मनुष्य दूसरोको जीत लेने, खा जाने और सर्वनाश कर देनेका यत्न नही कर रहा है? क्या प्रत्येक स्थान-पर पराक्रमका सम्मान नही होता है? निर्धन रहो, दासीका काम करो, तो तुम्हे पता लग जायगा कि ससारमे नेकीका कितना आदर होता है, और धनका क्या दर्जा है।

चम्पा—तुम्हारे शब्दोने मुझमे पुन· साहसका सचार कर दिया है। अब मै फिर तुम्हारा इष्ट कर्म, चाहे वह कितना ही दुष्ट क्यो न हो, प्रसन्नता और साहससे करूँगी, परन्तु मेरा पुरस्कार—

ललिता—उससे कई गुना अधिक दूँगी।

चम्पा—बडी दया राजकुमारी।

ललिता—सावधान! इस शब्दका दूसरी बार प्रयोग न हो। नही तो मेरा बना बनाया खेल बिगड जायगा।

चम्पा—अब यह भूल न होगी।

ललिता—तो तुम मुझे कब मिलोगी, अँगूठी कब दोगी?

चम्पा—कल इसी समय।

ललिता—किस स्थानपर?

चम्पा—इसी स्थानपर।

ललिता—सावधानीसे काम करना।

चम्पा—आप निश्चिन्त रहे।

ललिता—अच्छा जाओ, तुम्हारे मार्ग शुभ हों।

[चम्पाका प्रस्थान]

ललिता—हृदय, प्रसन्न हो कि तेरे शिकारके तेरे फंदेमे फँसनेका

समय अब निकट है। दिन रातका परिश्रम, वर्षोंकी सेवा, पापाचरणकी कुटिल नीति फलीभूत होनेको है और अञ्जनाके सर्वनाशकी घडियाँ, प्रत्येक क्षणमे, जो बीतता है उसके समीप सरक रही है। ओह ! वह समय कब आयगा जब मेरा क्रोध शान्त होगा, और रात्रिको मै आरामकी निद्राका सुख प्राप्त कर सकूँगी। (प्रस्थान)

दृश्य परिवर्तन

स्थान—अञ्जनाका महल

समय—रात्रि

[अञ्जना एक हाथ सिरके नीचे रक्खे सो रही है। पास ही वसन्तमाला पडी है। चम्पा धीरे धीरे आती है।]

चम्पा—यह भी सो रही है, और अन्ध दास-दासियाॅ भी सो रही है। यही समय है, जब अपनी प्रारब्ध जगानेकी सामग्री एकत्र की जा सकती है, और इसके सर्वनाशपर मुहर लगानेकी तय्यारियाॅ हो सकती है। यह क्या मेरा दिल बोल रहा है ? परन्तु, नही नही, मै आत्माकी चितावनी नही सुन सकती, धर्म्माधर्म्मके विचारोका ध्यान नहीं कर सकती, परलोककी दुर्गतिका भय नही कर सकती। मुझे इस लोकका ध्यान है। रुपयोकी जरूरत है। एककी हानिसे दूसरेका लाभ होता है। ललिताने सत्य कहा था कि वायुका प्रत्येक परमाणु दूसरे परमाणुको अपना भोजन बनानेके लिए मुॅह खोलकर उसपर लपक रहा है। फिर मै ऊॅचे उठनेका अवसर क्यो छोड दूॅ ? और यह पाप ही क्या है ? एक अॅगूठी उतारती हूॅ, दूसरी पहनाती हूॅ। (धीरे धीरे अॅगूठी बदल लेती है।) बस, मेरा काम समाप्त हुआ। अब चलना चाहिए, कहीं किसीकी ऑख न खुल जाय। (प्रस्थान)

चौथा दृश्य

स्थान—आदित्यपुरका अन्त.पुर

समय—दोपहरसे पहले

[केतुमती क्रोधमे । गानेवालियॉ चुपचाप खडी हैं ।]

केतुमती—क्यो, गाती क्यो नही ?

(गानेवालियॉ गाती है—)

तजहु शोक दुख-क्रोध-क्षोभ सब, मानहु हे महरानी ।
हम सब विनती कर हारी ।
पछी सब शात भये, कलित कुजमाहि गये ।
नभमें रथ रोकि तनिक, सूरज भी शांत भये ॥
प्रकृति सखी शांत भई, नीरव छबि छाय रही ।
उपवनकी कलियनसों, लिपट तपन भागि गई ॥
पवन चलत शांत चाल, शीत मंद मधुर गंध ।
डार डार पात पात, शान्ति शान्ति ही लखात ॥
आप काहे हो अशान्त ॥
हाथ जोर पाय परें, विनय करे बार बार ॥
रोष तजो साज सजो, चन्द्र* हॅसे कमल+ खिलें ।
बलिहारी ॥ तजहु शोक० ॥

केतुमती—रहने दो रहने दो । मै नही सुनना चाहती ।

(गानेवालियोका प्रस्थान)

सगीत कैसी उत्तम वस्तु है । पर, जब तक अन्दरके तार ठीक अवस्थामे न हो, बाहरके तार हिलाने और मिलानेसे कानोको न रस मिलता है, न चित्तको शान्ति प्राप्त होती है । जबसे अञ्जनाके चरि-

* मुखडा +नयन

त्रकी बाते सुनी है, तन-मनमे अग्नि भडक रही है, और ऐसा मालूम होता है, मानो ससारमे कोई पुरुष तथा कोई स्त्री इस योग्य नही रही कि उसपर विश्वास किया जाय ।

[ललिताका प्रवेश]

केतु०—कौन, ललिता आ गई ?

ललिता—हॉ महारानीकी जय हो, मै आ गई ।

केतुमती—तूने मुझे क्या कहा था ? तूने मुझे क्या बताया था ? तूने मेरे आगे कैसा भयानक चित्र रक्खा था, जिसके कारण मै सारी रात घबराती रही हूॅ, और आत्माको चीर देनेवाले स्वप्न देखती रही हूॅ। (गला पकड़कर) बोल बोल निर्लज्जा कुटिला, बोल । इस बातका तेरे पास क्या प्रमाण है कि तूने जो कुछ कहा था, वह सत्य है ।

ललिता—सम्राज्ञि, मै प्रमाण देनेको उद्यत हूॅ ।

केतुमती—प्रमाण ! कब ?

ललिता—अभी ।

केतुमती—सत्य ?

ललिता—ऑखोसे दिखाऊॅगी ।

केतुमती—अञ्जनाका दोष ?

ललिता—सम्मुख कराऊॅगी ।

केतुमती—याद रक्खो, तुम राजपुत्र-वधूपर दोषारोपण कर रही हो।

[चम्पाका प्रवेश]

ललिता—सम्राज्ञि, लीजिए चम्पा वापस आ गई ।

केतुमती—चम्पा, तू अपनी स्वामिनीके महलमे गई थी ?

चम्पा—हॉ, महारानीकी जय हो, मै वहीसे आ रही हूॅ ।

केतुमती—वह वहॉ थी ।

चम्पा—जी हाँ वे वहीं थीं।

केतुमती—क्या कर रही थीं?

चम्पा—कुछ उदास-सी थीं। वसन्तमालाके साथ धीरे धीरे बातें कर रही थीं। असबाब बाँधनेके चिह्न थे।

केतुमती—(जोरसे हाथ पकड़कर) ठहर। (एक कोनेमें ले जाकर) तू कुछ और भी जानती है?

चम्पा—हाँ सम्राज्ञि, मैं वह जानती हूँ जो मेरी जिह्वा कहना नहीं चाहती।

केतुमती—तूने क्या देखा?

चम्पा—मुझपर कृपा कीजिए, मुझसे न पूछिए। आप मुझपर अविश्वास करेंगीं। मुझपर क्रोध करेंगी।

केतुमती—तुझे बोलना होगा। उत्तर देना होगा।

चम्पा—क्या ही अच्छा होता जो मेरे पैर कट जाते, और मैं यहाँ आनेके योग्य न रहती। या मेरी जिह्वा न होती, और मैं उत्तर न दे सकती।

केतुमती—इस कविताको समाप्त कर, और जितने शब्द भूमिकामें बोल चुकी है उससे आधे शब्दोंमें कामकी बात कह डाल।

चम्पा—आज मुझे यह स्पष्टतया जान पड़ा है कि अञ्जना गर्भवती है।

केतुमती—यह सन्देह तुझे कभी पहले भी हुआ था?

चम्पा—कई बार, परन्तु हर बार मैंने यही समझा कि मेरी आँखें भूल करती हैं।

केतुमती—तूने मेरा सन्देशा उसे दिया? यहाँ आनेको कहा?

चम्पा—हाँ महारानी! सुखपाल तैय्यार हो रहा है, वे आ रही हैं।

केतुमती—उठा लो विश्व-पिता! अब तो मुझे उठा लो, यह देखा नही जाता। मेरे मुँहकी झुर्रियाँ, बालोकी सफेदी और दुर्बल दृष्टिमे क्या यही देखना बदा है कि पुत्र-वधू क्या दुराचार करती है, और राजमहलको कैसा काला कलक लगता है।

दासी — महारानीकी जय हो, अञ्जना द्वारपर खडी आज्ञा माँगती है।

केतुमती—आने दो।

[दासीका प्रस्थान, अञ्जनाका प्रवेश]

अञ्जना—(सिर झुकाकर प्रणाम करती है, और सम्राज्ञीके चरणोमे फूल रखती है।)

केतुमती—अञ्जना यह क्या है?

अञ्जना—फूल, माताजी।

केतुमती—फूल?

अञ्जना—हाँ फूल। प्रकृति माताके मनोहर बच्चे। 'ससार-हाटकी सबसे अधिक निर्मल और स्वच्छ वस्तु।

केतुमती—परन्तु यह फूल, जिसको तेरे अपवित्र हाथ लग गये है, अब इस योग्य नही कि कोई स्त्री इन्हे ग्रहण कर सके।

(फूलोको घृणासे भूमिपर फेक देती है।)

अञ्जना—माताजी! इन सुन्दर पुष्पोके प्रति इस कटु व्यवहारका क्या कारण है? इसमे कोई मेरा दोप है, या इन परोपकारी व्यक्तियोका?

केतुमती—निर्लज्जा पापिनी, दुराचारिणी, इन फूलोका क्या दोष हो सकता है? इस देवताओकी सम्मानित सामग्रीका क्या दोष हो सकता है? यह सब तेरा दोप है।

अञ्जना—मेरा दोष!

केतुमती—हाँ हाँ तेरा दोष।

अञ्जना—नही नही, मैने कोई दोष नही किया। आप मुझे क्रोधसे

क्यो देख रही है ? मुझपर ऑखे लाल क्यो कर रही है ? मेरा एक एक अग भयसे कपायमान हो रहा है ।

केतुमती—और तू वास्तवमे इसी योग्य है कि तुझको लाल ऑखे दिखाई जायँ, घृणासे देखा जाय ।

अञ्जना—परन्तु मुझे इसका कारण तो बताया जाय ।

केतुमती—तेरा बढा हुआ पेट, तेरा पीला रग, तेरे शरीरकी अवस्था यह सब बोल रहे है कि तू गर्भवती है । क्या इस बातसे भी तेरा सिर भूमिमे नहीं गड जाता ? और मेरे हृदयमे क्रोधाग्नि नही उठती ? बोल, तेरे पास इसका क्या उत्तर है ?

अञ्जना—मेरा उत्तर सिवाय इसके और कोई नहीं कि वे लका जानेसे पहले यहॉ आये थे और मेरे पास तीन दिन ठहरे थे ।

केतुमती—इसका प्रमाण ?

अञ्जना—वसन्तमालासे पूछ लिया जाय ।

केतुमती—उसपर मुझे विश्वास नही ।

अञ्जना—चम्पा भी जानती है ।

चम्पा—मैने पवनको नही देखा ।

अञ्जना—(ॲगूठी दिखाकर) यह उनके अपने हाथकी दी हुई ॲगूठी है ।

केतुमती—ॲगूठी ! किसकी ? पवनकी ?

अञ्जना—हॉ माताजी ? यह उन्होने मुझे अपने हाथसे दी थी और कहा था कि यदि मै माता-पितासे मिला, तो वे यह समझेगे कि मै युद्धसे डरकर रण-भूमिसे लौट आया हूॅ । इसलिए अगर आवश्यकता हुई, तो, यह दिखा देना ।

केतुमती—ललिता !

ललिता—मेरा खयाल है कि अॅगूठी नकली है। इसकी परीक्ष की जाय।

केतुमती—हॉ, पवनकी प्रत्येक अॅगूठीके नगमे एक कागजके पत्रे पर उसके हस्ताक्षर है। दासी हथौडा ले आ। अभी निर्णय हो जात है कि इस कथनमे सत्य कितना है।

(दासी अॅगूठीका नग तोड़ती है। उसमेसे कोरा कागज निकलता है।)

केतुमती—अञ्जना तेरी यह चाल भी खाली गई। अॅगूठी नकली है

अञ्जना—नकली ?

केतुमती—हॉ हॉ नकली।

अञ्जना—नहीं—नही, यह नही हो सकता—यह असम्भव है। यह अॅगूठी उन्होने मुझे अपनी अॅगुलीसे उतारकर दी थी। यह उनकी ही है।

केतुमती—दुराचारिणी !

अञ्जना—इसमे कोई धोखा हुआ है। कोई भूल हुई है। मै शपथ खाती हूॅ कि मेरी चादर निर्मल है।

केतुमती—शपथ किसकी ?

अञ्जना—धरतीकी।

केतुमती—वह तेरे पापोसे नीचे झुकी जाती है।

अञ्जना—आकाशकी।

केतुमती—वह तुझसे दूर भागता है।

अञ्जना—धर्म्मकी।

केतुमती—तू उसे नष्ट कर बैठी है।

अञ्जना—मर्य्यादाकी।

केतुमती—वह भ्रष्ट हो चुकी है।

अञ्जना—परमात्माकी ।

केतुमती—तूने उसका भरोसा नहीं किया ।

अञ्जना—सर्वान्तर्यामी सर्वव्यापक, तू सब कुछ जानता है । मैंने अपने जीवनका एक एक क्षण पति-स्मरणको समर्पण कर रक्खा है, और पतिव्रत धर्म्मका जो मार्ग ऋषि-मुनियोंने दर्शाया है, उससे एक पग-भर भी इधर-उधर नहीं हुई । बारह वर्ष तक दिन और रात, शरद्-ऋतु और ग्रीष्म ऋतु, उनके नामकी माला जपते हुए बिता दिये हैं । परन्तु क्या अभी तक मेरे काले दिन समाप्त नहीं हुए कि यह और आपत्ति सन्मुख उपस्थित है ! (रोती है ।)

केतुमती—अञ्जना, रोकर किसे डराती है ? ये दुराचारकी अंधी आँखोंसे निकले हुए अपवित्र आँसू किसे दिखाती है ? केतुमती कच्ची और अजान बच्ची नहीं कि तेरे रोनेपर पिघल जाय, और न्याय मार्गको त्याग दे ।

अञ्जना—परन्तु मैं सत्य कहती हूँ कि मेरा कोई दोष नहीं ।

केतुमती—जिस प्रकार तूने यह कुकर्म किया है, उसी प्रकारका तुझे दण्ड दिया जायगा और पातकी रथमें बिठाकर देशसे निकाल दिया जायगा ।

अञ्जना—पातकी रथमें बिठाकर ?

केतुमती—हाँ हाँ, पातकी रथमें बिठाकर, काले वस्त्र पहिनाकर ।

अञ्जना—दीनदयाल, क्या तुम्हें भी मेरी दीन अवस्थापर दया नहीं आती !

केतुमती—तेरी जिह्वासे निकले हुए शब्दोंको वायु परमात्मा तक नहीं पहुँचा सकता, क्योंकि वे तेरे हृदयकी कालिखसे काले हो रहे हैं ।

अञ्जना—माताजी, विश्वास करो, यह अँगूठी स्वयं उनकी ही है ।

केतुमती—मै अब तेरा वास्तविक रूप देखकर धोखा नही खा सकती।

अञ्जना—अच्छा, इतनी कृपा करे, कि जो चाहे दण्ड दे, परन्तु उनके लौटने तक अपने चरणोमे स्थान दिये रक्खे। उनके आने पर आपको मेरे कथनकी सत्यताका ज्ञान हो जायगा।

केतुमती—बाल-बच्चोसे भरे-पूरे गृहमे कोई काल सर्पको छोड़ सकता है? गोशालामे कोई हिंस्र सिंहको छोड सकता है?

अञ्जना—नहीं।

केतुमती—तो मै तुमको, जो सर्पिणीसे अधिक विषभरी हो, सिंहसे अधिक हत्यारी हो, अपने गृहमे निवास करनेकी आज्ञा कैसे दे सकती हूँ? दासी, जाओ, जाकर रथवानसे कहो कि काला रथ तैयार करे और तुम काले वस्त्र लेकर आओ, ताकि इस बाहरके रोगको बाहर ही टाला जाय।

ललिता—महारानी, इसपर कृपा करो, यह आपकी बहू है।

केतुमती—परन्तु हानिकारक होनेसे शरीरका अग भी काटकर फेक दिया जाता है। दासी, जाओ।

[एकाएक वसन्तमालाका प्रवेश।]

केतुमती—तुम कौन?

वसन्तमाला—आपकी दासी वसन्तमाला!

केतुमती—तू यहाँ किस तरह आई? तुझे अन्दर आनेकी आज्ञा किसने दी?

वसन्तमाला—सत्यने उभारा। मनुष्यत्वने पुकारा। दयाके देवताओने द्वारपालोको टाल दिया। परमात्माकी शुभ इच्छाने मुझे अन्दर निकाल दिया।

केतुमती—परन्तु तेरे आगमनका प्रयोजन ?

वसन्तमाला—मै आपके कानोसे कुछ कहना चाहती हूँ।

केतुमती—वे इस समय बहरे हो रहे है।

वसन्तमाला—मै ऑखोसे कहूँगी।

केतुमती—उनपर इस दुराचारिणीके दुराचारके पर्दे पडे हुए हैं।

वसन्तमाला—हृदयसे सही।

केतुमती—वह पत्थर हो रहा है।

वसन्तमाला—मै न्यायकी देवीके आगे रोऊँगी, चिल्लाऊँगी, गिड़गिडाऊँगी। वह सोती होगी, मै जगाऊँगी। वह लेटी होगी, मै उठाऊँगी। वह शान्त होगी, मै उसे क्रोध दिलाऊँगी, और जो अन्याय उसके भवनमे होने लगा है, वह न होने दूँगी।

केतुमती—अन्याय ?

वसन्तमाला—हॉ, हॉ, एक सिरेसे लेकर दूसरे सिरे तक अन्याय।

केतुमती—जानती हो क्या कह रही हो ?

वसन्तमाला—जो कुछ कह रही हूँ सत्य कह रही हूँ।

केतुमती—जानती हो, इसका परिणाम क्या हो सकता है ?

वसन्तमाला—सत्यके लिए मै सब कुछ सह सकूँगी।

केतुमती—परन्तु मुझे तेरे कथनपर विश्वास नहीं, कारण यह कि तू इसकी पैतृक दासी है, और दासी अपनी स्वामिनीका पक्ष न ले, यह असम्भव है।

वसन्तमाला—इतना तो विचारिए कि जो सती बारह वर्ष तक तपस्या कर सकती है, क्या उसमे पापकी सम्भावना रह सकती है ?

केतुमती—बारह साल तक धोया हुआ वस्त्र एक क्षणमे काला हो सकता है।

वसन्तमाला—जब इसको प्रत्येक प्रकारका सुख प्राप्त है, तो इसको दुराचारकी आवश्यकता क्यो पडी ?

केतुमती—इसके उत्तरमे वह दीवारपर किसी कविका वचन लिखा हुआ है—

यौवनके दोपहरमें, सुख होवो हर भॉत।
तौ भी कामानल प्रबल, होवत नाही शान्त।

वसन्तमाला—और इसका उत्तर दूसरी दीवारपर अकित है—

सिहनी मर जाती है, पर घासको खाती नही।
आगमें सोना जले, फिर भी चमक जाती नही॥
लाख प्यासा हो पपीहा, वर्षा-जलकी बूँदका।
फिर भी, उसको गंगा जलकी धार भरमाती नहीं॥

केतुमती—बस, तुझे जो कुछ कहना था कह चुकी। अब जो कुछ मेरा विचार है मै करूँगी।

अञ्जना—माताजी, मै निर्दोष हूॅ।

केतुमती—मै तुझको सताये हुए जीसे और तपे हुए हृदयसे शाप देती हूॅ कि तेरे पुत्री उत्पन्न हो। वह युवती हो, सुन्दरी हो, तेरे समान दुराचारिणी बने और तब तू भी मेरे समान रो-रोकर कलेजा मले।

वसन्तमाला—जो कुछ कहना है समझ-सोचकर कहो। क्योंकि मेरी ऑखे उस दिनको अच्छी तरहसे देख रही है, जब आपको इसी दुराचारिणीके सम्मुख गिडगिड़ाकर क्षमा प्रार्थना करनी पड़ेगी।

केतुमती—दासी होकर तुझे लज्जा नही आती कि तू इस प्रकार बोलनेका साहस कर रही है ?

वसन्तमाला—नही। मै सत्यपर हूॅ और सत्य मनुष्यको निर्भय बना देता है।

केतुमती—अगर यह खोटा पैसा तुझे स्वीकार है तो तुझे भी इसके साथ ही जाना होगा।

वसन्तमाला—हर्षसे, प्रसन्नतासे। मै इनके साथ जाऊँगी। मैं साथ रहूँगी, और जिस प्रकार सुखके दिनोमे इन्होने मेरे साथ सद्-व्यवहार किया है, उसी प्रकार दुःखके दिनोमे मै इनकी सेवा करके अपने आपको कृतार्थ करूँगी। और जो अन्याय, इस प्रकाशपूर्ण नेकीके नक्षत्रके साथ, आप करनेको है, उसके विष-भरे प्रभावको दूर करनेका यथासम्भव यत्न करूँगी।

केतुमती—मै आज्ञा देती हूँ कि तेरी जिह्वासे अब एक शब्द भी न निकले।

वसन्तमाला—यह असम्भव है। मै बोलूँगी, बोलती रहूँगी और जब तक मुँहमे जिह्वा और जिह्वामे वाक्शक्ति है तब तक नहीं रुकूँगी।

केतुमती—इतना साहस है?

वसन्तमाला—इससे भी अधिक है।

केतुमती—तू निर्लज्जा है।

वसन्तमाला—परन्तु झूठी नही।

केतुमती—सन्मुख बोलनेवाली है।

वसन्तमाला—परन्तु अनर्थ तोलनेवाली नहीं।

केतुमती—नादान!

वसन्तमाला—आपसे अधिक बुद्धिमान्।

केतुमती—वसन्तमाला!

वसन्तमाला—केतुमती!

अञ्जना—वसन्तमाला वसन्तमाला, होश करो। यह क्या कह रही हो?

वसन्तमाला—राजकुमारी, अब होश नहीं रहा।

केतुमती—ये अपमानसूचक शब्द, यह तिरस्कार-भरा सम्बोधन मै नही सह सकती।

वसन्तमाला—इसकी पर्वाह किसे है?

केतुमती—चुप रहो।

वसन्तमाला—यह असम्भव है।

केतुमती—तो यही हो।

(केतुमती तलवार लेकर वसन्तमालापर लपकती है। वसन्तमाला सिर झुकाती है। अन्य दासियाँ केतुमतीका हाथ पकड़ती हैं। अञ्जना आश्चर्यसे मूर्तिवत् खड़ी रहती है।)

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—महेन्द्रपुरका राजमहल।

समय—सायकाल

[राजा महेन्द्रराय और रानी हृदयसुदरी पत्र पढ़ रही हैं।]

रानी—नही नही, तुम्हारी जिह्वाने भूल की है। मेरी आँखोको भ्रान्ति हुई है। परमात्माके लिए जल्द इसकी तरदीद करो और मेरे धड़कते हुए हृदयको शान्त होनेका अवसर दो।

राजा—भूल न मैने की है न तूने। यह जो कुछ दोष है अञ्जनाका है।

रानी—यह असम्भव है, यह मिथ्या दोषारोपण है। मेरी अञ्जना ऐसी नही है। मै इसे स्वीकार नही कर सकती।

राजा—रेतकी दीवार, राजा विद्याधरके पत्रके सम्मुख, नहीं ठहर सकती।

रानी—पत्र बनावटी हो सकता है।

राजा—दूत राजा विद्याधरका विश्वास-पात्र है, इसलिए इसकी सम्भावना नही।

(एक ओर देखकर)

राजा—लो वह आ गई।

रानी—परमात्मा! परमात्मा! मै क्या देख रही हूँ? अञ्जना और काले वेशमे!

(दौड़कर जाना चाहती है। राजा रोकता है।)

राजा—ठहरो।

रानी—कृपा करो। उसको अपने गृहमे आश्रय दो। उससे पूछो। उससे उत्तर माँगो, और जो कुछ वह कहना चाहती है, उसको कहने दो।—मै आपसे भिक्षा माँगती हूँ, इस प्रार्थनाको अस्वीकार न करो, सिर न हिलाओ, यह आपकी पुत्री है।

राजा—मै इस समयमे यही उत्तर दे सकता हूँ कि मेरे राज्यमे चोरो और डाकुओके लिए स्थान है, परन्तु इसके लिए नही। इसलिए उसे कह दो, समझा दो, कि रातसे पहले पहले महेन्द्रपुरसे निकल जाय।

रानी—निकल जाय?

राजा—हाँ निकल जाय।

रानी—और कुछ नही हो सकता?

राजा—कुछ नही। (प्रस्थान।)

रानी—मै क्या करूँ? मै क्या कर सकती हूँ?—परन्तु नही। पतिकी आज्ञा शिरोधार्य्य है। उसका पालन आवश्यक है।

(वसन्तमाला और अञ्जनाका काले वेशमें प्रवेश।)

अञ्जना—माता—

रानी—इस शब्दसे मुझे पुकारनेका तुझे अधिकार नही रहा।

वसन्तमाला—महारानी—

रानी—अगर होता, तो तेरा वेष काला न होता। यह पत्र हृदयको चीरनेवाला न होता।

अञ्जना—शोक! जिस पत्थरसे भयभीत होकर मै यहाँ आई थी, वह यहाँ भी मेरे आशाके शीशेको तोडनेके लिए विद्यमान है।

रानी—राजाने कहा है कि मेरे राज्यमे चोरो और डाकुओके लिए स्थान है, परन्तु तुम्हारे लिए नही। और वास्तवमे तुम्हारा कुकर्म इसी योग्य है कि तुमसे इसी प्रकारका घृणित व्यवहार किया जाय। हाय अञ्जना, तेरी बुद्धिपर क्यो पर्दा पड़ गया! यदि किसी भूलसे पवनने तेरा परित्याग कर दिया था तो तू मुझे सूचना देती, परन्तु होनहारको कौन टाल सकता है!

अञ्जना—यह भी समयका फेर है कि जो माता-पिता मुझे देखकर प्रफुल्लित हो उठते थे, वे इस प्रकार कटु वचनोका प्रयोग कर रहे है।

रानी—अगर तुझे पिताके पास जानेकी आज्ञा होती, तो तू देखती कि, जो पिता तेरा नाम सुनकर प्रसन्नतासे पागल हो जाता था, उसकी इस समय क्या अवस्था है!

वसन्त०—परन्तु यह निर्दोष है, क्यो कि मेरी आँखोने सब कुछ देखा है। पवन युद्ध-भूमिसे लौटे, तीन दिनतक रहे और फिर अपने हाथकी अँगूठी देकर चले गये।

रानी—वह अँगूठी तुमने रानी केतुमतीको दिखाई?

वसन्तमाला—हाँ, परन्तु उसने विश्वास नही किया।

रानी—विश्वास न करनेका कारण?

वसन्तमाला—यह कि पवनकी प्रत्येक अँगूठीके नगमे एक कागज रहता है, जिसपर उनके हस्ताक्षर किये होते है। इस अँगूठीके नगसे जो कागज निकला है वह कोरा है।

अञ्जना—माताजी, विश्वास कीजिए, मै निर्दोष हूँ। मेरी चादर निर्मल है।

वसन्तमाला—सूर्य्यमे प्रकाशके साथ गर्मी है, चन्द्रमामे धब्बे है, फूलोमे काँटे है। परन्तु अञ्जनामे, सिवाय इसके कि इस अबलापर दोष लगाया गया है, और कोई दोष नही।

अञ्जना—मै यह नही कहती कि आप मुझपर विश्वास करे या मेरे कथनको सत्य मान ले। मेरी केवल यह प्रार्थना है कि उनके युद्धसे लौटने तक मुझे यहाँ रहनेकी आज्ञा दी जाय।

रानी—बेटी, मै क्या करूँ? तेरे पिता स्वीकार नहीं करते।

अञ्जना—हाय! अगर आचारका वृत्तान्त हृदयपर अकित होता, तो मै चीरकर दिखा देती कि मेरे शरीरकी एक एक नाड़ी इस दोषको मिथ्या कह रही है। माता, मै शपथ खा सकती हूँ कि यह दोष मिथ्या है, सत्यका अंश नही। (जोरसे रो उठती है।)

रानी—(स्वगत) अब मेरा हृदय विवश हुआ जाता है। अब मै नही रह सकती। इसका एक एक शब्द मुझे विश्वास दिला रहा है कि इसमे कोई भूल हुई है और यह निर्दोष है।

अञ्जना—(रुँधे हुए स्वरसे) माता!

रानी—बेटी, मुझे विश्वास हो गया है कि तू निर्दोष है, निष्पाप है।

अञ्जना—अब चिन्ता नही, दु:ख नही, विषाद नही। मै सकटसे नही डरती, आपत्तियोसे नही डरती। परन्तु यह बात कि मेरी माताको भी मेरे आचारपर सन्देह है, मेरे लिए असह्य है। अब जब कि

आपने मुझपर विश्वास प्रकट कर दिया है, मुझपर आगकी वर्षा हो रही हो, भूमिसे गधककी नदियाँ फूट रही हो, हजारो सर्प और बिच्छू काट रहे हो, सारा ससार गालियाँ दे रहा हो, परन्तु, यह बात कि मेरी जननीको मुझपर विश्वास है, मुझको अधीर न होने देगी और मै प्रत्येक कष्टको सहर्ष सहूँगी। वसन्तमाला, चलो, अब मै गृह-त्यागसे नही डरती। वन और नगर दोनो एकसे है।

रानी—(दौड़कर गलेसे लगा लेती है) बस बेटी बस, अब मै तुझे कही न जाने दूँगी।

[राजाका प्रवेश]

राजा—यह मेरी आज्ञाका पालन हो रहा है?

रानी—महाराज, इसका गत आचार, इसकी सरल बाते, इसका स्वच्छ चरित्र, इन सबसे प्रकट होता है कि यह दोषारोपण मिथ्या है। इसलिए इसपर दया कीजिए।

राजा—मेरे विचारमे परिवर्तन नही हो सकता।

रानी—प्रथम तो यह निर्दोष है, दूसरे आपकी पुत्री है, इस लिए—

राजा—हाँ, अबसे एक घण्टा पहले यह मेरी पुत्री थी, और मै इसका पिता था। परन्तु इस पत्रने उस पैतृक सम्बन्धको काट दिया है। अब यह मेरी कोई नहीं।

रानी—ऐसी सुन्दर—

राजा—परन्तु कटार।

रानी—ऐसी मधुर—

राजा—परन्तु विष।

रानी—तुम्हारा चन्द्रमा है।

राजा—गहना हुआ।

रानी—आशा है।

राजा—टूटी हुई।

वसन्तमाला—इस अबलाका प्रारब्ध फिर चक्करमे है।

राजा—रानी, मै अब इस बारेमे एक शब्द भी सुनना नही चाहता। जो कुछ कह चुका हूँ, उसमे परिवर्त्तन नही हो सकता। इस लिए इसे बाहर निकाल दो। मरे या बचे, इससे कोई प्रयोजन नही।

(राजाका प्रस्थान)

रानी—बेटी, अब मै क्या करूँ?

अञ्जना—महाराजकी आज्ञाका पालन, क्योकि आपका यही धर्म्म है।—है, आप रो रही है! इसकी आवश्यकता नही। मै प्रत्येक दुःख सह लूँगी, मुझे कष्ट न होगा।

रानी—परमात्मा! तूने नारियॉ क्यो उत्पन्न की? मर्दोंके हाथकी पुतलियॉ बननेके लिए, उनके कथनपर अन्धोके समान चलनेके लिए, उनकी आज्ञा माननेके अन्यायको सहन करनेके लिए? क्या इसके लिए और प्रबन्ध नही हो सकता था? क्या नारियॉ इस लिए उत्पन्न हुई है कि वे आजन्म मर्दोंकी ओर ताकती रहे, और मर्द उनको एक झिड़कीसे चुप करके जो मनमे आवे, उनसे करा ले। नारी इतनी अधम, इतनी निकम्मी है कि उसका कोई अधिकार नही, और मर्द ही जो चाहे कर सकता है! अन्तर्यामी सर्वशक्तिमान्, मुझे दूसरे जन्ममे मनुष्य-योनि न दे, और अगर दे तो नारी न बना।

अञ्जना—माता, मेरे लिए दुःखित होनेकी क्या आवश्यकता है?

आपका आशीर्वाद हर स्थानपर मेरे साथ रहेगा। अब जाती हूँ, प्रणाम।

रानी—बेटी, तुझे क्या आशीर्वाद दूँ। जिस प्रकार मै विवश हूँ, उसी प्रकार मेरे शब्द विवश है। अच्छा, आशीर्वाद देती हूँ कि परमात्मा तुझे दूसरे जन्ममे स्त्री न बनावे।

वसन्तमाला—जले हुए हृदयकी जली हुई बाते।

अञ्जना—माता, जाती हूँ, आज्ञा दो।

वसन्तमाला—चल, पवित्रताके प्रकाशपूर्ण चन्द्रमा, चल और वनवासियोके हृदयोको उज्ज्वल कर।

रानी—वसन्तमाला, मेरी बेटीको दु ख न हो, यह राजमहलोकी पली है।

वसन्तमाला—इसकी आप चिन्ता न करे। मै भिक्षा माँगूँगी, दिन-रातका एक एक क्षण मेहनत मजदूरीपर लगाऊँगी, स्वय भूखी रहूँगी, पर इसे भूखी न रक्खूँगी। हर एक दुःख और हर-एक कष्टके समय इसके आगे ढालके सदृश खडी हो जाऊँगी। यही मेरी मालकिन थी, मालकिन है, और मालकिन रहेगी। मैने अपना जीवन इसकी सगतिमे बिताया है। परन्तु जैसा सौम्य, जैसा निर्मल, जैसा उज्ज्वल चरित्र इसका आज है, वैसा कभी न था। यह स्वर्ण है, जो अग्निमे चमक रहा है, यह चन्दन है, जो रगड खाकर सुगन्धि दे रहा है, यह समुद्रकी चट्टान है, जो भयावनी और डरावनी लहरोके मध्यमे धृष्ठतासे खडी है। इसे झुकानेवाला तीन लोकमे उत्पन्न नही हुआ।

(पर्दा गिरता है)

———

तीसरा अङ्क

पहला दृश्य

समय— दोपहर

[राजा वरुण सिंहासनपर बैठे हैं। दर्बारी अपने अपने स्थानपर हैं। सामने पवन खडे हैं।]

वरुण—कहो दूत, तुम क्या सन्देशा लाये हो ?

पवन—यही कि अभी समय बाकी है, तलवारे म्यानके अदर है, बाण कमानोके ऊपर नही चढे। इसलिए यदि आप चाहे तो युद्ध रोका जा सकता है।

वरुण—और यदि मै इस प्रस्तावको अस्वीकार कर दूँ तो ?

पवन—न्याय-प्राप्तिके लिए अनेकानेक वीरोका रक्तपात आवश्यक है।

वरुण—रावण अद्भुत सृष्टिका पुरुष है। उसका हृदय भयसे कपायमान है, परन्तु जिह्वासे निर्भयताके शब्द निकल रहे है।

पवन—वे केवल यही चाहते है कि खर-दूषणको छोड दिया जाय, उनके राज्यको स्वाधीन कर दिया जाय और हमेशाके लिए प्रतिज्ञा की जाय कि इस प्रकारका न्याय-रहित व्यवहार न किया जायगा।

वरुण—दूत, जाकर कह दो कि वरुण इस प्रस्तावका उत्तर युद्ध-भूमिमे केवल शस्त्रोसे देगा।

पवन—तो परिणाम ?

वरुण—बस सग्राम।

पवन—राजन्, आप आपत्तिको क्यो निमत्रण दे रहे है ? लाखो स्त्रियोको विधवा, लाखो बालकोको अनाथ, और लाखो पुरुषोको लाचार करनेके लिए क्यो उत्सुक हो रहे है ?

वरुण—दूत, तुम दूतके अधिकारसे बाहर जा रहे हो।

पवन—इसलिए कि मेरा आपपर एक और भी अधिकार है।

वरुण—कौन-सा ?

पवन—जो प्रत्येक भारतवासीको प्रत्येक भारतवासीपर प्राप्त है।

वरुण—यह कहते हुए तुम्हे लज्जा नही आती ? सिर नीचे नहीं झुक जाता ?

पवन—क्या मैने किसीके साथ अन्याय किया है ? किसीपर अनुचित आक्रमण किया है ?

वरुण—भारतवासी होकर भारतवासीके विरुद्ध युद्धको तैयार हुए हो, क्या यह लज्जाकी बात नही ?

पवन—नही।

वरुण—तुम्हारी देशभक्ति तुम्हे यही शिक्षा देती है ? तुम देशभक्त हो ?

पवन—यदि देशभक्तिके ये अर्थ है कि अपने देशवालोका, चाहे वे भूलपर ही क्यो न हो, पक्ष लिया जाय और अन्य देशवालोकी, न्यायपर होते हुए भी, सहायता न की जाय, तो मै देशभक्त नही, देशका शत्रु हूॅ।

वरुण—तुम्हे चाहिए था कि मेरे साथ सम्मिलित होते।

पवन—क्यो ?

वरुण—क्योकि मै भारतवासी हूॅ, और भारतवासी होनेके कारण मेरा तुमपर विशेष रूपसे अधिकार है।

पवन—भारतवासी आप किसे कहते है ?

वरुण—जो भारतमे निवास करता हो, जिसका शरीर भारतके अन्नसे पला हो, जिसकी बुद्धि भारतके घी और दूधसे परिपक्व हुई हो।

पवन—वह भारतवासी है ?

वरुण—हॉ, ऐसा पुरुष भरतवासी है।

पवन—तो खर और दूषण दोनो भारतवासी है ?

वरुण—नही।

पवन—क्योकि उनके सम्बन्ध-नाते लकावालोसे हुए है ?

वरुण—हॉ।

पवन—यह आपने पहले तो नही कहा था ?

वरुण—पहले नही कहा था तो अब कहे देता हूँ।

पवन—तो शिवसेन, जो आपका मित्र और स्नेहपुरीका राजा है,—वह भी दोषी है। क्योकि उसने पाताल देशकी एक युवतीसे विवाह किया है,—राजन्, आप भारतवर्षके नामपर कलक लगा रहे है, ऐसा कभी नही हुआ।

वरुण—तुम इस समय दूत होकर यहॉ आये हो या उपदेशक होकर ?

पवन—दूत।

वरुण—तो ये बाते दूतोकी मर्य्यादासे बाहर है। इसके बदलेमे यदि तुमको कैद कर लिया जाय, तो तुम्हे कौन बचा सकता है ?

पवन—मेरी भुजाये।

वरुण—उनमे यह शक्ति है ?

पवन—परीक्षा कर लो।

वरुण—सेनापति !

अश्वपति—महाराज !

वरुण—बाँध लो,—है, तुम चुप हो, आगे नही बढते ?

अश्वपति—महाराज, दूतको कैद करना नीति और रीतिसे प्रतिकूल है।

वरुण—इसका निर्णय करना मेरा काम है।

अश्वपति—सत्य है महाराज।

वरुण—मै आज्ञा देता हूँ कि इसे कैद कर लो।

अश्वपति—मै अस्वीकार करता हूँ।

वरुण—अस्वीकार करते हो ?

अश्वपति—और इसी समय सेनापतिके पदसे पृथक् होता हूँ।

वरुण—यहाँ तक मजाल ?

अश्वपति—और इसके साथ ही इस राज्यका परित्याग करता हूँ।

वरुण—अश्वपति ! अश्वपति ! !

अश्वपति—नौकरी करते समय सोचा था, देशकी सेवा करूँगा, परन्तु जिस देश-सेवामे आत्माका हनन करना पड़े, उस देश-सेवासे वञ्चित रहना ही अच्छा है। आज नौकरीके साथ मैने देशको छोड़ा है, और उसके साथ ही राज्यका त्याग किया है। परन्तु राजन्! आप भी आज एक देश-भक्त धर्म्म-परायण सेवककी सेवासे वञ्चित हो गये है। इस हानिका मोल कम नही।

पवन—राजन्, आप इस देवताके चरणोकी धूलि ले।

वरुण—उपसेनापति ! अश्वपतिको पकड़ लो।

उपसेनापति—मेरे हाथ यह कृतघ्नता नही कर सकते !

वरुण—मैने तुम्हे सेनापति नियत किया।

उपसेनापति—यह प्रलोभन भी मुझसे यह पाप नही करा सकता।

वरुण—दरबारियो! तुम देखते हो, तुम्हारे राजाका कितना तिरस्कार हो रहा है?

(दरबारी चुपचाप बैठे रहते हैं।)

वरुण—कोई नही बोलता, कोई नही उठता। सब विद्रोही हो गये, शत्रुसे मिल गये?

सब—यह असम्भव है। हम ऐसा पाप कभी नही कर सकते।

वरुण—तो अश्वपतिको कत्ल कर दो।

सब—यह भी असम्भव है। हम अपने आदमियोको कत्ल नही कर सकते।

वरुण—बहुत अच्छा, यो है तो यो ही सही। यह काम मुझे अपने हाथसे करना होगा।

(सिंहासनसे तलवार लेकर नीचे उतरता है।)

अश्वपति—(सिर झुकाकर) लीजिए, हर्षसे सिर काट लीजिए।

वरुण—विद्रोही मुँहफट! सावधान हो!

अश्वपति—सावधान होनेकी क्या आवश्यकता है?

वरुण—तलवार निकाल।

अश्वपति—मै तलवार निकालूँ? नही राजन्, यह नही हो सकता। संसारमे प्रलय हो जायगा, आकाशमे तारा-मण्डल छिन्न-भिन्न हो जायगा, पृथ्वी अपना स्थान छोड़ देगी, समुन्दरका जल ऊपर चढ़ जायगा, अगर वे यह देखेगे कि एक सेवकने अपने स्वामीपर आक्रमण किया है। नही, मै आक्रमण नही कर सकता।

वरुण—भीरु! कायर!! आक्रमण कर।

अश्वपति—यह असम्भव है। महाराज, मैने आपका अन्न खाया है।

वरुण—आक्रमण कर विद्रोही, आक्रमण कर।

अश्वपति—राजन्, मेरे हाथ आपपर नही उठ सकते।

वरुण—तो यही हो। इसी तरह मर।

(मारनेको तलवार निकाल्ता है। पवन अपनी तलवार निकालता है।)

पवन—सावधान ! मृत्युके ग्रास, सावधान !

अश्वपति—तुम कौन हो, जो स्वामी और सेवकके मामलेमे दखल देते हो ? तुमको इसका अधिकार किसने दिया है ?

पवन—जिसने मुझको मन और मनको विचारकी शक्ति दी है।

वरुण—लड़ना चाहते हो, युद्धकी साध है तो आओ अभिलाष पूर्ण कर लो।

पवन—मै उद्यत हूँ, परन्तु—

वरुण—परन्तु ?

पवन—जो जलका बिन्दु उँगलीके सिरेपर पहुँच चुका है, और कोई दममे आपसे आप भूमिपर नष्ट हो जानेको है, उसे गिराते हुए लज्जा आती है। जो वृक्ष अपनी आयुको भोगकर मृत्युके दिनकी प्रतीक्षा कर रहा हो, और आपसे आप गिरनेको तैय्यार हो, उसपर कुल्हाड़ा मारते हुए सकोच होता है।

वरुण—अब जिह्वासे नही, तलवारसे बात करो।

(दोनो लडना चाहते हैं, अश्वपति बीचमे खडा हो जाता है।)

वरुण—अश्वपति, बीचसे हट जाओ।

अश्वपति—युवक, युद्ध करना है तो मुझसे कर लो। इसके पीछे किसी औरसे करना।

पवन—(तलवार फेककर) तुमसे युद्ध करना मुझे स्वीकार नही।

वरुण—दूत, जाओ, तुम्हारा काम हो चुका। अब रणभूमिमे भेट होगी।

पवन—दूतका धर्म तो नही कहता कि आपको कुछ कहूँ, परन्तु, मनुष्यत्वके संकेतसे यह कहता जाता हूँ कि इस अनमोल हीरेका मोल पहचानिए, और इसके साथ उचित व्यवहार कीजिए। (प्रस्थान)

वरुण—इस उपदेशकी मुझे कुछ आवश्यकता नही, इसे अपने साथ ही ले जाओ।

अश्वपति—महाराज अब आज्ञा दीजिए, जाता हूँ।

वरुण—जाओ।

दूसरा दृश्य

स्थान—रास्ता

समय—तीसरा प्रहर

[पवन और अश्वपति]

पवन—वीर-शिरोमणि, आप पूजाके योग्य है।

अश्वपति—आपके शब्द मुझे शरमिन्दा कर रहे है। मै किसी योग्य नही।

पवन—सेनापतित्वको धूलिके समान छोड़ देना, राजाके कोपका भय न करना, और देशका त्याग तक स्वीकार कर लेना, यह सब ऐसी बाते नही है, जिन्हे साधारण पुरुष कर सके। आपसे मिलकर मै अपने आपको सम्मानित समझता हूँ।

अश्वपति—मै, आप जैसे वीरके इन शब्दोके लिए, कृतज्ञता प्रकाश करता हूँ।

पवन—तो अब आपका क्या विचार है ?

अश्वपति—अभी तक तो कोई उद्देश्य सम्मुख नही।

पवन—आप दुर्मतिनगरको वापस जायँगे ?

अश्वपति—असम्भव।

पवन—सेनापतिका पद फिर स्वीकार करेगे ?

अश्वपति—कदापि नही। जिसे त्याग दिया है, जिसे छोड दिया है, अब उसे दोबारा ग्रहण नही कर सकता।

पवन—तो मेरी आपसे एक प्रार्थना है।

अश्वपति—कहिए।

पवन—धर्म और पाप, अत्याचार और स्वाधीनता, न्याय और लोभ, आपसमे टकरा रहे है। क्या आप न्याय और धर्मका पक्ष न लेगे ?

अश्वपति—साहसी वीर ! यह नही हो सकता। जिसकी सेवा की है, जिसका अन्न खाया है, जिसको स्वामी कहा है, जिसके आश्रयमे आधी बाल्यावस्था और आधी जवानी बिता दी है, जिसके पसीनेपर अपना रक्तपात किया है, उसके विरुद्ध तलवार नही चला सकता। जिस भूमिकी मिट्टीसे उत्पन्न हुआ हूँ, जिसके जल-वायुका भोग किया है, जिसमे शरीरका पालन-पोषण हुआ है, उस राज्यको हानि पहुँ-चानेमे मेरी भुजाये सहायता नही दे सकती।

पवन—आपका राजा बिल्कुल अन्यायपर है।

अश्वपति—परन्तु, फिर भी स्वामी है।

पवन—उसने आपका अपमान किया है,—तिरस्कार किया है।

अश्वपति—परन्तु, फिर भी स्वामी है।

पवन—तो आप क्या करेगे?

अश्वपति—दुनियाके राजाकी सेवासे कुछ प्राप्त नही हुआ, अब चार दिन ससारके स्वामीकी भक्ति करके देखूँगा कि वहाँ भी न्याय और धर्म है या नही।

पवन—तो आप साधु हो जायँगे?

अश्वपति—यही विचार है कि दुनियाके टटे छोड़कर प्रभुका भजन गाऊँ, और मनुष्य-जीवन सफल करनेका प्रयत्न करूँ।

पवन—आप धन्य है।

अश्वपति—नही कुमार, आप धन्य है।

(एकका एक तरफसे और दूसरेका दूसरी तरफसे प्रस्थान)

तीसरा दृश्य

स्थान—पशुमुखा वनका भीतरी भाग

समय—सायकालसे कुछ पहले

[अञ्जना और वसन्तमाला]

अञ्जना—वसन्तमाला फिर गाओ! तुम्हारे गानेसे हृदयको शान्ति प्राप्त होती है।

वसन्तमाला—परमात्मा तुम्हे शान्ति दे। (गाती है।)

भैरवी

प्रभु बिन कौन हमें अपनाए।
माता-पिता सब छूट गये है, नाते सारे टूट गये है।
बिगरी कौन बनाए, कौन हमें अपनाए, प्रभु बिन० ॥

नदिया गहरी, दूर किनारा, नइया फँसी आय मँझधारा।
पल पल हिचकोरे खाए, कौन हमें अपनाए, प्रभु बिन० ॥
दुख दर्दोंके है हम मारे, क्षमा करो अपराध हमारे।
द्वार तुम्हारे आए, कौन हमें अपनाए, प्रभु बिन० ॥
टूट गये है तार हृदयके, खड हुए हैं चार हृदयके।
धीरज कौन धराए, कौन हमें अपनाए, प्रभु बिन० ॥
उरमें शूल, पाँवमें छाले, दुख है देते दुनियावाले।
उनसे कौन बचाए, कौन हमें अपनाए, प्रभु बिन० ॥

अञ्जना—यह क्या हो रहा है? यह क्या घट रहा है? सास दोष देती है, माता-पिता उसे स्वीकार करते है और निर्दोष अबलाको घरसे बाहर निकाल देते है। रात्रि वेगसे बढ़ी आ रही है और अन्धकार प्रकाशका स्थान ले रहा है। आँखे देखती थी,—कान सुनते थे,—हृदय अनुभव करता था कि ऐसे समयमे बेटीको घरसे निकाल देना उचित नही। परन्तु किसीने विचार न किया और बिलखती हुई बेटीको मृत्युके मुखमे धकेल दिया। वायु चल रहा था, वृष्टि हो रही थी, बिजली चमक रही थी,—ऐसे समयमे, जब कि लोग चोरो और डाकुओ तकको भी स्थान देनेके लिए अपने घरोके द्वारा खोल देते है, पिता पुत्रीको कहता है कि मेरे राज्यमे तुम्हारे लिए आश्रय नही। (एकाएक वसन्तमालाके कन्धे-पर हाथ डालकर) अच्छा, वसन्तमाला, तुम इसे क्या कहोगी?

वसन्तमाला—अन्याय।

अञ्जना—नही।

वसन्तमाला—कठोरता।

अञ्जना—नही।

वसन्तमाला—भूल।

अञ्जना—यह भी नही।

वसन्तमाला—तो फिर ?

अञ्जना—अपने पापोका फल, अपने कर्म्मोकी कमाई।

वसन्तमाला—धोया हुआ फूल जितना पवित्र हो सकता है, आप उससे भी पवित्र है। शरद् ऋतुमे उदय होते हुए प्रातःकालके सूर्य्यकी पहली किरण जितनी मनोहर हो सकती है, आप उससे भी मनोहर है। नवजात बालक जितना निर्दोष हो सकता है, आप उससे भी निर्दोष है। फिर यह कर्म्मोका फल किस प्रकार हो सकता है ?

अञ्जना—यह दुनिया एक खेती है, जिसमे मनुष्य अपने गत जन्मके कर्म्मोका फल काटता है, और आनेवाले जन्मके लिए नये बीज बोता है। जिस प्रकार वृक्ष अपने फलसे पहचाना जाता है, उसी प्रकार इस जन्मके दुख-सुखसे पिछले जन्मका हाल जाना जाता है। पति-वियोगका दुख कहता है कि मैने पिछले जन्ममे किसी सत्यवती नारीको उसके पतिसे पृथक् किया होगा। मिथ्या दोषारोपणसे ज्ञात होता है कि मैने पिछले जन्ममे किसीपर झूठे दोषकी स्थापना की होगी। यह न होता, तो मुझपर ये आपत्तियॉ कभी नही आती।

वसन्तमाला—राजकुमारी!

अञ्जना—किसे कहती हो,—किसे बुलाती हो ?

वसन्तमाला—आपको।

अञ्जना—मै और राजकुमारी ? जिसे सिर छुपानेको कोई स्थान नही, जिसके पहननेको कोई वस्त्र नही, जिसके खानेको भोजन नही, वह राजकुमारी है! राजकुमारियॉ महलोमे रहती है, मै वनोमे भटक रही हूॅ। राजकुमारियॉ सुखसे दिन गुजारती है, मेरा एक एक क्षण दुख और खेदकी भेट हो रहा है। राजकुमारियोको सब लोग मान और आदरकी दृष्टिसे देखते है, मुझे माता-पिताने घरसे निकाल दिया है। राज-

कुमारियाँ स्वच्छ कपडे पहनती है, मेरा वेष काला है। नही नही, मै राजकुमारी नही, मुझे राजकुमारी न कहो,—मुझे व्यर्थ धोखा न दो।

वसन्तमाला—धैर्य्य रक्खो, देवी, धैर्य्य रक्खो।

अञ्जना—दयामय प्रभो! धन-सम्पत्ति, सोना-चाँदी, राजपाट मै कुछ नही माँगती। मुझे केवल पति-प्रेम और कलकरहित जीवन दो।

वसन्तमाला—सन्ध्याका समय हो गया है। किसी विश्रामके स्थान पर चलना चाहिए।

अञ्जना—सखि, मुझे इस सायकालकी कोई चिन्ता नही। मै तो अपने प्रारब्धके सूर्य्यको रो रही हूँ, जो उदय होनेके साथ ही अस्त हो चुका है। तू बाहरी अन्धकारसे घबरा रही है। इस निर्जन वनसे तलमला रही है। परन्तु मै उस अन्धकारको देख रही हूँ, जो मेरे हृदयके ऊपर छाया हुआ है और जिसके कारण मेरी, आँखे ही नही, आत्मा भी अधी हो रही है। (रोती है।)

वसन्तमाला—अन्धेरी रातके पीछे प्रकाशमान सूर्य्य उदय होता है, सायकालके बाद प्रभात होता है, मृत्युके अनन्तर नवजीवन प्राप्त होता है, और अमावास्याके पश्चात् दूजका चन्द्रमा दर्शन देता है।

अञ्जना—निस्सन्देह हर सायकालके पीछे प्रभात और हर रात्रिके पश्चात् दिन प्रकट होता है। परन्तु मेरे प्रारब्धके आकाशपर न तारे चमकते है, न चन्द्रमा दिखाई देता है। मानो वह एक लम्बी रात्रि है, जिसके लिये कोई समाप्ति,—कोई अत नही।

वसन्तमाला—न घबराओ देवी, न घबराओ। इस निराशाकी अँधेरी रात्रिमे आशाके तारेको आँखोसे ओझल न होने दो। नहीं तो, दु·खके अथाह समुद्रमे, जीवनकी नौका तबाहीकी चट्टानोसे टकराकर चकनाचूर हो जायगी।

अञ्जना—उसे परमात्मा बचायगा।

वसन्तमाला—परमात्मा? वह है? जीता जागता है? न्यायकारी है? दिखाओ वह कहाँ है? मै उससे पूछूँ, उससे लडूँ, उससे वाद-विवाद करूँ,—मगर नही, वह नही है। यह झूठी कहानी लोगोने अपने लाभके लिए गढी है। यह बनावटी नाम डरानेके लिए रक्खा गया है।

अञ्जना—बहन, क्या कह रही हो! क्या मेरे दु.खोने तुम्हारे हृदयको नास्तिक बना दिया है?

वसन्तमाला—अगर नास्तिक बननेसे तुम्हारा लाभ हो, तो मै नास्तिक बननेका तैय्यार हूँ।

अञ्जना—छि.! ऐसा न कहो, यह पाप है।

वसन्तमाला—तुम्हारे लिए मै पाप करनेको भी तैय्यार हूँ।

अञ्जना—वसन्तमाला, इस पापी दुनियामे जहाँ पुत्र पिताका, और भाई भाईका शत्रु है, जहाँ स्वार्थसिद्धिके लिए लोग घृणितसे घृणित कार्य करनेपर उतारू हो जाते है, तुम्हारे जैसी सखी पाकर मै फूली नही समाती। अगर परमात्माने अच्छे दिन दिखाये, और मै किसी योग्य बनी, तो यह दिखा दूँगी कि मै नेकी और—वसन्तमाला सँभालो, मेरी आँखोके आगे अँधेरा छाता जा रहा है।

(अचेत होकर गिर जाती है।)

वसन्तमाला—परमात्मा! मेरा अपराध क्षमा कर और वह दिन जल्द ला कि ये आँखे इस पवित्रताकी पुतलीको फिर हँसता हुआ देख कर कृतार्थ हो। राह जाता हुआ बटोही यदि किसी अपरिचितको इस अवस्थामे देखे तो उसका हृदय रोने लग जाय और सहायताके

लिए सब कुछ करनेको उद्यत हो जाय । परन्तु, मै ही हूँ कि साक्षात् लक्ष्मी अचेत पड़ी है, और मेरे पास न पखा है न जल, कि इसे होशमे लानेका कोई उपाय ही कर सकूँ । (उठकर) वृक्षो, इसका ध्यान रखना, यह राजमहलोकी पली है । (जलकी खोजमे प्रस्थान)

(दूसरी ओरसे ललिताका प्रवेश)

ललिता—यही है मेरे प्रेमके मार्गका पत्थर, मेरी ऑखोका कॉटा, मेरी प्रसन्नताका डाकू, मेरे आनन्दका शत्रु । कौन बटोही ?

(एक बटोहीका प्रवेश)

बटोही—कौन ? एक स्त्री ?

ललिता—हॉ, एक स्त्री । मगर तुम कौन हो, जो ऐसे निर्जन वनमे, जहॉ मनुष्य-जीवनका चिह्न ढूँढनेसे भी मिलना असभव है, जहॉ यदि दिन-दोपहरको सूर्य्य डूब जाय तो उसका दिखाई देना भी कठिन है, मृत्युका ग्रास बननेके लिए आये हो ?

बटोही—मेरी मा भी मृत्युका ग्रास हो गई है, पिता भी कालका कौर हो गया है । घरमे भाई मर रहा है । और यहॉ मै भी मौतको पुकारने आया हूँ ।

ललिता—परन्तु कारण ?

बटोही—दरिद्रता !

ललिता—भारतवर्षकी भूमिमे यह सुनकर मुझे आश्चर्य होता है । जहॉ घर घर दूधकी नदियॉ बह रही है, अन्नके अम्बार लगे हुए है, चॉदी सोनेकी कमी नही, वहॉ भी क्या कोई पुरुष दरिद्र हो सकता है ? और उसकी दरिद्रता इस सीमा तक पहुॅच सकती है कि उसके पास कुछ खानेके लिए भी न रहे ?

बटोही—हो सकता है ।

ललिता—कैसे ?

बटोही—(तलवार खींचकर) ऐसे !

ललिता—बटोही !

बटोही—नही डाकू। (भूमिपर गिरा देना)

ललिता—तुम क्या चाहते हो ?

बटोही—तुम्हारी जान।

ललिता—मेरे पास कुछ नही है।

बटोही—मै रुपयेके लिए नही मारता।

ललिता—फिर ?

बटोही—तू पापिन है, पृथ्वीका भार है।

ललिता—यह आवाज मैने पहले भी सुनी है !

बटोही—हॉ सुनी है।

ललिता—परन्तु कहॉ ?

बटोही—आदित्यपुरमे।

ललिता—तो—

बटोही—मै चम्पा हूॅ।

ललिता—चम्पा ! चम्पा ! तू क्या कर रही है। तेरी तलवार ओह !—

चम्पा—चुप, पापिनी पिशाचिनी। तूने मेरी शान्ति भग कर दी है। आज तेरा रुपया मुझे सर्पकी नाई डस रहा है, पापकी कमाई देखकर हृदय कॉप रहा है। वह अपमान और यह अवनति देखकर भी तुझे शान्ति नही, जो तू इस अबलाके पीछे यहॉ भी आ गई है ?

ललिता—तो पापका प्रायश्चित्त करो। मुझे क्यो मारती हो ? हाथ जोड़ती हूॅ, मुझे छोड़ दो।

चम्पा—प्रायश्चित्त करूँगी। परन्तु, पहले तुझे मारकर और फिर सब बाते केतुमतीको सुनाकर। बस, अब समय नही, मरनेको तैय्यार हो।

वसन्तमाला—(नेपथ्यमे) जल मिल गया, परिश्रम सफल हुआ।

ललिता—(जोरसे चिल्लाकर) सहायता करो! सहायता करो!!

वसन्तमाला—कौन है? किधर है?

चम्पा—(गला दबाकर) चुप चाण्डाली!

ललिता—एक डाकू,—एक स्त्रीको मार रहा है,—सहायता—

चम्पा—वह तेरी सहायता नही कर सकती।

[वसन्तमालाका प्रवेश]

वसन्तमाला—सावधान!

चम्पा—मै डाकू नही।

(ललिताका चम्पाके नीचेमे निकलकर हॉफते हुए खड़े हो जाना)

चम्पा—(तलवार खेचकर) चाण्डाली!

वसन्तमाला—(पीछेसे तलवार खीचकर) खबरदार!

चम्पा—मै डाकू नही, चम्पा हूँ।

वसन्तमाला—चम्पा! तू यहॉ भी आ गई? क्या तेरे दिलको अभी तक सन्तोष नही मिला? देख यह अबला राजकुमारी भूमिपर अचेत पडी हुई है, और मै एक अँजुली जलके लिए वनमे घूम रही हूँ। परन्तु तू अभी तक—

चम्पा—वसन्तमाला!—

वसन्तमाला—उत्तरकी आवश्यकता नही, मै सब समझ गई हूँ।

चम्पा—एक बात—

वसन्तमाला—एक शब्द नही, जाओ।

(चम्पाका सिर झुकाकर प्रस्थान)

ललिता—वह राजकुमारीको मारना चाहती थी। मुझे यह सूचना मिल गई और मै इसे बचानेको ठीक समयपर पहुँच गई।

वसन्तमाला—मै राजकुमारीकी तरफसे तुम्हारे प्रति कृतज्ञता प्रकाश करती हूँ। परन्तु ललिता, चम्पाकी शत्रुताका कारण ?

ललिता—इसका कुछ पता नही लगता।

(पानीके छीटोसे अञ्जना चैतन्य होकर खडी हो जाती है।)

ललिता—प्रणाम करती हूँ राजकुमारी !

अञ्जना—कौन ललिता ! तुम और यहाँ ?

वसन्तमाला—आज आपके प्राण इसीकी कृपासे बचे है। दुष्ट चम्पा, जिसने उस दिन साम्राज्ञी केतुमतीके आगे झूठ कह दिया था कि मैने राजकुमारको महलमे नही देखा, डाकूके वेषमे यहाँ आई थी, और आपका वध करना चाहती थी। यदि यह भद्रा ठीक समय पर न पहुँच जाती, तो तुम्हारे प्राण बचने कठिन थे।

अञ्जना—ओह, यह कैसी नेक है और मै कितनी बुरी हूँ ! उस दिन मैने साधारण-सी बातपर इसका तिरस्कार करके इसे महलसे निकलवा दिया था। मुझे क्षमा करो, मैने तुम्हारा दोष किया है।

ललिता—नही राजकुमारी, नही, दोष मेरा ही था। मै उसे स्वीकार करती हूँ,—आपको इस अवस्थामे देखकर मेरी आत्मा थर्रा रही है।

अञ्जना—यह समयका फेर है और कुछ नही। कहो आदित्य-पुरमे सब कुशलसे है।

ललिता—कुशल ? जहाँसे आप ऐसी धर्मात्मा देवीको अपमान-सहित निकाल दिया जाय, वहाँ कुशल हो सकती है !

अञ्जना—तुम इस बनके रास्तोको जानती हो ?

ललिता—पूर्णतया।

अञ्जना—तो यह बता दो कि यह जो तीन रास्ते फटते है, उनमेसे किसपर जाना अच्छा होगा ?

वसन्तमाला—जिधर सिंह आदिका भय न हो।

ललिता—बाई ओर चले जाइए।

अञ्जना—अच्छा ललिता, परमात्माकी कृपा हुई तो फिर मिलाप होगा।

ललिता—परमात्मा वह दिन जल्द लावे !

[अञ्जना और वसन्तमालाका प्रस्थान।]

ललिता—जिस कामके लिए आई थी, वह पूर्ण हुआ। अब इनका बचना, कठिन ही नही, किन्तु, असम्भव है। परन्तु चम्पाका क्या किया जाय ! वह भण्डा फोडनेपर उतारू हो रही है। यदि उसने केतुमतीको सब कुछ बता दिया तो फिर,—अच्छा देखा जायगा। यह कभी नही हो सकता। (दूसरी ओरको प्रस्थान)

चौथा दृश्य

स्थान—दुर्मतिनगरका अन्तःपुर

समय—दोपहर

[प्रेमसुदरी अकेली खडी है।]

प्रेमसुन्दरी—परमात्मा ! परमात्मा !! कितनी भयावनी और हृदयविदारक आवाजे आ रही है और प्रत्येक आवाजके साथ सैकड़ो

मनुष्योके जीवन समाप्त हो रहे है। देशके बालको! दुःखके अश्रु बहाओ, तुम अनाथ हो जाओगे। देशकी स्त्रियो! शोक मनाओ, तुम बिधवा हो जाओगी। मकान उजाड़ हो जायँगे, बाजार वीरान हो जायँगे। परन्तु क्यो? जगलो और वनोमे हिंस्र जन्तुओकी कमी है, जो मनुष्य मनुष्यके जीवनपर आक्रमण करता चाहता है?

[एक सेवक आता है।]

प्रेमसुन्दरी—क्या समाचार है?

सेवक—रग बुरे है। हमारी सेना भाग रही है। (जाता है।)

प्रेम०—मैने बहुत कहा, परन्तु उन्होने न सुना। मैने बहुत अनुनय किया, परन्तु उन्होने स्वीकार न किया। अब वही होनेको है, जिसका मुझे भय था, और उन्हे विचार भी न था।

[सेवक आता है।]

प्रेम०—अब क्या हाल है? सेना रुकी?

सेवक—नही, सेना रोकनेका प्रयत्न करनेपर भी नहीं रुकी। पराजय समीप सरक रही है।

प्रेम०—राजा कहाँ है?

सेवक—बची-खुची सेनाको लड़नेके लिए तैय्यार कर रहे है।

(जाता है)

प्रेम०—तो, पराधीनता दासत्व और अपमानकी घड़ियाँ द्वारपर पहुँच गई, अब कोई दममे अन्दर आनेको है। अच्छा जो होना है हो जाय, चिन्ता किस बातकी है,—है, इतना कोलाहल! इसका कारण क्या हो सकता है?

[सेवक आता है।]

सेवक—सम्राज्ञी।

प्रेमसुन्दरी—क्या हुआ ? यह कोलाहल कैसा है ?

सेवक—शत्रु दुर्गके अन्दर आ गये।

प्रेमसुन्दरी—हमारी दुर्ग-रक्षक सेना ?

सेवक—भाग गई।

प्रेमसुन्दरी—अश्वपति ?

सेवक—कभीका साधु हो चुका।

प्रेमसुन्दरी—छोटा सेनापति ?

सेवक—मारा गया।

प्रेमसुन्दरी—तुम्हारा राजा ?

सेवक—पकड़ा गया।

प्रेमसुन्दरी—कुमार ?

सेवक—पता नहीं है।

प्रेमसुन्दरी—हा दैव ! मैं जानती थी कि इस अन्यायका कड़वा फल चखना पड़ेगा, परन्तु यह सुपनेमें भी ख़याल न आया था कि वह भयानक समय इतना निकट,—इतना समीप है। अदूरदर्शी मनुष्य बलके भरोसेपर संसारकी आवाज़की अपेक्षा न करके ऐसे काम कर डालता है जिन्हें न्याय, सभ्यता और समाज घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं; और समझता है, कि मुझे कोई एक कटु शब्द तक न कह सकेगा। परन्तु, परमात्माका न्याय-नियम कौन जाता है ? देखते देखते भूमि आकाश, और चिउँटी हाथी, बन जाती है, और इस प्रकारकी भयानक आँधी उठती है कि गर्वमें अंधा हुआ अन्यायी मनुष्य ऊँचे वृक्षके समान जड़से उखड़ जाता है। दुखिया प्रसन्न होते हैं और सताई हुई जिह्वायें ईश्वरका धन्यवाद करती हैं। परन्तु इस परि-

णामपर कुछ ऐसी आँखोको भी रोना पड़ता है जिनका वास्तवमे कोई दोष नही होता।

[वरुणका प्रवेश)

वरुण—प्रेमसुन्दरी !

प्रेमसुन्दरी—हमारी शक्तिके सामने खडा होनेका किसको साहस था ? अनगिनत सेना, प्रत्येक प्रकारके शस्त्र, भारतवर्षके सारे राजाओकी मैत्री, विश्वव्यापी कीर्ति ! क्या यह सब ऐसी वस्तुये न थी कि यदि कोई आक्रमण करता तो पिसकर सुर्मा हो जाता और उसे अपना बचाव करना कठिन हो जाता ? परन्तु अन्यायके दूषित कर्मने, गर्वके एक अधे कामने हमे आकाशसे भूमिपर पटक दिया और आज भारतवर्षके लोग यह सुनकर चौक उठेगे कि लकाद्वीपके साधारण राजा रावणने, केवल आदित्यपुरकी अल्प सेनाकी सहायतासे, दुर्मतिनगरकी शिक्षित सेनाको पराजित कर दिया।

वरुण—प्रेमसुन्दरी ! तू क्या बक रही है ?

प्रेम०—कौन ! राजा ! मुझे झूठी सूचना मिली थी ?

वरुण—नही, मै अभी छूट कर आया हूँ। बंदीगृहकी ताली कहाँ है ?

प्रेमसुन्दरी—जिसमे खर-दूषण बद है ?

वरुण—हाँ, वही। मै इस आक्रमणको व्यर्थ और विजयको निष्फल बनाना चाहता हूँ।

(प्रेमसुन्दरी ताली दे देती है।)

प्रेमसुन्दरी—परन्तु, किस तरह ?

वरुण—खर-दूषणको मृत्यु-दण्ड देनेसे।

प्रेमसुन्दरी—तुम क्या यह करोगे ?

वरुण—मै यह करनेके लिए ही जा रहा हूँ।

प्रेमसुन्दरी—(हाथ पकड़कर) ठहरो ! मेरी प्रार्थना—

वरुण—युद्धके समय स्त्रीका दर्शन करना भी पाप है।

(धक्का देकर प्रस्थान।)

प्रेमसुन्दरी—वह गया। परन्तु क्या वह यह कर सकेगा? वह अबोध है, नही जानता कि नदीके किस भयानक तीरपर, पहाड़की किस टूट पड़नेवाली चोटीपर चढ़ रहा है। वह नही जानता कि उसके पैरोके नीचे पापका ज्वालामुखी पर्वत अजगरके समान अपना मृत्युका-सा भयानक मुँह खोले खड़ा है। परमात्मा मुझे बल दे कि मै अपने देवताको इस पाप-कर्मसे बचा सकूँ। (प्रस्थान)

पाँचवाँ दृश्य

समय—प्रभात

[अञ्जना गा रही है।]

खोज रहे नैन तुम्हे आओ प्राणप्यारे।
रजनी गई भोर भई, चकई पिया पास गई,
आय देव दरस देहु, नयननके तारे॥ खोज रहे०॥
पंछी बन बोल रहे, डार डार डोल रहे,
देखने उदास मोहे करत है इशारे॥ खोज रहे०॥
दीन हुई छीन हुई, मानसे विहीन हुई,
मात पिता सास ससुर, गारियाँ निकारे॥ खोज रहे०॥
गौरव सब नष्ट भयो, निसदिन मोहि कष्ट भयो,
कौन-सी उमंग बची, मनको जो उभारे॥ खोज रहे०॥
आओ प्रभु धाओ प्रभु, दासीको बचाओ प्रभु,
तुम्हरे बिन जगतमाहि, भीर कौन टारे॥ खोज रहे०॥

सूर्य्य चढ़ता है, ढल जाता है। चन्द्रमा निकलता है, छिप जाता है। नदियॉ भरती है, सूख जाती है। परन्तु मेरे प्रारब्धमे न परिवर्तन होता है न कोई सुभीता दिखाई देता है। प्राणनाथको युद्धमे गये हुए आठ मास व्यतीत हो गये है। परन्तु अभी तक उनकी वापसीका कोई समाचार नही मिला।

[वसन्तमालाका प्रवेश]

वसन्तमाला—क्यो राजकुमारी! क्या विचार रही हो, सन्ध्या कर चुकी?

अजना—हॉ! सन्ध्याके पश्चात् उनके नामका स्मरण कर रही हूॅ, जिनका दर्जा जगत्पतिके बाद स्त्रीके लिए सर्वोपरि है। कहो, साधु महात्मासे बातचीत हुई?

वसन्तमाला—बहुत अच्छी तरहसे। राजकुमारी, जिस दुर्मति-नगरके राजाके साथ राजकुमार युद्ध करने गये है, ये महात्मा उसके सेनापति थे। युद्ध प्रारम्भ होनेसे पहले राजकुमार पवन वरुणकी राज-सभामे दूत बनकर गये, और उसे समझाया कि तुम्हारा यह काम राजनीतिके विरुद्ध है, इसलिए बेहतर यही है कि खर-दूषणको मुक्त कर दो, उनका राज्य फेर दो और युद्धका विचार मनसे निकाल दो। परन्तु बलके गर्वमे आकर वरुणने सेनापतिको आज्ञा दी कि पवनको बदी कर लो। सेनापतिने इसे स्वीकार न किया और वे अपने पदसे पृथक् हो गये। अब वही सेनापति यहॉ साधु बनकर ईश्वरकी आराधनामे लीन है।

अजना—तो वरुणने क्या उन्हे पकड लिया?

वसन्तमाला—नही, ये कहते है कि वे तलवार लेकर खड़े हो गये—

अंजना—तो वे कुशलसे है ?

वसन्तमाला—हाँ ।

अंजना—परमात्मा ! तेरी अपार दया ।

वसन्तमाला—तो उन्हे क्या उत्तर दूँ ? वे कहते है कि मै तुम दोनोको साथ ले चलता हूँ और पवनके सुपुर्द कर आता हूँ। इस बारेमे तुम्हारा क्या विचार है ?

अञ्जना—वसन्त, मेरा विचार क्या हो सकता है ? जो नाव समुन्दरमे हिचकोरे खा रही है, जो दीवार गिरनेको है, जो दीपक बुझनेको है, जो वृक्ष टूटनेको है, उसका विचार क्या हो सकता है ? जाओ। जाकर कहो, मै इस प्रस्तावसे सहमत हूँ।

वसन्त०—तो तैय्यारी करो, मै उनको तैय्यार होनेके लिए कहती हूँ।

अंजना—मै तैय्यार होती हूँ। तुम जाकर उनको तैय्यार करो।

(प्रस्थान)

वसन्तमाला—इस समय राजकुमारीके मुखपर कैसा तेज है ? आँखोमे कैसी प्रसन्नता है ? वह उदासी जो उसे प्रतिक्षण घेरे हुए थी, अब कहाँ है ? वह निराशा जो मेघके सदृश इसपर छाई रहती थी, अब कहाँ है ? आशा, तू कैसी मायाविनी है, मै तुझे नमस्कार करती हूँ।

[अश्वपतिका प्रवेश]

अश्व०—वसन्त, अञ्जनाका क्या विचार है ?

वसन्त०—महाराज, वह आपका प्रस्ताव स्वीकार करती है।

अश्वपति—तो वह चलनेको तैय्यार है ?

वसन्तमाला—हाँ महाराज। देखिए, वह आप आ रही है।

[अञ्जनाका प्रवेश]

अश्वपति—तो पुत्रि, तुम तैय्यार हो ?

अञ्जना—नही महाराज, मै जाना नही चाहती।

अश्वपति—यह क्या, अभी तो तुमने वसन्तमालाको कहा था कि मै तैय्यार हूँ।

वसन्तमाला—यह क्या राजकुमारी, अभी तो तुम इस बातके पक्षमे थी। अब पल-भरमे क्या हो गया ?

अञ्जना—मेरा विचार बदल गया है।

अश्वपति—परन्तु क्यो ?

अञ्जना—वे इस समय युद्ध-भूमिमे यशःप्राप्तिका काम कर रहे है, देशकी सेवा कर रहे है, ससारमे अपने देशका सर ऊँचा कर रहे है, मै जाकर उनके हृदयको दूसरी ओर कर दूँगी तो सारा काम चौपट हो जायगा; उनके अद्वितीय बलमे न्यूनता आ जायगी, पराक्रम थोडा हो जायगा। मै यह पाप-कर्म नही कर सकती,—अपने सुखपर देश और जातिके यशको निछावर नही कर सकती। इसी निर्जन वनमे रहूँगी, दुःख और कष्ट सहूँगी। जानती हूँ, कि चाहूँ तो इस दु.खका अन्त हो सकता है, परन्तु एक भारत-ललनामे इतना स्वार्थ नही हो सकता कि अपने लिए देशको बदनाम कर दे।

वसन्तमाला—राजकुमारी, मै इतने वर्षोंसे आपके साथ हूँ, आपके सद्गुणोपर मोहित हूँ, परन्तु यह आशा न थी कि आपमे इतना अधिक त्याग भी है, इतना धैर्य्य भी है।

अश्वपति—वसन्तमाला, तू धन्य है, जो इस पवित्रताकी देवीकी संगतिमे है, यह वन धन्य है जहाँ वह अपने काले दिन गुजार रही

है और मै भी धन्य हूँ जिसकी कुटियामे यह निवास कर रही है। रहो देवी, इसी स्थानमे रहो। इस वनके काँटे तुम्हारे लिए पुष्प बने, हिंस्र पशु तुम्हारे स्नेह-भाजन बने।

वसन्तमाला—ऐसी शुभ भावनाओ और कामनाओकी पुतलीपर कैसी घोर आपत्ति पडी है! परमात्मा! इसकी जल्दी सुन।

अश्वपति—बेटी, पिञ्जरेमे कोयलको डाला जाता है, कौएको नही, कोल्हूमे ईखको पीड़ा जाता है, सरकण्डेको नही, शिलापर चन्दनको रगडा जाता है, पत्थरको नही, अग्निमे घीको जलाया जाता है, तेलको नही। इसी प्रकार प्रकृति माता भी कष्टके लिए इस खोटे ससारमेसे असाधारण आत्माओका ही चुनाव करती है। (प्रस्थान)

अञ्जना—वसन्तमाला, प्रकाश दिखाई दिया था, अब फिर अन्धकार हो गया।

वसन्तमाला—इस अन्धकारके पीछे अनन्त प्रकाश आ रहा है।

छट्ठा दृश्य

स्थान—दुर्मतिनगरका बन्दीगृह।

समय—रात्रिका तीसरा पहर

[अकेला वरुण]

वरुण—हृदय, तू अभी तक क्यो धड़क रहा है? अभिमान, राज्य, स्वाधीनता, प्रभुत्व सब कुछ जा चुका है। अब शरीरमे क्या बाकी है? थोड़ा-सा रक्त, जिसे लेनेके लिए प्रातःकालके सूर्य्यकी पहली किरणके साथ वधिक आनेवाला है। फिर भी तू किसके लिए धड़क रहा है? पागल! दीवाने! दुनिया द्वार बद

करके सो रही है, लोग सुखके स्वप्नमे मग्न है, और उस व्यक्तिका किसीको ध्यान तक नही जो कभी उनपर राज्य करता था, परन्तु, आज कैदखानेमे पडा हुआ अपने अन्तिम समयकी प्रतीक्षा कर रहा है। तिसपर भी तू क्यो धड़क रहा है?—बच जाऊँगा, बचा लिया जाऊँगा?—नही, यह असम्भव है। आशा अपने शिकारको बरगला कर एकान्त स्थानमे ले जाती है। पहले अपने दगाबाज़ हाथोसे उसके सामने अतिशय मनोहर चित्र बनाती है, जिसका ऊपरी भाग बादलोके अन्दर होता है, और उनके सफेद किनारो पर सुनहले अक्षरोमे उसका नाम लिख देती है। यह देखकर जब ऑखे मस्त हो जाती है, तब, अपनी जगन्मोहिणी वीणा निकालकर उसपर खुशामदके मधुर गीत गाती है जिन्हे सुनकर कान दूसरी आवाजोकी तरफसे बहरे हो जाते है। फिर, विचारको बेहोश करती है, बुद्धिको परे हटाती है और मनुष्यको पूर्णतया अपने वशमे कर लेती है। एकाएक भूकम्पका अनुभव होता है,—फिर वह चित्र मिट जाता है, राग बद हो जाता है, और आशा अपने शिकारको सिहासनसे भूमिपर पटक देती है।—कौन? कौन आ रहा है? क्या प्रातःकाल हो गया? हृदय तू अब भी धड़क रहा है!—मूर्ख दीवाने, तेरे लिए कोई आशा नही।

[प्रेमसुन्दरीका प्रवेश]

प्रेमसुन्दरी—ऑखो! तुम क्या देख रही हो?

वरुण—'आशा'के बाद जीवन-भरमे मैने तुझसे धोखा खाया है। तू भी उसीके समान मनोहर, उसीके समान मधुर, परन्तु अन्तमे उसीके समान डाकिनी निकली है, और इस समय मै तुम दोनोको देखना नही चाहता,—जा! दूर हो!! मुझे तेरी आवाजसे भय लगता है।

प्रेम०—नाथ !—

वरुण—हत्यारिणी, मुझे आरामसे मरने दे और मेरे जीवनकी अन्तिम घडियोको शोकातुर न कर।

प्रेमसुन्दरी—दूसरेका घर बचाते बचाते मैने अपना सर्वस्व लुटा दिया। हाय नाथ, अगर मै जानती कि इसका परिणाम यह होगा तो अपने हाथोको काट देती, आँखोको अधा कर लेती।

वरुण—अपने पतिको शत्रुके हाथ देनेवाली ! उसकी मृत्युका सामान करनेवाली ! खर और दूषणके बदलेमे तूने मेरा यह हाल किया है जो देख रही है, और जो होने वाला है सो अभी देख लेगी।

प्रेमसुन्दरी—(ऊपर देखकर) आकाश ! आज हम भूमिपर है, क्या वहाँ भी स्थान न मिलेगा ?

[पवनका प्रवेश]

प्रेमसुन्दरी—कौन ?

पवन—महारानी ! महाराज प्रह्लाद विद्याधरका पुत्र प्रणाम करता है।

प्रेमसुन्दरी—क्यो पवन ! असत्यवादी, पतित, नराधम, यह तेरी करतूत है जो मै अपने देवताके मुखसे, जिसने कभी मुझे तीखी दृष्टिसे न देखा था, जिसने मुझे कभी कठोर वचन न कहा था, वे बाते सुन रही हूँ कि जिनसे मेरा हृदय टूट रहा है। तूने क्या मुझसे प्रतिज्ञा नही की थी कि महाराजका बाल तक बॉका न होगा ? क्या तूने मुझको विश्वास नही दिलाया था कि उनकी गिरफ्तारी उनकी भलाईका रास्ता साफ करेगी ? तेरे कथनपर एक स्त्रीने विश्वास किया, दो प्राणी बचाये, और उसका परिणाम यह है कि

उसके हृदयपर वह चोट पहुँचनेको है जिससे उसका बचाना असम्भव है। तू मुझे प्रणाम करता है, मै तुझे धिःकारती हूँ।

पवन—महारानी—

प्रेमसुन्दरी—मै कुछ सुना नही चाहती। प्रतिज्ञा याद कराती हूँ।

पवन—पहरेदार!

[पहरेदारका प्रवेश]

पवन—महाराजको मुक्त कर दो।

पहरेदार—मुक्त कर दूँ? इन्हे तो आज ही, अभी—

पवन—(गर्जकर) बस तुम नौकर हो। यह व्यक्ति मेरे सुपुर्द है, छोड दो।

(पहरेदार वरुणकी जञ्जीरे खोल देता है।)

पवन—जाओ महाराज, आप स्वाधीन है। जाइए महारानी, प्रतिज्ञा पूर्ण हुई।

प्रेमसुन्दरी—मैने क्रोधमे तुम्हे बुरा भला कहा है, मुझे क्षमा करो।

पवन—प्रतिज्ञाकी पूर्तिमे विलम्ब हुआ है, उसके लिए मै क्षमाप्रार्थी हूँ, महारानी!

वरुण—प्रिये, निराशामे मैने तुमको जो वचन कहे है, अब उन्हे वापस लेता हूँ, मुझे क्षमा करना।

प्रेमसुन्दरी—इसकी आवश्यकता नही प्राणनाथ!

पवन—यहाँसे अब आप शीघ्र चले जायँ, मै प्रार्थना करता हूँ।

प्रेमसुन्दरी—परन्तु पुण्डरीक?

पवन—वह आपसे पहले छोड़ा जा चुका है। आप चले जायँ।

(राजा वरुण और रानी प्रेमसुन्दरीका प्रस्थान)

पवन—विजय क्या सभीको अधा कर देती है, जो आज रावण इतने अत्याचारपर तुला हुआ है कि वरुण और उसके पुत्रको मर-

चाना चाहता है ? मालूम होता है कि पापका पथ विजयके बहुत निकट,—उससे बिल्कुल मिला हुआ है। यदि यही बात है तो परमात्मा मुझको भविष्यमे विजयी न बनाना, मै विजय नही चाहता।

[रावणका प्रवेश]

रावण—पवन, तुम यहॉ हो ? ऐसे समयमे ?

पवन—हॉ राजन्, आप भी तो यहीं है।

रावण—मुझे तो यहॉ काम है।

पवन—मुझ भी कामहीके लिए यहॉ आना पड़ा है।

रावण—मै वरुणको क़त्ल कराने आया हूॅ।

पवन—मै उसे छोड़ने आया था।

रावण—नही, यह असम्भव है। उसने न्याय, सभ्यता और प्रकृतिके नियमको पद-दलित किया है। उसे मृत्यु-दण्ड मिलना चाहिए, और मिलेगा। वह कहॉ है ?

पवन—मैने उसे छोड़ दिया है।

रावण—छोड़ दिया है ?

पवन—हॉ, छोड दिया है।

रावण—मेरी आज्ञाके विना, अपनी इच्छासे ?

पवन—हॉ राजन्, आपकी आज्ञाके विना।

रावण—तुम्हारा इतना साहस है ?

पवन—उसे चूॅकि मैने ही कैद किया था, इसलिए छोड़नेका अधिकार भी मुझे प्राप्त था।

रावण—और पुण्डरीक ?

पवन—उसे भी छोड़ दिया।

रावण—क्यो ?

पवन—वह अभी बालक है, न्याय उसे कोई दण्ड देना स्वीकार नही कर सकता।

रावण—यह मनमानी कार्य्यवाही तुम इस तरह करते हो, मानो तुम ही राजा हो और मै कोई नहीं हूँ।

पवन—नही राजन्, नही, जिस समय वरुण खर और दूषणको मारनेके लिए जा रहा था, उस समय, उसकी स्त्रीने, मुझसे यह प्रतिज्ञा लेकर कि उसे छोड़ दिया जायगा, उसे मेरे हाथ पकड़वा दिया था और मैने खर-दूषणके प्राण बचानेके लिए यह प्रतिज्ञा कर दी थी।

रावण—युद्ध और प्रेमके समय सब कुछ धर्म है। इसलिए झूठी प्रतिज्ञा पाप नहीं।

पवन—यदि युद्ध और प्रेममे धर्म-अधर्म एक है, तो पापकी ससारमे हस्ती नही, क्यो कि ससार राग-द्वेषके सिवाय और कुछ नही है। इसलिए मेरी प्रार्थना है कि वरुणपर, नही तो मुझपर ही, कृपा कीजिए और उसे क्षमा कर दीजिए।

रावण—कुमार, तुमने दण्डके योग्य काम किया है। परन्तु तुम्हारे पिताकी मैत्रीके विचारसे मै तुम्हे क्षमा करता हूँ। मगर वरुणका बचना असम्भव है। मै उसे अभी पकड मँगवाता हूँ। सावधान, अब मै एक नहीं सुनूँगा।

(जानेको तैय्यार होता है। पवन रोकता है।)

पवन—नही महाराज, नही। यह नही हो सकता।

रावण—तुम्हारी इतनी मजाल ?

पवन—प्रतिज्ञाके लिए सब कुछ करना होगा राजन्!

रावण—तो तलवार निकालो।

पवन—आप मेरे पिताके मित्र है, इसलिए मुझे आपपर आक्रमण करना नही सोहता।

रावण—तलवार निकालो! तलवार निकालो!

पवन—नही राजन्, यह कैसे हो सकता है?

रावण—तो रास्ता छोड दो।

पवन—उसके लिए आपको मेरी लोथपरसे गुजरना होगा।

रावण—भीरु! निकम्मे!! इस युद्धमे तेरा सिर फिर गया है। मै उसे ठीक करूँगा। तलवार निकाल।

पवन—नही, यह तलवार आपपर आक्रमण नही करेगी।

रावण—अच्छा, तो फिर मेरा—(तलवार मारना चाहता है)

[एकाएक प्रहसितका प्रवेश]

प्रहसित—सावधान!

रावण—बलिदानके बकरे! क्या तू भी मरना चाहता है?

पवन—प्रहसित, हट जाओ।

प्रह०—राजकुमार, मेरे होते हुए आपके शरीरतक कोई शख्स नही पहुँच सकेगा।

रावण—सिपाहियो, पकड लो।

(रावणके दस सिपाहियोंका आक्रमण और प्रहसितको घेर लेना।)

प्रहसित—अच्छा! यह तो यही सही।

[प्रहसित ताली बजाता है। पचीस सिपाही आ जाते हैं।]

प्रह०—सिपाहियो, राजा रावणको और उसके इन दस साथियोको बाँध लो। (सिपाही लडनेको तैयार होते हैं।)

[एकाएक खरका प्रवेश]

खर—ठहरो! मनुष्य-जीवन इतने सस्ते नही है कि उनको इस प्रकार नष्ट कर दिया जाय। राजन्, यह आप क्या कर रहे है? जिस भारतवर्षके एक वीरने आपका इस युद्धमे साथ दिया है, जिसने रण-भूमिमे अद्भुत पराक्रम दिखाया है, जिसकी सेनाने हमे विजय दिलाई है, जिसके बाहुबलने हमारे प्राण बचाये है, उसीके मारनेको तलवार निकालते हुए, क्या लज्जा नही आती? जिसकी प्रशसाके शब्द अभी वायु-मण्डलमे गूँज रहे है, जिसकी माहिमाके गीत अभी आकाशके पर-माणुओमे थरथराहट पैदा कर रहे है, जिसकी विजय-मालाके फूल अभी कुम्हलाने नही पाये, जिसकी वीरताकी याद अभी भूलने नही पाई, उसी देवतापर आक्रमण करते हुए क्या हृदयमे सकोच नही होता? वास्तवमे यदि ये तुम्हारी सहायता न करते तो हम दोनो भाई बदी-गृहमे सड़-सडकर मर जाते, हमारा राज्य सदाके लिए हाथसे जाता रहता, और आप लंकामे बैठे बैठे हमारी यादमे आहे भरते—मनुष्य इतना नीच, इतना कृतघ्न, हो सकता है, यह मुझे स्वप्नमे भी विचार न था।

रावण—खर, यह तुम कह रहे हो?

खर—दुख होता है? सोचते होगे कि इसे छुडानेके लिए मैने इतना साहस किया, इतनी दूरीसे चलकर आया, और युद्धमे हजारो वीरोका रक्त बहाकर वसुन्धरा माताको प्रसन्न करके विजय प्राप्त की। इसे मेरी अभ्यर्थना करनी चाहिए थी, जिसके स्थानमे यह फटका-रके शब्द सुन रहा हूँ। परन्तु, क्या यही विचार इन महानुभावके हृदयमे न उठ रहे होगे? मेरा कथन तीखा है, परन्तु सच्चा है। मगर

आपका व्यवहार सत्य और नर्मी दोनोके पदसे गिरा हुआ है, इसलिए मेरा कहा स्वीकार करो और इस वीरके आगे गिडगिड़ाकर क्षमाके लिए प्रार्थना करो।

रावण—खर, तुम मेरे सच्चे हितैषी हो। ससारमे मीठा सत्य कहनेवालोकी कमी नही, कमी उनकी है जो कड़ुवा सच कहनेमे भी नही हिचकिचाते। पवन, मै तुम्हारा ऋणी हूँ। इस समयके कटु वचनोके लिए मुझे क्षमा करो।

पवन—नही राजन्, नही, आप मेरे सम्मानके पात्र है। परन्तु यौवन अवस्थाके गरम रुधिरके जोशमे मेरे मुखसे अनुचित वचन निकल गये है, उनके लिए मुझे शोक है। छोटा जानकर क्षमा कर दीजिए।

रावण—तुम जितने वीर हो उतने ही नेक और उदार भी हो। आओ, इस पलकी शत्रुताको विस्मृतिके घोर अन्धकारके प्रवाहमे विसर्जन कर दो और पहलेकी तरह फिरसे वही पवन बन जाओ।

पवन—राजन्, मेरा हृदय आपकी ओरसे बिल्कुल शुद्ध है।

रावण—सिपाहियो, तलवारे म्यानमे करो और बाहर चले जाओ। (सिपाहियोका प्रस्थान) पवन, मै तुम्हारी प्रतिज्ञाके अनुसार न केवल वरुण और उसके पुत्र पुण्डरीकको क्षमा करता हूँ प्रत्युत, उसका राज्य भी लौटाये देता हूँ।

पवन—राजन्, इस समय तक उसका सर आपके आगे झुका हुआ था, आपके इस व्यवहारसे अब उसका हृदय आपकी मुट्ठीमे हो जायगा।

सातवाँ दृश्य

(**स्थान**—आदित्यपुरके राजमहलका बाहरी भाग)

समय—आधी रात

(ललिता और विद्युत्प्रभ)

ललिता—क्या कहते हो ? अञ्जना बच गई ?

विद्युत्प्रभ—हॉ, बच गई।

ललिता—मै उसे खुली मृत्युके मार्गपर डाल आई थी, यह असम्भव है।

विद्युत्प्रभ—मैने उसे अपनी ऑखोसे देखा है, इस लिए यह सत्य है।

ललिता—तुम्हे धोखा हुआ है।

विद्युत्प्रभ—मै धोखा खानेवाले दिन उत्पन्न नही हुआ।

ललिता—तो सारा प्रयत्न निष्फल गया, वर्षोका परिश्रम मिट्टीमे मिला।

विद्युत्प्रभ—साहस करो, धैर्य्य धरो और सफलताके साधनोका प्रयोग करनेके लिए तैय्यारियॉ करो।

ललिता—सफलताकी सुन्दर भूमि मेरे आगेसे खिसक गई है, मुझे कुछ दिखाई नही देता।

विद्युत्प्रभ—साहस करो, तो सब कुछ हो जायगा।

ललिता—वह अब मुझमे नही रहा। मेरा प्रारब्ध खोटा है।

विद्युत्प्रभ—यह तुम्हारी भूल है। प्रत्येक मनुष्यका प्रारब्ध उसके अधीन है।

ललिता—परमात्मा मुझे रास्ता दे।

विद्युत्०—परमात्मा उनकी और केवल उनकी सहायता करते है, जो अपनी सहायताके लिए अपने हाथ-पैर हिलाते है, और जो हृदय हार देते है, साहस छोड देते है, उनके लिए अपमानका जीवन और मृत्यु दोनो भुजाये फैला देते है ।

ललिता—प्रतीकार ! प्रतीकार ! मै प्रतीकार चाहती हूॅ ।

विद्युत्प्रभ—अर्थात् ?

ललिता—अञ्जनाकी मृत्यु ।

विद्युत्प्रभ—वह परसो प्रात.कालके सूर्य्यकी प्रथम किरणसे पहले हो सकती है । परन्तु—

ललिता—कहो, बोलो, मै निराशा और क्रोधसे पागल हो जाऊँगी ।

विद्युत्प्रभ—तुम्हे हाथ हिलाने होगे ।

ललिता—मै सब कुछ करूँगी ।

विद्युत्प्रभ—(तलवार निकाल कर) यह तलवार है ?

ललिता—हॉ ।

विद्युत्प्रभ—और इसकी धार तेज है ?

ललिता—सो भी है ।

विद्युत्प्रभ—उसने तुम्हारा जीवन अन्धकारमय बनाया है ?

ललिता—ठीक ।

विद्युत्प्रभ—तुम उसका निवासस्थान जानती हो ?

ललिता—नही ।

विद्युत्प्रभ—झूठ बोल रही हो । वही कुटिया—

ललिता—जानती हूॅ ।

विद्युत्प्रभ—(तलवार देखकर) थोडी-सी हृदयकी कठोरता और हाथकी एक हरकत, बस।

ललिता—नही नही, यह मुझसे न हो सकेगा, मै स्त्री हूॅं।

विद्युत्प्रभ—फिर, यह विचार छोड दो।

ललिता—तुम?

विद्युत्प्रभ—मै पुरुष हूॅं और पुरुष स्त्रीपर आक्रमण करे, इससे अधिक नीच कर्म त्रिलोकमे कोई नही। मै पापी हूॅं, कुकर्मी हूॅं, काले हृदयवाला हूॅं, परन्तु स्त्रीपर हाथ उठाऊॅं, यह असम्भव है। अञ्जनाने तुम्हे हानि पहुॅचाई है, उससे तुम समझो। पवनने मेरा शिकार छीना है, उससे मै बदला लूॅंगा।

ललिता—तो मै तैय्यार हूॅं।

विद्युत्प्रभ—समय बीत रहा है, रात्रि जा रही है। चिडियोके जागनेसे पहले अपने अपने कामपर रवाना हो जाओ।

ललिता—और तुम?

विद्युत्प्रभ—यह फिर पूछना। समय बीत रहा है।

[ललिताका प्रस्थान]

विद्युत्प्रभ—निद्रा और मृत्युका मेल निराला खेल होगा जो आज पशुमुखा वनमे अभिनीत होनेवाला है। परतु उन्मादिनी, क्या तू समझती है कि मेरी केवल अञ्जना और पवनके रक्तपातसे सतुष्टि हो जायगी? ओह नही, मेरा तिरस्कार करनेमे तूने भी कमी नही की। इस लिए अञ्जनाका जीवन समाप्त करके अपने लिये भी तैय्यार रह। अस्तु। ललिता अञ्जनाकी ओर गई है, मै पवनके लिये कुचक्र रचूॅं।

(प्रस्थान)

[गुप्त स्थानसे चम्पा निकलती है।]

चम्पा—कुचक्र रचो और अपनी सहायताके लिए ससार भरके पतित नराधम इकट्ठे कर लो, परन्तु स्मरण रक्खो कि निर्दोषका एक बाल भी बॉका न हो सकेगा। जो जगदाधार सूर्यचन्द्रमा तारागण आदिको नियमानुसार चलाता है और उनको सक्रमणकी आज्ञा नही देता, वही सब कुछ देखनेवाला, सब-कुछ सुननेवाला और सब-कुछ जाननेवाला दयालु न्यायकारी प्रभु उन निर्दोषोकी रक्षाके लिए अपना हाथ बढायगा, और उसका पापियोका सिर कुचलनेवाला डण्डा इन पिशाचोके कुचक्रको छिन्न-भिन्न कर देगा,—परन्तु इस समय क्या कुछ मेरा भी कर्तव्य नही है? यह अग्नि प्रचण्ड करनेमे क्या मैने ललिताकी सहायता नही की, और क्या इसका प्रायश्चित्त करनेके लिए मेरा अन्त:करण मुझे जोर-जोरसे प्रेरणा नही कर रहा है? बहुत देरके बाद आज यहॉ आई थी कि महारानी केतुमतीके चरणोमे सिर रखकर अपना पाप स्वीकार कर दूॅगी। परन्तु, इस स्वीकृतिका क्या फल होगा यदि ललिताने उसकी हत्या कर दी,—परन्तु नही, यह नही हो सकता। मै जाऊॅगी और अञ्जनाके लिए अपने प्राण निछावर कर दूॅगी। जो अग्नि प्रचण्ड की है उसे बुझाऊॅगी। जो पाप कर चुकी हूॅ, उसका प्रायश्चित्त करूॅगी। और अपने पापसे भरे हुए जीवनपर कर्त्तव्यकी मृत्युकी मोहर लगाऊॅगी। कल रातके तारोके साथ मै अधकारमे लीन हो जाऊॅगी, और फिर अपना काला मुॅह संसारके सम्मुख न करूॅगी। तारे फिर निकलेगे, बिजली फिर चमकेगी, परन्तु चम्पाका जीता जागता शरीर आकाशके नीचे और पृथ्वीके ऊपर कभी दिखाई न देगा।

चौथा अंक

पहला दृश्य

स्थान—आदित्यपुरका राजमहल

समय—दोपहर

[दास-दासियाँ धूपमे बैठे बातचीत कर रहे हैं ।]

एक—मेरा कहा सच निकला ।

दूसरा—क्या ?

पहला—अञ्जना निर्दोष थी ।

दूसरा—निर्दोष थी ?

तीसरा—हाँ निर्दोष थी ।

चौथा—कैसे पता लगा ?

पहला—स्वय राजकुमार कह रहे है ।

दूसरा—मैने अपने कानोसे सुना है ।

तीसरा—तो अब महारानीका क्या हाल है ?

पहला—रो रही है ।

चौथा—और राजकुमार ?

पहला—मिट्टीकी मूर्ति बने बैठे है ।

तीसरा—तो राजकुमारी अजनाका दु:ख कट गया ?

चौथा—वह तो कभीका कट चुका है ।

पॉचवॉ—क्या मतलब ?

चौथा—जिस दिन उनको यहॉसे निकाला गया था, उन्होने उसी दिन अपमानके कारण आत्म-हत्या कर ली थी ।

पहला—यह गलत है, असलमे बात यह है कि वे अपने देश गई थी और वहॉ उनके पिताने उन्हे मरवा डाला ।

दूसरा—वाह यार, तुम तो बड़ी बेपरकी उडाते हो ।

पहला—क्यो, क्या झूठ है ?

दूसरा—नही तो क्या सच है ?

तीसरा—अञ्जना देवी है, परमात्माने उसके काले दिनोको बिता दिया है ।

दूसरा—परन्तु, अब वह है कहॉ ?

तीसरा—क्यो ? महेन्द्रपुरमे होगी ।

दूसरा—उनकी मृत्यु हुए आठ मास वीत चुके ।

तीसरा—मृत्यु हो चुकी ?

दूसरा—हॉ, हो चुकी ।

तीसरा—कैसे !

दूसरा—प्रसूतिके ज्वरसे ।

तीसरा—शोक ! यदि वे आज जीवित होती !

चौथा—दुनिया भी क्या स्थान है, जिसमे पुण्यात्माको इतने सकट सहने पड़ते है ! तनिक विचार करो, हम लोग गरीब है फिर भी इन दुःखभरी बातोपर ऑखोसे ऑसू छलक पड़ते है ! तो, उसका क्या हाल हुआ होगा जो राज करती थी, महलोमे रहती थी, फूलोपर सोती थी । काले वस्त्र पहनकर उसका हृदय क्या कहता होगा ?

पॉचवॉ—और नेक थी ।

पहला—और पतिव्रता थी ।

दूसरा—और परित्यक्ता थी ।

तीसरा—और सहनशीला थी।

पहला—पर इस सारी कलहका मूल ललिता है।

पॉचवॉ—उसीने महारानीको बहका दिया था।

पहला—वास्तवमे यह आग उसीने लगाई थी।

दूसरा—परन्तु क्यो ?

तीसरा—यह कौन जान सकता है, दिलकी बात जानना आसान नही।

चौथा—वह आ रही है।

पॉचवॉ—डायन चुडेल।

पहला—पिशाचिनी कलमुँही।

दूसरा—झूठी फिसादन।

तीसरा—दुष्ट, कूबरी।

चौथा—जरा, आ लेने दो।

[ललिताका प्रवेश]

पहला—क्यो री। यह आग तूने कैसे लगा दी थी ?

ललिता—आग ?

तीसरा—ॲगूठीको तूने ही कहा था कि नकली है ?

ललिता—नकली है ?

चौथा—जिसने कहा था कि मैने राजकुमारको नही देखा और राजकुमारी अञ्जना झूठ कह रही है, वह चम्पा तेरी ही सखी थी ?

ललिता—मेरी सखी ?

पॉचवॉ—महारानीको तूने सूचना दी थी कि अञ्जना भागनेकी तैय्यारियॉ कर रही है ?

ललिता—भागनेकी तैय्यारियॉ ?

पहला—क्या आश्चर्यजनक उत्तर देती है !

दूसरा—मानो कुछ जानती ही नही।

तीसरा—और इस मामलेमे इसका हाथ ही नही !

चौथा—ऐसी स्त्री मैने आज तक नही देखी।

ललिता—परन्तु तुम्हारा प्रयोजन क्या है ?

पॉचवॉ—प्रयोजन यही—

पहला—कुटिला—

दूसरा—(लात मारकर) तुम्हारा यह—

दूसरा—(लकडी मारकर) पुरस्कार है।

ललिता—भाइयो—

तीसरा—(मारकर) बस चुप रहो।

ललिता—मै—

चौथा—चुप।

ललिता—देखो।

पॉचवॉ—हम तुम्हारा बकवाद नही सुनेगे।

(सब मारते हैं, ललिता दुहाई देती है राजकुमारको आते देखकर दास एक तरफ और ललिता दूसरी तरफ चली जाती है।)

[राजकुमार धीरे धीरे प्रवेश करते हैं।]

पवन—वह क्या कहती होगी ? दुनिया ऐसा अन्याय कर सकती है, स्त्रीका हृदय ऐसा पत्थर बन सकता है, राजा इस प्रकार अपनी रानीके वशमे हो सकता है, और मनुष्य ऐसा भयानक धोखा खा सकता है, इसकी उसे आशा न होगी। मेरे घरसे निकल गई, निकाली गई। जब उसे काले वस्त्र पहिनाये गये होगे, जब लोग

उसपर अँगुलियाँ उठाते होगे, उस समय उसके कोमल हृदयमे भाले चुभते होंगे। परन्तु यह सब मेरा दोष है, इसका उत्तरदायित्व मेरे ही कन्धोपर है।

[प्रहसितका प्रवेश]

प्रह०—राजकुमार—

पवन—जिस बातका खटका था वह हो गई।

प्रह०—(घबराकर) क्या अब वे ससारमे नही है ? क्या उनकी मृत्यु हो गई ?

पवन—वह मृत्युको अधिक पसद करती।

प्रह०—तो अभी जीती है ?

पवन—यह नही कह सकता।

प्रह०—राजकुमार !

पवन—आश्चर्य न करो, मै सब बात सुना देता हूँ। मै जब युद्ध भूमिमे जाते समय मिलनेके लिए आया था और उसके पास गुप्त रीतिसे तीन दिन रहा था, तब मुझे उसने अनुरोध किया था कि माता-पितासे मिलते जाइए। मैने इसे स्वीकार न किया, परन्तु तुम्हारे कथनानुसार अपनी अँगूठी उसके सुपुर्द कर आया। माता पितासे न मिलनेका कारण यह था कि वे कही यह न समझ ले कि मै युद्धसे डरकर भाग आया हूँ।

प्रह०—फिर ?

पवन—उसपर दुराचारका संदेह किया गया, वह घबरा गई। पहले तो जबानी कहा कि पवन आया था, परन्तु जब माताजीने स्वीकार न किया तो मेरी दी हुई अँगूठी दिखाई। परन्तु माताजीने इसपर भ

विश्वास न किया और उसे पातकी रथमे बैठाकर रत्नपुरसे बाहर निकाल दिया। प्रहसित !

प्रह०—राजकुमार !

रवन—कहो, बोलो, बताओ मै क्या करूँ। यह सब मेरा दोष है। यदि मै उसकी बातपर ध्यान देता, उसका कहना स्वीकार कर लेता तो यहाँ तक नौबत न आती। प्रथम बारह बरस तक उसको अकेले महलमे फैक दिया। वह धोये हुए फूलके समान निर्मल थी, परन्तु उसे कसूरवार समझा और अब जब उसे आशाकी किरण दिखाई दी तो माताने भविष्यकी सुन्दर आशाके पुष्पोको निर्दयतासे मसल डाला, यह मेरा दोष है। सोचा था युद्धसे यश प्राप्त करके जा रहा हूँ, अञ्जनाके हर्ष और आनन्दकी सीमा न होगी। परन्तु मनुष्य कुछ सोचता है और दैव कुछ और ही कर डालता है। मेरा सुख-स्वप्न टूट गया, हृदयमे मानो किसीने भाला उतार दिया। कहो, अब मै क्या करूँ। मुझे कुछ दिखाई नही देता।

प्रह०—राजकुमार ! अधीर न होओ। ससारमे अनेक आपत्तियाँ आती है, उनको सहना ही वीरत्व है।

राजकुमार—क्षत्रियका बालक न आपत्तियोसे डरता है, न दुःखोसे घबराता है। परन्तु यह वज्रपात, यह घोर वेदना असह्य है। वह क्या कहती होगी, जब दुनियाकी घृणित दृष्टि उसके स्वच्छ मुखपर पड़ती होगी। जब उसपर झूठा दोप लगाया जाता होगा, जब उस निर्दोषीको ताने दिये जाते होगे, उस समय उसका क्या हाल होता होगा। ओः मेरा हृदय दुःखसे फट जायगा, मै इस विषयपर विचार तक करनेमे असमर्थ हूँ।

प्रह०—धैर्य्य धरो राजकुमार, धैर्य्य धरो। जो हो चुका है उसका वापस लौटना असम्भव है। तुम हाथ मल रहे हो, समय बीत रहा है और उसके बचावकी संभावना प्रतिक्षण कम हो रही है। इस लिए मेरी सम्मति है कि—

राजकुमार—कहो कहो, मै उसे सहर्ष स्वीकार करूँगा। मेरी बुद्धि इस समय काम नही करती, वह अंधकारमे है। तुम उसे प्रकाशमे चलनेकी सहायता दो।

प्रह०—वे अब कहाँ होगी?

राजकुमार—कहाँ होगी?

प्रह०—महेन्द्रपुरमे।

राजकुमार—ठीक है, महेन्द्रपुरमे। ससुरालसे दुतकारी हुई अबला सिवा माताके पास जानेके और कहाँ जा सकती है? तो अब हमे महेन्द्रपुर चलना चाहिए।

प्रह०—परमात्मा इस सरल हृदय राजकुमारको धैर्य्य दे। (दोनोका प्रस्थान)

[ललिताका प्रवेश]

ललिता—कितने वर्षके बाद आज उसके मुखपर उदासीकी झलक दिखाई दी है, उसकी ऑखे अजनाके लिए कैसी व्याकुल हो रही है, मानो ससारमे उसके सिवा और कोई मनोहर वस्तु ही नही है। परन्तु उसे क्या पता है कि वह उस लोकमे पहुँच चुकी है, जहाँसे लौटना कठिन ही नही किन्तु असभव है। अभागिनी राजकुमारी, तू दुनियामे रोती हुई आई, रोते हुए ही ससारसे प्रस्थान कर गई। परन्तु यह मेरा नही, तेरा ही दोष है। तू मेरे मार्गका पत्थर, ऑखोमे खटकनेवाला तिनका क्यो बनी थी? तूने मेरी आधी बाल्यावस्था और जवानीकी

पाली हुई आशाओके पौवेको क्यो उखाड फैका था ? अ ह ह हः (हॅसती है) अब मेरा रास्ता साफ है। राजकुमार कहता था, सुखदा तेरे और मेरे बीचमे अग्निका समुद्र गर्ज रहा है, इस लिए मुझे विस्मृतिके जलमे विसर्जन कर दो। परन्तु अब वह समुद्र कहॉ है ? मेरे तपस्याके दिन कट चुके, अब वर-प्राप्तिका समय आया है। हृदय ! साहस कर और अपने प्रियतमके पीछे पीछे चल, वह निराश होगा, उसे धैर्य्य दे और अपना-आप उसपर प्रकट कर। क्या यह सुनकर कि मै तेरह वर्ष उसके नामकी माला जपती रही हूॅ, और उसके लिए राजकुमारी होकर दासीका वेष धारण किये रही हूॅ, उसपर असर न होगा, और उसका हृदय मोमकी नाई न पिघल जायगा ? वायु ! तुम साक्षी हो ! मै प्रेमकी पापिनी हूॅ ! मैने विवश होकर यह कुकर्म किया है। (प्रस्थान)

[केतुमतीका प्रवेश]

केतुमती—विधाता ! मैने क्या कर दिया ! पुष्पकी नाई पवित्र और इन्द्रधनुषकी नाई सुदर बहूपर ऐसा दोषारोपण ! मेरा भला कौन जुगमे होगा ! आज उसकी ऑखोके ऑसू मुझे याद आ रहे है। उसकी सिसकियॉ मुझे सुनाई दे रही है।

[दो दासियोका प्रवेश]

एक दासी—महारानी, राजकुमार प्रहसितको साथ लेकर महेन्द्र-पुर चले गये है, और कह गये है कि अगर अञ्जना न मिली तो मै आत्म-हत्या कर लूॅगा और वापस न लौटूॅगा।

केतुमती—दयामय ! मेरा पुत्र तेरे सुपुर्द है, तू ही उसकी रक्षा कर। (दूसरी दासीसे) तूने ललिताको मेरे पास आनेके लिए कहा, वह अभी तक क्यो नही आई ?

दूसरी सखी—महारानी उसकी चारो ओर खोज की गई, परन्तु कोई पता नही चला।

केतुमती—(क्रोधसे) तो भाग गई, निकल गई? नही नही, मै यह सहन नही कर सकती। जाओ, आदित्यपुरके सारे दरवाजोपर पहरेदार बैठा दो, और ढिंढोरा पिटवा दो कि कोई व्यक्ति नगरसे बाहर न निकल सके। मै उसको अपने सम्मुख बुलाऊँगी, उससे पूछूँगी, उससे उत्तर माँगूँगी और मामलेकी तह तक पहुँचनेका यत्न करूँगी।

(प्रस्थान)

दूसरा दृश्य

स्थान—महात्मा अश्वपतिकी कुटियाका बाहरी भाग

समय—तीसरा प्रहर

[वसन्तमाला गा रही है]

सारंग

किसीसों प्रीति करे नहि कोय।
जो बिन जाने नेह लगावत, वाकी दुरगति होय॥
करके प्रीति सलभ दीपकसो, फिर पीछे पछताय।
दीप प्रीतिकी रीति न जाने, सलभहि देत जराय॥
प्रीति कमलसों भ्रमर करत है, बैठत वापै जाय।
साँझ समय हा! दैव कमल सग, अपनो प्राण गँवाय।
प्रीति करत बीणा-स्वरसों मृग, सुनि मूर्च्छित हो जाय।
फँसकर हाय फंदमें मृग निज जीवन देत नसाय॥
किसीसो प्रीति करे नही कोय॥
प्रीति जगतकी झूठी सारी, मूरख मन भरमाय।
सो जन जान सुजान सुदर्शन, जो हरिसे ध्यान लगाय।
किसीसों प्रीति करे नहि कोय॥

[अञ्जनाका प्रवेश]

अञ्जना—क्यो बहन, क्या गा रही हो ?

वसत०—प्रेमके देवताकी आराधना कर रही हूँ।

अञ्जना—गालियाँ देनेका नाम तुमने आराधना रक्खा है ?

वसंत०—दुनियाँ प्रेमका स्थान नही, यहाँ पग-पगकर झूठके जाल बिछे हुए है।

अञ्जना—वसतमाला !

वसत०—राजकुमारी !

अञ्जना—प्रेमको गालियाँ न दो, यह तुम्हारी भूल है। दुनिया उदास थी, स्त्री उत्पन्न की गई। स्त्री बेकार थी, उसे सुदरता दी गई। परन्तु चारो ओर अँधेरा था, आँखे उस सुदरताको देखनेके योग्य न थी, तब विधाताने स्त्रीका हृदय लेकर उसपर प्रेमका जादू कर दिया। दुनियामे उजाला हो गया। वसंतमाला !

वसतमाला—राजकुमारी !

अञ्जना—प्रेमको गालियाँ न दो ! यह वह मधु है, जिसको तुम्हारे होठोने अभी तक नही छुआ। यह वह वस्तु है जिसका मनोहर दृश्य तुम्हारे हृदयने अभी तक अनुभव नही किया। तुम अबोध हो, प्रेमको गालियाँ न दो।

वसंतमाला—गालियाँ न दूँ, स्तुति करूँ ? आराधना करूँ ? क्या वह प्रेम—जिसने कई देशोका सर्वस्व नाश कर दिया है, जिसने रुधिरकी नदियाँ बहा दी है, जिसने लाखो फूलके समान निर्मल हृदयोको पापसे कलुषित कर दिया है, जिसने लाखो सुदर व्यक्तियोको मिट्टीमे मिला कर दुनियाकी दृष्टिमे अति दीन अति हीन और अति क्षीण बना दिया

है—आराधनाके योग्य है ? नही नही राजकुमारी, नही, प्रेम कोई उत्तम वस्तु नही, केवल एक भयानक परन्तु मनोरजक धोखा है जिससे दुनियाके पुरुष भोली भाली स्त्रियोको लूटकर उनको पैरोके नीचे मसल डालते है।

अञ्जना—क्या कह रही हो ? तुम्हारे विचार बहुत भयानक है।

वसन्तमाला—परन्तु प्रेमसे अधिक भयानक नही। अपनी अवस्था-पर विचार करो, तुम क्या थी और अब क्या बन गई हो ? तुम्हारी ऑखोकी ज्योति, तुम्हारे कपोलोकी मनोहरता, तुम्हारे होठोकी मुस्क-राहट, तुम्हारे शरीरकी गदराहट, तुम्हारे रगकी सुदरता अब कहॉ है ? इन सबका चोर, इन सबका डाकू वही प्रेम है जिसकी तुम स्तुति और मै निन्दा करते नही थकती।

अञ्जना—कामदेवको फूलोका तीर चला लेने दो, फिर पूछूॅगी। क्यो बजरगी ? (बजरगीका हॅसना)

[महात्मा अश्वपतिका प्रवेश]

अश्वपति—(जन्मपत्रिका देखते हुए) दसवे घरमे चन्द्रमा और चौथेमे बृहस्पति है। दूसरेमे मगल और पहलेमे रवि है। क्या मतलब ?

वसन्तमाला—महाराज, क्या देखा ?

अश्वपति—ठहरो, मुझे सोचने दो (ऑगुलियोपर गिनते हैं) अञ्जना !

अञ्जना—महाराज !

अश्वपति—बेटी, तुम्हारे दुःखोसे हृदय फट जाता है, परन्तु इस बालककी जन्म-कुडली देखकर तुम्हारे सारे दुःख भूल गये है। यह बालक शेरोसे लडेगा, शास्त्रोका विद्वान् होगा। सम्बन्धियोका प्यारा, माता-पिताकी ऑखोका तारा होगा। यश इसके चरण चूमेगा। इतिहास-

लेखक इसकी जीवन-घटनाओकी मुक्त-कण्ठसे प्रशसा करेगे और ससार इसके नामपर श्रद्धा और प्रेमके फूल चढायगा।

अञ्जना—किसी सम्बन्धीके लिए बुरा तो नही है ?

अश्वपति—(फिर हिसाब करते है) नही, बहुत मगलकारी बालक है। देवी मैने कई जन्म-कुडलियॉ देखी है, परन्तु ऐसी कुडली देखनेका आजतक अवसर नही मिला। बडा भाग्यवान् बालक है, इससे केवल माता पिता और कुलका ही नही, भारतवर्षका नाम भी उज्ज्वल होगा और इसकी कीर्तिसे चारो ओर सुगन्धि फैलेगी। (प्रस्थान)

वसन्तमाला—(अञ्जनासे बालकको लेकर) वजरगी ! ओ बजरगी ! जरा हॅस दे। बेटा, देख तेरे माताकी ऑखोसे आज प्रसन्नता बरस रही है, रोकना चाहती है परन्तु होठ बसमे नही आते और मुस्कराहट जबर्दस्ती बाहर निकल रही है।—ऐसा मालूम होता है कि कोई इस ओर आ रहा है, देखूॅ कौन है ?

(बालकको अजनाकी गोदमे देकर आप चली जाती है।)

अञ्जना—मेरी उजडी हुई दुनियाके मनोहर फूल ! मेरे अन्धकारमय जीवनके प्रकाश ! निर्बल अबलाके एक मात्र सहारे ! तुझे देखकर मुझे अपने सारे सकट भूल जाते है, और जिस प्रकार रोता हुआ बालक खिलौना देखकर प्रसन्न हो जाता है, उसी तरह तेरा मुखडा देखकर मेरा हृदय आनन्दसे नाचने लगता है। तेरी ऑखोमे उन्हीकी ज्योति है, तेरे कपोलोमे उन्हीका आकर्पण है। सोचती थी, परित्यक्ता होकर क्यो जी रही हूॅ, परन्तु तेरे मुखड़ेको देखकर जो उनकी आकृतिका सूक्ष्म चित्र है, अब यह बात समझमे आ रही है कि इस निर्जन वनमे ससारसे पृथक् रहकर भी उनके पुत्रका लालन-पालन करके मै उन्हींकी सेवा कर रही हूॅ और उसी धर्मको पाल रही

हूँ, जिसपर चलनेकी ऋषियोने और शास्त्रोने आज्ञा दी है, और जिससे च्युत होकर नारी-जन्म निष्फल हो जाता है। (बालक रोने लगता है।) क्यो बेटा, रोने क्यो लगा ? तेरी अभागी माँ तेरे पास बैठी तेरे मुखडेको देख रही है। तू क्यो रोता है ? (छातीसे लगाकर प्यार करती है।) आकाशपर मेघ छा जानके कारण अन्धकार फैल गया है। परन्तु थोडी देरके बाद फिर वही सूर्य्य चमकने लगेगा। रातके बाद दिन चढता है, सोई हुई प्रकृति जागती है। वृक्षोके गिरे हुए बीज भूमिसे फूटकर बाहर निकलते है, काली राते चॉदनी हो जाती है, परन्तु मेरे प्रारब्धमे कोई परिवर्तन नही होता। कब तक विधाता—कब तक यह जीवनकी नैय्या मॅझधारमे हिचकोरे खाती रहेगी ?—ये कौन आ रहे है ?

[वसतमालाके साथ राजा प्रतिसूर्य और रानी रविसुन्दरीका प्रवेश]

अञ्जना—प्रणाम करती हूँ।

दोनो आगन्तुक—सौभाग्यवती हो, पुत्री।

वसन्तमाला—यह विमानमे उडे जा रहे थे, विश्राम करनेको कुछ देरके लिए यहॉ उतरे है।

अञ्जना—अहोभाग्य। वसन्तमाला इनको ले जाओ और इस वनमे जो कुछ प्राप्त है, उससे इनका आतिथ्य सत्कार करो।

प्रतिसूर्य—देवी, तू कौन है, जो इस वनमे जंगलके फूलकी नाई जीवन गुजार रही है ?

रविसुन्दरी—और क्या कारण है कि तेरे वस्त्र काले है ?

अञ्जना—(स्वगत) परमात्मा ! इस प्रकारके प्रश्न सुनकर मेरा हृदय फट जाता है और ऑखे हठात् नीचे झुक जाती है।

वसन्तमाला—यह एक दुखिया राजकुमारी है। आप कुटियाके अन्दर चलकर फल-फूल ग्रहण करे, मै इनका परिचय स्वय निवेदन कर दूँगी।

प्रतिसूर्य्य—यह राजकुमारी है?

वसन्तमाला—हॉ महाराज, राजकुमारी है।

प्रतिसूर्य्य—और परित्यक्ता है?

वसन्तमाला—हॉ महाराज, परित्यक्ता है।

अञ्जना—ये कौन है जिनकी आवाजमे माधुर्य्यका सोता फूट रहा है।

रविसुन्दरी—बेटी, तू अञ्जना तो नही है?

प्रतिसूर्य्य—वही है, मेरी ऑखे धोखा नही खा सकती, यह वही है।

रविसुन्दरी—अञ्जना! अञ्जना!!

अञ्जना—कौन, मामा! मुझे सॅभालो, मेरा हृदय डूबा जा रहा है।

(राजा प्रतिसूर्य्यकी गोदमे गिर पडती है।)

रविसुन्दरी—(वसन्तमालासे) दौडो, जल लाओ। लडकी बेहोश हो गई है।

(वसन्तमालाका जल लेने जाना।)

प्रतिसूर्य्य—बेटी! अञ्जना! ऑख खोल, देख यह मै हूँ।

रविसुन्दरी—बेटी! होश कर, उठ, तुझे क्या हो गया है?

(वसन्तमालाका जलके छींटे देना।)

अञ्जना—(आखे खोलकर) वसन्त!

वसन्तमाला—क्यो राजकुमारी, होश करो।

अञ्जना—क्या यह स्वप्न है या सचमुच मेरी ऑखोने अपने मामाको देखा है—मुझे विश्वास नही आता।

रविसुन्दरी—दुःख उठा उठाकर पागल हो गई है और आशाके सुदिन सबेरेमे भी इसे निराशाकी अर्ध रात्रिका भ्रम हो रहा है।

प्रतिसूर्य्य—बेटी, तुम स्वप्न नही देखती—वास्तवमे तुम्हारे, दु:खोकी समाप्ति हो गई है।

अञ्जना—इससे पहले भी मै धोखा खा चुकी हूँ। एक बार सोचा था कि दु.खके दिन बीत गये, परन्तु नही, अभी मेरे कुकर्मोका फल पूर्ण न हुआ था। क्या इसी प्रकार फिर धोखा खाऊँगी ?

रविसुन्दरी—नही मेरी पुत्री, नही, तू इतनी अकुलाई हुई इतनी घबराई हुई क्यो है ?

वसत०—दु खोने इनके हृदयसे आशा और आनद दोनोको मेट दिया है। इनपर जो घोर आपत्तियाँ पड़ी है, उनका विचार करके मेरे शरीरपर रोमाञ्च हो आता है।

प्रतिसूर्य्य—परन्तु अब वे दिन न आयँगे।

अञ्जना—(रविसुन्दरीसे लिपटकर) विश्वास नही होता।

रविसुन्दरी—बेटी, इतनी क्यों व्याकुल हो रही हो ! उठो चलो, हनुपुर चले।

अञ्जना—नही, मै नही जाती।

प्रतिसूर्य्य—पगली यह क्या कह रही है ? इस निर्जन स्थानमे रहेगी और मेरे साथ नही जायगी ?

अञ्जना—मामा !

प्रतिसूर्य्य—बेटी, हाँ कह तो, क्या कहना चाहती है ? सहमी हुई हिरनीके समान तेरे नेत्रोमे भयका चित्र नाच रहा है।

अञ्जना—अंधकार भयानक होता है, परन्तु जब थोड़ी देरके लिए उसमे बिजली चमक जाती है, तो वह अंधकार उससे कई गुना अधिक भयानक हो जाता है।

प्रतिसूर्य्य—इससे प्रयोजन ?

अञ्जना—प्रयोजन यह कि आप हनुपुर चलकर मुझसे मेरा वृत्तान्त पूछेंगे, और तब जितना प्यार इस समय मेरे प्रति प्रकट कर रहे है, इससे कई गुनी अधिक घृणा करने लगेंगे—अंधकार कई गुना अधिक भयानक हो जायगा।

प्रतिसूर्य्य—तो मै प्रतिज्ञा करता हूँ कि तुमसे अनुरोध न करूँगा।

अञ्जना—कोई नही ?

प्रतिसूर्य्य—कोई नही।

अञ्जना—(रविसुंदरीसे) और आप ?

रविसुंदरी—मै भी इस विषयमे तुम्हारा दुखा हुआ हृदय न दुखाऊँगी और तुमसे कोई प्रश्न न करूँगी।

प्रतिसूर्य्य—अब तो तुम्हे कोई आपत्ति नही ?

अञ्जना—नही।

प्रतिसूर्य्य—(वसन्तमालासे) देवी !

वसंतमाला—महाराज !

प्रतिसूर्य्य—जाकर महात्माजीसे प्रार्थना करो कि एक आदमी आपसे भेट करना चाहता है।

वसंतमाला—परन्तु आपने इसके विषयमे अभी तक कुछ नही पूछा ? (बालकको दिखाती है।)

प्रतिसूर्य्य—यह बालक कौन ?

रत्रिसुंदरी—क्या अजनाका पुत्र है?

वसतमाला—जी हाँ।

प्रतिसूर्य्य—आ बेटा आ, तेरे लिए ऑखे तडप रही थी।

(गोदमे लेकर प्यार करता है। वसतमाला जाती है।)

रत्रिसुन्दरी—कैसा सुन्दर बालक है, देखकर हृदय शीतल होता है।

प्रतिसूर्य्य—इसके शरीरमे हमारा अपना रुधिर हमारे चित्तको अपनी ओर आकर्षित कर रहा है। (बालकका मुँह चूमता है।)

रत्रिसुन्दरी—इसके नेत्रोसे मालूम होता है बडा भाग्यवान् होगा और इसके यश और कीर्तिकी छटासे भारतभूमिमे प्रकाश फैलेगा।

[वसन्तमालाका प्रवेश]

वसन्तमाला—चलिए, महात्माजी आपसे भेट करनेको तैय्यार है। आपका आगमन सुनकर उनके हर्षकी सीमा नही रही है। (प्रस्थान)

तीसरा दृश्य

स्थान—महेन्द्रपुरका राजमहल

समय—सायकाल

[प्रहसित और पवन]

पवन—कुछ पता नही चलता।

प्रह०—राजकुमार धैर्य धरो, अभी मालूम हो जायगा।

पवन—सब आये परन्तु उसके सम्बन्धमे किसी आदमीने कोई बात नही कही।

प्रह०—परमात्मा दया करेगे।

पवन—उसका कमरा बद पडा है, मेरा हृदय व्याकुल हो रहा है। ऐसा प्रतीत होता है मानो वह इस भवनमे नही है। यदि होती

तो यह असम्भव था कि मेरा आगमन सुनती और दौडी हुई न आती। यहाँ न हुई तो—

[एक बालकका प्रवेश]

प्रह०—मै इस बालकको पहचानता हूँ, कदाचित् इससे कुछ पता मिल जाय। बालक!

बालक—(प्रणाम करके) पलनाम कलता हूँ महालाज।

प्रह०—आयुष्मान् भव! तुम्हारा नाम क्या है?

बालक—मेला नाम तीच्छन कुम्हाल।

प्रह०—तीक्ष्णकुमार?

बालक—हाँ तीच्छन कुम्हाल।

प्रह०—तुम बहुत अच्छे बालक हो।

बालक—हाँ।

प्रह०—तो एक बात बतलाओ।

बालक—बतलाऊं।

प्रह०—तुम अपनी भूआको जानते हो?

बालक—दानता हूँ।

प्रह०—वह कहा है?

बालक—तली गई।

पवन—कहा चली गई?

बालक—एक दिन आई थी फिल तली गई।

पवन—प्रारब्ध! मुझे धोखा न देना, मेरा हृदय पहले ही दुखा हुआ है।

बालक—वह बडी लोती थी, बड़ी लोती थी, फिल दादाजीने घलसे निकाल दिया। फिल वह तली गई।

प्रह०—कहाँ चली गई ?

बालक—पछुमुखाको तली गई।

पवन—शोक ! मेरे लिए यहाँ भी निराशा ही उपस्थित है।

बालक—उसके कपले काले थे, दादीजी भी लोती थीं, पर दादाजीको किलोध चल्हा था।

पवन—मित्र, मे.ा ससार अँधेरा हो गया है, उसमे आशाकी किरण दिखाई नही देती। बोलो, कहो, अब कौन-सा रास्ता बाकी है ?

प्रह०—पिता भा ऐसा निर्दयी, ऐसा मोह-हीन हो सकता है, यह न सोचा था। परन्तु जब प्रारब्ध फिरने लगती है तो माता-पिताके हृदयोमे भी परिवर्तन हो जाता है। उस समय संसारकी प्रत्येक वस्तु बदल जाती है। फूल कॉटा हा जाता है, सोना पीतल बन जाता है और प्रेमका सोता अन्याय और क्रोवका रूप धारण कर लेता है।

पवन—पतिने परित्याग किया, रोती रही। सास-ससुरने दोष लगाया, आश्रयके लिए माता पिताके पास आई। परन्तु माता-पिताका तिरस्कार और अपमान उसके लिए असह्य हो गया होगा। मै उसके पास केवल थोडी देर—केवल तीन दिन रहा हूँ। परन्तु मैने उसका हृदय पढ लिया था, वह प्रेमकी पुतली थी। प्रेम उसके जीवनकी आत्मा थीं। अपने माता-पिताके हाथो अपमान सहकर उसका कोमल हृदय टूट गया होगा। परतु यह सब मेरा—

[पवनका मूर्च्छित हो जाना। राजा महेन्द्रराय और रानी हृदयसुन्दरीका प्रवेश]

महेन्द्रराय—पवन !

प्रह०—गुलाब लाओ, इन्हे मूर्छा आ गई है।

हृदयसुन्दरी—(घबराकर) दास !

[दासका प्रवेश]

दौड़ो, गुलाबदानी लाओ, पवन बेहोश पड़े है।

(दासका प्रस्थान)

[हृदयसुन्दरी पखा पकड़कर हवा करने लगती है। पवन खड़ा हो जाता है।]

पवन—ठहरो! पखा न करो, इसकी हवामे विषके परमाणु मिले हुए है। मुझपर गुलाब न छिड़को, तुम्हारे सयोगसे वह अग्निकी भयानक जिह्वाका रूप धारण कर लेगा। परमात्माने तुम्हे माता पिता बनाया, फूलके समान सुन्दर और ओसके कणकी नाई पवित्र सन्तान दी, परन्तु तुम्हारी कठोरता और निर्दयताने दिखा दिया कि परमात्माकी दया जहाँ चाहती है मिट्टीके ढेलेकी तरह गिर पड़ती है, और सुपात्र-कुपात्रका जरा भी विचार नही करती।

प्रह०—राजकुमार, आप क्या कह रहे है?

पवन—पराई बेटीपर दूषण आरोपण किया जा सकता है, यह सहल है। परन्तु तुम्हारी तो वह पुत्री थी, तुम्हारे हृदयने यह कैसे स्वीकार कर लिया कि उसे धक्के मारकर बाहर निकाल दो, और निर्दोष अबलाको तिरस्कारके जीवन और निराशाकी मौतके मुँहमे धकेल दो। तुम राजा हो, औरोका न्याय करते हो, मगर वह ढोग अब नही रह सकता। जो आदमी अपनी निर्दोष बेटीको नहीं पहचान सकता, वह दूसरोका न्याय किस प्रकार कर सकता है?

प्रह०—क्रोध और निराशाने आपको—

पवन—परन्तु मै वनोको छानूँगा, बियाबानोमे ढूँढूँगा, पर्वतोपर खोजूँगा, और जिस स्थानपर भी होगा उस नारी-रत्नको प्राप्त करके रहूँगा, और भरसक यत्न करनेपर भी यदि उसका पता न लगा तो प्रायश्चित्त रूपमे जलती हुई चितापर जल मरूँगा। (वेगसे प्रस्थान)

प्रह०—राजकुमार, ठहरो मै भी आता हूँ।

(प्रहसितका जानेको उद्यत होना, महाराज महेन्द्ररायका रोकना ।)

महेन्द्रराय—ठहरो, एक शब्द—

प्रह०—आज्ञा ।

महेन्द्रराय—क्या अञ्जना निर्दोष थी ?

प्रह०—पूर्णतया ।

महेन्द्र०—और आदित्यपुरसे आया हुआ पत्र ?

प्रह०—इस बातका प्रमाण है कि बुद्धिमानसे बुद्धिमान् पुरुष भी धोखा खा सकता है । (वेगसे प्रस्थान)

महेन्द्रराय—परमात्मा ! परमात्मा ! यह मैने क्या कर दिया, इस पापका बदला किस जन्ममे मिलेगा !

हृदयसुन्दरी—मेरी पुत्री ! तू क्या कहती होगी !

महेन्द्र०—मुझे सँभालो, मेरी आँखोके आगे अँधेरा छा रहा है ।

(अचेत हो जाना । हृदयसुन्दरीका गुलाब छिड़कना)

हृदयसुन्दरी—दास ! दास ! इधर आओ, महाराज मूर्च्छित हो गये है।

चौथा दृश्य

स्थान—रास्ता

समय—चाँदनी रात

(विद्युत्प्रभ अकेला)

विद्युत्प्रभ—चाँद, तू हँस रहा है । तूने धीरे धीरे अपने शत्रुके साम्राज्यपर विजय प्राप्ति की है । आज प्रकाश चारो ओर तेरा नृत्य कर रहा है । अन्धकार तग मकानोमे कैद है, और तेरा मुख-कमल विजय-प्राप्तिके आनन्दसे खिला हुआ है । तू हँस रहा है, परन्तु मेरा हृदय-

धडक रहा है। वह सोचता है, क्या आज मेरी मनोकामना भी सिद्ध होगी ? जिस कामके लिए अपनी सारी जवानीका एक एक क्षण समर्पण कर चुका हूँ, जिसकी पूर्तिके लिए माता, पिता, भाई, बन्धु, सबको विसार रक्खा है, राज-काजके सुखोसे वचित हो रहा हूँ, भूतोके समान रातोको बाहर घूमता फिरा हूँ—क्या वह काम आज भी पूरा न होगा ? विद्युत्प्रभ ! प्रसन्न हो, तेरी कीर्तिका कलङ्क, तेरे यशका शत्रु बिना कुछ जाने मृत्युकी ओर बढ रहा है, और तेरी मनोकामना पूरी होनेकी घडी समीप सरक रही है। चॉद, जरा ठहर, चिडियाको जालमे फँस लेने दे, फिर विद्युत्प्रभ तेरे साथ इस आनन्द और प्रसन्नताके नृत्यमे सम्मिलित होगा—कौन ?

[सेवकका प्रवेश]

विद्यु०—तुम आ गये ?

सेवक—भगवन् ! मै सेवामे उपस्थित हूँ।

विद्युत्प्रभ—तुम अपना काम समझते हो ?

सेवक—पूरी तरहसे।

विद्युत्प्रभ—कोई समाचार ?

सेवक—वह आ रहा है।

विद्युत्प्रभ—और उसका मित्र ?

सेवक—उससे बिछुड़ चुका है।

विद्युत्प्रभ—तुम्हारे आदमी ?

सेवक—अपने अपने स्थानपर नियत कर दिये गये है।

विद्युत्प्रभ—तो उसकी प्रारब्धपर मोहर लग चुकी है। उसने दो बार प्रेमके भूखेके मुँहसे ग्रास छीना है। उसने वर्षों तक मुझे घृणा और ईर्षा-द्वेषकी अग्निमे जलाया है। जब मलिन मुख, झुके हुए सिर,

और क्षमाप्रार्थिनी ऑखोके साथ वह मेरे सम्मुख आवेगा, तो मेरा हृदय प्रफुल्लित हो जायगा। सावधान! कोई भूल न हो जाय।

सेवक—यह असंभव है।

विद्युत्प्रभ—आओ, मै तुम्हे एक बात समझा दूॅ। पवन आ रहा है, पता नही उसके साथ और कौन है। परन्तु कोई भी हो, देखा जायगा।

(दोनोका प्रस्थान)

[पवन और सुखदाका प्रवेश]

पवन—देवी! बहुत दिनोके बाद तुम्हे देखनेका अवसर मिला है।

सुखदा—परन्तु मेरी ऑखोने तुम्हे कभी ओझल नही होने दिया। मै तुम्हे बराबर देखती रही हूॅ।

पवन—तुम मुझे बराबर देखती रही हो, यह कैसे?

सुखदा—स्त्रीके लिए कोई बात कठिन नही। वह जो चाहती है कर सकती है, और जो चाहती है करा सकती है, केवल उसके हृदयमे किसी बातके आनेकी देर है। अब कहो, मुझसे अंतिम भेटमें तुमने जो शब्द कहे थे वे तुम्हे याद है?

पवन—कौनसे शब्द?

सुखदा—मेरे और तुम्हारे मध्यमे अग्निका समुद्र गर्ज रहा है। इस लिए मुझे विस्मृतिके जलमे विसर्जन कर दो। मै तुमसे विवाह नही कर सकता, क्यो कि मेरे हृदयपर एक अन्य रमणीका अधिकार जम चुका है, मै उसको प्रेममे धोखा न दूॅगा।

पवन—हॉ, ये शब्द मैने कहे थे। परन्तु इनसे प्रयोजन?

सुखदा—अब वह अग्नि सर्द और समुद्र शुष्क हो चुका है। इस लिए—

पवन—सुखदा! सुखदा! यह असम्भव है। मै भारतवर्षके

कोने-कोनेमें उसकी खोज करूँगा, और जैसे भी होगा और जिस प्रकार भी होगा उसको ढूँढ निकालूगा।

सुखदा—और यदि वह फिर भी न मिले तो ?

पवन—जिस प्रकार पवित्रताकी देवियाँ पति वियोगमे चितामे जल मरती है, उसी प्रकार उस प्रेमकी पुतलीके लिए मै आत्म-हत्या कर लूगा, और उसपर जो अत्याचार हुआ है उसका प्रायश्चित्त करूँगा।

सुखदा—यह कदापि नही हो सकता, मै तुम्हे कभी इसकी आज्ञा न दूगी।

पवन—तुम आज्ञा न दोगी ? तुम्हारा मुझपर क्या अधिकार है ?

सुखदा—मेरा तुमपर अधिकार है, मैने तुम्हारे लिए अपना राज-पाट छोड़ा है। तुम्हारे लिए अपने आरामपर, अपने सम्मानपर, अपने वशपर लात मारी है। तुम्हारे लिए अपना स्वास्थ्य, अपना यौवन, अपना भविष्य नष्ट किया है। तुम्हारे लिए अपने माता-पिताकी अप्रसन्नता सही है। तुम्हारे लिए १३ वर्ष तुम्हारी माताकी दासी बनकर कमीनोके समान सेवाका भार अपने सिरपर लिया है। मेरा तुमपर अधिकार है, तुम मेरे हो—चकित न होओ, इस राज-कुमारीके कोमल हाथोने तुम्हारे लिए शूद्रोका तुच्छ काम किया है। इन गर्व-भरी ऑखोने तुम्हारे लिए तिरस्कारके कडवे प्याले पिये है। इस राज्य करनेवाली जिह्वाने तुम्हारे लिए झिडकियाँ खाई है। मै राजकुमारी थी, तुम्हारे लिए एक दासी बनी। मै सुखदा थी, तुम्हारे लिए ललिता बनी।

पवन—तुम ही ललिता थी ? तो यह घृणायुक्त आग तुम्हारे ही हाथोकी लगाई हुई है ? तुम्हीने मुझपर स्वत्व जमानेके लिए यह प्रपच रचा ? तुम्हीने उस अबलापर दोपारोपण कराया ? तुम्हीने मेरी माताको धोखा दिया ? ओह ! कितना अधम यत्न है ! परन्तु फिर भी

सुखदा, यह १२ वर्षका तप, यह थका देनेवाला परिश्रम, मेरे मनमे तुम्हारे लिए सम्मानका भाव उत्पन्न करता है, और मेरे हृदयमे तुम्हारे लिए प्रेमका सचार करता है। परन्तु क्या करूँ, वाग्वर्मके सूत्रोसे बॅधा हुआ हूॅ। तुमने जो कुछ किया है वह मेरे लिए प्राण-घातक भी हो, तो भी मुझे तुमपर क्रोध नही, क्योकि तुमने जो कुछ किया है प्रेम और क्रोधकी दशामे आकर किया है। परन्तु यह आशा हृदयसे हटा दो कि अञ्जनाके बाद पवन किसी औरसे भी प्यार करेगा। सच्चा भक्त ईश्वरके सिवा किसी औरकी आराधना नही कर सकता। चकोर चन्द्रमाके सिवा किसी औरपर मुग्ध नही हो सकता, और सच्चा क्षत्रिय एक स्त्रीके सिवा किसी दूसरीसे प्रेम नही कर सकता। वह जब प्रेम करता है, पूर्ण शक्तिसे करता है और जब उस प्रेमसे वञ्चित हो जाता है, तो श्मशानके समान उदासीन होकर जीवनकी घडियॉ केवल उसकी यादमे व्यतीत कर देता है?

सुखदा—तो मेरे स्वप्नकी व्याख्या निराशा है?

पवन—जरा विचार करो, जिस स्त्रीने परित्यक्ता होकर बारह वर्ष एकान्तमे काट डाले और फिर भी अपनी जिह्वासे क्रोधके दो शब्द नही निकाले, जिसके दो दिन सहवासका परिणाम यह हुआ कि मुझे युद्धमे ऐसा अनुभव होता रहा मानो उसका प्रेम मेरे चारो ओर फैलकर मेरी रक्षा कर रहा है, उसके मधुर शब्द मुझे उत्तेजना दे रहे है, जिसके मिलनकी आशामे मै सकल दुःख भूल गया था, क्या यह सम्भव है कि मै अपने हृदय-मदिरमे उसकी दिव्य मूर्तिको निकालकर किसी अन्य मूर्तिको स्थान दे सकूॅ, चाहे वह स्वय इन्द्र-लोककी अप्सरा ही क्यो न हो?—नही नही सखदा राजकुमारी, यह असम्भव है। उसने मुझपर अपने प्राण निछावर किये है, मै उसके लिए अपनी जान गवॉ दूॅगा, और आनेवाली आर्य्य-सन्तानको

यह कहनेका अवसर न दूँगा कि आर्य्यावर्तकी स्त्रियाँ प्रेमपर सर्वस्व न्योछावर कर सकती है, परन्तु पुरुषोके हृदय इस स्वर्गीय वस्तुसे शून्य है। मेरा हृदय इसे स्वीकार नही कर सकता। उसकी आँखे मेरे विना ससारके सकल पुरुषोकी ओरसे बन्द है, मै दिखाऊँगा कि पवनकी आँखोने भी अञ्जनाके विना किसी अन्य रमणीके सौन्दर्य्यकी पूजा नही की। सुखदा, सौन्दर्य दोपहरकी धूप है, यह चढती है और ढल जाती है। यौवन पानीका बुलबुला है, वह उठता है और बैठ जाता है। ससार असार है, यह बनता है और बिगड जाता है। केवल धर्म है जो बारह महीने एक-सा बना रहता है, और जिसके विना ससारकी गति रुक जाती है। इस लिए इस विषय-वासनाका विचार छोड दो और धर्मका खयाल करो। इसीके रास्तेपर अञ्जना दु ख उठा रही है। इसीके लिए मै पागल हुआ फिर रहा हूँ और इसीकी खोजमे तुम अपना जीवन समर्पण कर दो। परमात्मा भला करेगा। (वेगसे प्रस्थान)

सुखदा—हाय! यह उसने क्या कहा? यह कि सौन्दर्य्य दोपहरकी धूप है, वह चढती है और ढल जाती है। यौवन पानीका बुलबुला है, यह उठता है और बैठ जाता है। ससार असार है, यह बनता है और बिगड जाता है। क्या मै इस समय तक घोर अन्धकारमे ही टक्करे खा रही थी? क्या मेरी बुद्धि इस समय तक रोचक धोखे दे देकर मुझे विनाशके मार्गपर ही धकेल रही थी? (सोचती है) हाँ म मूर्खा हूँ, नही, अन्धी हूँ, इतना ही क्यो, राक्षसी हूँ। मैने एक पवित्र गृहस्थको बरबाद करनेकी कुचेष्टा की है। मैने घोर पाप किया है। मेरी आँखे अब तक क्या बन्द थी? मेरे कान अब तक क्यो बहरे थे? ओ परमात्मा! मै क्या देख रही हूँ! (सुखदाका छिप जाना)

(पवनको पकडे हुए विद्युत्प्रभके सेवकोंका प्रवेश ।)

पवन—तुमने मुझे पकडनेमे भूल तो नही की ?

एक सेवक—नही।

पवन—क्या तुम बता सकते हो कि दोष क्या है ?

सेवक—नही ?

पवन—क्या तुम बता सकते हो कि तुम्हारा अभिप्राय क्या है ?

सेवक—नही ।

[विद्युत्प्रभका प्रवेश]

विद्युत्प्रभ—मै बता सकता हूँ । तुम्हारा मुँह क्यो सूख गया है, मुझसे पूछो ।

पवन—तुमसे ?

विद्युत्प्रभ—जी हॉ, मै ही विद्यत्प्रभ हूॅ, पहिचान लिया ?

पवन—हॉ, पहिचान लिया और साथ ही सब कुछ जान लिया ।

विद्युत्प्रभ —क्या समझ लिया ?

पवन—जो मै कहना नही चाहता ।

विद्युत्प्रभ—फिर भी कुछ ?

पवन—क्षत्रियका बेटा इतना नीच इतना पापी हो सकता है, यह न सोचा था ।

विद्युत्प्रभ—नीच ? मैने क्या नीचता की है ?

पवन—तुमने वह नीचता की है जो आर्य्यावर्तके पवित्र नामपर कलक है । तुमने वह नीचता की है जो धर्मपर धब्बा है, जो विवाहकी स्वाधीनतापर आक्षेप है ।

विद्युत्प्रभ—जिस समय मेरे मुँहसे दो ग्रास छीने थे, उस समय ये उपदेश किस नीदमे सोये हुए थे ? जिस समय तुमने एक क्षत्रिय वीरके सम्मानपर धावा किया था, उस समय ये विचार कहाॅ छिपे हुए थे ?

पवन—विद्युत्प्रभ, मेरी जवान न खुलवाओ, लज्जासे भूमिमे गड़ जाओगे। आर्य्यावर्तकी रमणियाँ जिसे वीर पाती है, उसे पसन्द करती है। यदि तुममे बल और पुरुषार्थ होता तो एक स्त्रीके लिए इतने दिनो धक्के न खाते फिरते, भारतकी स्त्रियाँ तुमपर निछावर होनेमे गौरव समझती। यदि लज्जा होती तो कही डूब मरते।

विद्युत्प्रभ—अदूरदर्शी! मृत्यु तेरे सिरपर खेल रही है, परन्तु जिह्वा अभी तक बराबर चल रही है। क्या तू नही जानता कि तेरे प्राण इस समय मेरे हाथोमे है और चाहूँ तो एक क्षणमे तेरी समाप्ति कर दूँ। इस स्थानपर तेरा सहायक कौन है?

पवन—वह जिसने ससारमे मुझे सम्मान और तुझे अपमान प्रदान किया है।

विद्युत्प्रभ—अर्थात्—

पवन—जगदाधार परमेश्वर—जिसकी आज्ञाके विना रेतका एक कण भी अपने स्थानसे नही हिल सकता।

विद्युत्प्रभ—वह तेरी सहायता करेगा?

पवन—यदि मैने किसी पूर्व जन्ममे कुकर्म नही किये है तो अवश्य करेगा।

विद्युत्प्रभ—अकड़नेसे काम नही चल सकता। यदि जीवन प्यारा है, तो मेरे चरणोमे सिर रख और हाथ जोड़कर क्षमाकी भीखके लिए याचना कर, मै तुझपर कुछ दया कर दूँगा।

पवन—क्षत्रियका पुत्र इस दिनके लिए उत्पन्न नही होता, मुझसे यह आशा न रक्खो।

विद्युत्प्रभ—तो तुम मरनेको तैय्यार हो?

पवन—हाँ, क्षमा-याचनाकी अपेक्षा मरना अधिक सहल है।

विद्युत्प्रभ—(सेवकोंसे) ले जाओ, रातको मेरे महलमे कैद रक्खो। सबेरे इसकी प्रारब्धका अन्तिम निश्चय किया जायगा।

पवन—(जजीरोंको क्रोधसे मरोडते हुए) कमीने ! भीरु !

विद्युत्प्रभ—ले जाओ, विद्युत्प्रभ अब इसे देखना नही चाहता। आज इसकी बेबसी काफी है, कल मृत्युका दृश्य देखूँगा।

(एक तरफ विद्युत्प्रभका, दूसरी तरफसे सवकोंका और पवनका प्रस्थान)

सुखदा—वे ही दोनो वर है जिनमेसे एक मेरे लिए माता-पिताने और दूसरा मैने अपने आप पसद किया था। मालूम हो गया कि मेरी निर्णय शक्तिने भूल न की थी। एक कैसा भद्र, कैसा नेक और कैसा पवित्र है, दूसरा कितना अत्याचारी, कितना अन्यायी, कितना नीच है। परन्तु क्या मै इसके योग्य थी? नही, पवनके सहवासके लिए अञ्जना जैसी स्त्री ही यथेष्ट थी ताकि सूर्य और चन्द्रमाकी जोडी बन सकती। अञ्जनाको मैने मार दिया, पवनको बचाऊँगी। कदाचित् अञ्जना आज जीवित होती तो देखती कि सुखदा उसके पतिके बचावके लिए कैसी भयानक अवस्थामे पडनेको तैय्यार है। परन्तु यह मेरे पापका उचित प्रायश्चित होगा। इस पवित्र-हृदय वीरके मार्गमे मैने ही काँटे बिछाये, मै ही इसके लिए अपना बलिदान दूँगी। विद्युत्प्रभकी क्रोधाग्निको मैने भड़काया था, मै ही उसमे स्वाहा दूँगी और अपने इस जन्मके पापका फल इसी जन्ममे भोगकर अगले लोकमे पवित्र हृदय और पवित्र बुद्धिके साथ उत्पन्न हूँगी। (सुखदाका प्रस्थान)

(विद्युत्प्रभका प्रवेश।)

विद्युत्प्रभ—(चन्द्रमाकी ओर देखकर) चाँद, तू हँस रहा है।

(प्रस्थान)

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—हनुपुरका राजमहल ।

समय—सध्या

(वसन्तमाला अञ्जनाके बालकको थपक थपक कर सुलाती है। अञ्जना पवनकी यादमे गा रही है।)

श्याम कल्याण

जरि जरि भसम भई यह छाती।
कासो अपनी पीर बखानहुँ, जिया जरत दिन राती। जरि० ॥
तुम बिन कष्ट सहे बहु प्रीतम, तबहुँ न पठई पाती।
प्राण पखेरू उडन चहत है, नीद इन्हे नहि आती ॥ जरि० ॥
तुम बिन सब फीको लागत है, जिमि चातककी जाती।
तज करि सब सरिता-सागर-जल, पीवत बूँद सवाती ॥
जरि जरि भसम भई यह छाती।

वसन्तमाला—राजकुमारी, क्यो रो रो कर ऑखे नष्ट कर रही हो ? अपने शरीर और यौवनपर दया करो और जीवनके चार दिन आरामसे व्यतीत करो।

अञ्जना—आराम ! आराम कहॉ है ? उसकी मैने बहुत खोज की, उसके लिए बहुत प्रयत्न किये परन्तु उसका पद-चिह्न तक दिखाई नही दिया। तुम कहती हो अपने शरीर और यौवनपर दया करो, उनके बनाये रखनेका उपाय सोचो। परन्तु मै चाहती हूँ कि यदि विधाता मुझसे स्वास्थ्य सुदरता और सब कुछ वापस लौटाकर केवल उन्हे मुझे दे दे, तो मै जीवनके प्रकाशको हृदयमे धारण करके अपने नारी-जन्मको सफल समझूँ। वसन्तमाला, उनके बिना मुझे ससार अन्धकार प्रतीत होता है। क्या इस निराशाकी रात्रिका सबेरा नही होगा ?

वसन्तमाला—होगा राजकुमारी, अवश्यमेव होगा ।

अञ्जना—कब होगा ? उसके लिए मै अपना सर्वस्व लुटानेको उद्यत हूँ। क्या अभी तक राजकुमार रण-भूमिसे वापस न लौटे होगे ?

वसन्तमाला—मेरा विचार है कि तुम्हारी प्रारब्धके परिवर्तनमे अब अधिक देर नही, क्योकि महाराजने महेन्द्रपुरको आदमी भेज दिये है ।

अञ्जना—और वहाँसे अभी तक कोई उत्तर नही आया ?

वसन्तमाला—अभी तक तो नही आया, पर शीघ्र आ जानेकी आशा है ।

अञ्जना—(रोकर) परमात्मा ! मै तुमसे और कुछ नही चाहती, केवल उनकी पद-सेवाका सौभाग्य चाहती हूँ ।

वसन्तमाला—वह दिन कब आवेगा, जब मेरी प्यासी आँखे इस पवित्रताकी देवीको हँसते हुए देखेगी, इसके शरीरका एक एक परमाणु प्रेमके रगमे रगा हुआ है और आत्मा स्वर्गीय प्रकृतिसे अलकृत है।

[रविसुन्दरीका प्रवेश]

रविसुन्दरी—अञ्जना !

अञ्जना—(आँसू पोछती है और चुप रहती है ।)

रविसुन्दरी—बावली, क्यो रो रही है ? आँसुओको पोछ दे । सकटका समय बीत चुका है ।

अञ्जना—(खडी होकर ।) क्या—

रवि०—तुम्हारे माता-पिता आ गये है, और तुम्हारे लिए व्याकुल हो रहे है ।

अञ्जना—कहाँ है ? किधर है ? मुझे उनके पास ले चलो । यह शुभ समाचार सुननेके लिए मेरे कान पागल हो रहे है ।

रवि०—मूर्खा न बनो, आँसू पोछ लो और उनके पास प्रसन्न-मुख होकर चलो। तुम्हारे नेत्रोमे अश्रुकण और मुखपर उदासीनताकी झलक देखकर उनके घावोपर नमक छिडका जायगा। उन्होने तुम्हारे साथ जो अन्याय किया है, तुम्हारे सत्यपर जो अविश्वास किया है और उसके कारण तुम्हे जो कष्ट पहुँचा है, यह सब उन्हे स्मरण है, और उनमे साहस नही कि इस विषयपर मुँह खोल सके, परन्तु तुम्हे रोते हुए देखकर उनकी दशा अकथनीय हो जायगी।

वसन्तमाला—परमात्मा! तुझे शतश धन्यवाद है कि तूने इस अबलाके रुदनपर भी ध्यान दिया।

अञ्जना—नही मामी, नही, यह असभव है। दु खके आँसू रोके जा सकते है, परन्तु आनन्दके आँसू नही रुक सकते। मुझे उनके पास ले चलो। एक बार पिताकी छातीपर सिर रखकर रो लूँ। एक बार माताके गले लगकर दिलकी भडास निकाल लूँ, इस समय मेरी यही इच्छा है।

[रानी हृदयसुन्दरीका प्रवेश।]

हृदय०—रविसुन्दरी, बतलाओ मेरी अञ्जना कहाँ है?

अञ्जना—(गलेसे चिमटकर) माँ!

हृदय०—बेटी! बेटी!! मेरा दोष क्षमा कर।

अञ्जना—मा! तुमने कौन-सा दोष किया है? इस समय आँसू न बहाओ, मुँहपर दुखके चिह्न न लाओ। मुझे आनन्दका समय मिला है, तनिक हँस लेने दो (हँसती है और साथ ही रोती है।)

हृदय०—बस बेटी, बस। दुखके दिन बीत चुके है, अब किसी प्रकारकी चिन्ता न करो। अब सुखका समय तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा

है। परन्तु देखो, मेरा हृदय लज्जा और घृणासे सकुचा जा रहा है। मुझे क्षमा कर दो, मैंने तुम्हारे साथ अन्याय किया है।

अञ्जना—नही माताजी, नही, यह आपकी भूल है। माता-पिता अपनी सतानके साथ कभी अन्याय नही कर सकते। यह आपका दोष नही था, मेरी प्रारब्धका फेर था, मेरे पूर्व जन्मको कुकर्मोका फल था।

[राजा महेन्द्ररायका प्रवेश]

महेन्द्रराय—बेटी!

अञ्जना—(दौडकर आगे बढती है और गलेसे चिमट जाती है।) पिताजी, आखिर आपको अपनी अभागी पुत्रीका विचार आया।

महेन्द्रराय—नही बेटी, नही, तू अभागी नही वरन् हमारे सम्मान और आदरकी पात्र है। हम तेरे लिए यहाँ नही आये, अपने पापके धब्बेको मेटने आये है।

हृदय०—कितनी दुबली हो गई है। आँखोमे वह कान्ति नही, मुँहपर वह लाली नही, शरीरमे वह चचलता नही। हँसी, आनन्द, प्रसन्नता नहीं। यह सब हमारा दोप है।

महेन्द्रराय—यह स्वर्ण थी, मैंने इसे पीतल समझा। यह कुसुम थी मैंने इसे काँटा समझा। यह पवित्रता और धर्मकी जीती मूर्ति थी, परन्तु मेरी आँखे अँधी हो गई। इसने बहुत कुछ कहा, परन्तु मैंने कुछ न सुना। यह रोई, मैंने दुतकार दिया। इसने मिन्नते की, मैंने कान बद कर लिये, आँखे मोड ली। यह सब मेरा दोष है। बेटी अञ्जना, तुम्हारी माताने तुम्हारे लिए बहुत कुछ कहा, कई दिन भूखी प्यासी रोती रही, परन्तु मेरी बुद्धिपर पर्दा पडा हुआ था। मुझे तुमपर विश्वास न

हुआ। तुम्हारी सासके पत्रने उसे पाषाण बना दिया था। जब पवननने कहा कि तुमने पिता होकर भी पिताका काम न किया, उस समय मुझपर वज्रपात हुआ और मेरी ऑख खुल गई।

अञ्जना—अब यह कुछ न कहो। मै महेन्द्रपुरके लिए तरस रही हूॅ, मुझे वहॉ ले चलो। मेरा सारा दु ख दूर हो जायगा।

रविसुन्दरी—तो तुम्हे यहॉ बहुत दु ख है ?

अञ्जना—यहॉ दु ख है, यह कैसे कह सकती हूॅ ! जिस समय सास ससुरने दुतकार दिया था, माता-पिताने घरमे आश्रय देनेसे इनकार कर दिया था, जगलमे पडी एकान्तका जीवन व्यतीत कर रही थी, जब घृणा मुझपर हॅसती थी और दुःख मेरे लिए ऑसू बहाता था, ऐसे कुसमयमे आपने ही मुझे प्रेमके शब्दोसे सबोधन किया और मिट्टीसे उठाकर मस्तकपर चढा लिया। आपने ही मेरी निराशाको आशामें परिवर्तन किया, और मृत्युके मुॅहमे जाती हुईको जीवनके क्षेत्रमें लौटा लिया। यहॉ मुझे स्वर्गीय आनन्द प्राप्त हुआ, यहॉ मेरे हृदयके घावो पर मरहम लगी, यहॉ मेरी काली रातपर आशाका चन्द्र उदय हुआ, यहॉ मुझे माता-पिताके दर्शन हुए। यह स्थान मेरे लिए तीर्थराज है, स्वर्गसे बढकर है। परन्तु फिर भी मामी, स्त्रियोके लिए मातृगृह आकर्षणका स्रोत है, प्रेमका समुदर है। उसकी तुलना इन्द्रपुरी भी नही कर सकती।

रविसुन्दरी—धन्य हो देवी, धन्य हो। तुमने अपने योग्य बात की है।

महेन्द्रराय—एक एक शब्द प्रेम-रसमे डूबा हुआ हैं। यह कितनी महान् आत्मा है, और मै कितना नीच, कितना नराधम हूॅ। बेटी,

मुझे तुमपर गौरव है । तुम्हारे नाम लेनेसे मेरी जिह्वा पवित्र होती है। परन्तु तुमको मेरी पुत्री होनेके कारण ही ससारके सम्मुख सिर नीचा करना पडा है । ससारमे पुत्र पिताके कारण और स्त्री पतिके कारण मान पाती है । परन्तु तुम वह पुत्री और वह पत्नी हो, जिनके कारण तुम्हारे पिता और पतिका नाम भारतवर्षमे उज्ज्वल होगा— परन्तु मैन जो भूल, जो कठोरता, तुम्हारे साथ की है, उसके लिए आजीवन शोकातुर रहूँगा ।

हृदय०— वसन्तमाला !

वसन्तमाला—महारानी !

हृदय०—तुम्हारे प्रति कृतज्ञताके जो भाव मेरे हृदयमे है, उनको प्रकट करना मनुष्य-शक्तिसे बाहर है । जब इसका पति युद्धमे था, सास ससुरने त्याग दिया था, माता पिताने भी बेपर्वाही की थी, उस समय तुमने इसका साथ छायाके समान दिया और इसे निराशासे बचाया । नही तो इसका बचना कठिन ही नही, किंतु असम्भव था ।

वसन्तमाला—और यह मेरा सौभाग्य था कि मै इसकी सगिनी बनी रही । इसने मुझे दिखला दिया है कि पतिव्रता स्त्रियॉ जगमे अपना जीवन किस तरह बिताया करती है । परन्तु इस समय इन बातोको जाने दीजिए और अधिक आवश्यक और रोचक विषयकी ओर ध्यान दीजिए। देखिए, इसने ऑखे खोल दी है । (बालक दिखाती है।)

हृदय०—कौन ! अजनाका पुत्र ! आ बेटा, आ ! इस दिनके लिए मेरी ऑखे तरस रही थी । (हनुमानको गोदीमे ले लेती है।)

महेन्द्रराय—लो हॅस रहा है, समझता है मेरी नानी आई है ।

अञ्जना—बजरगी ! (चुटकी बजाकर) ओ बेटा बजरगी ! जरा नानी और नाना दोनोकी खबर लो। अरे रोने लग गये ! न रो बेटा, न रो। महारानी, दे दीजिए, यह हाथ पहिचानता है।

(हनुमानको हृदयसुन्दरी दे देती है।)

हृदय०—कैसा सुन्दर बालक है ! देखकर हृदय प्रफुल्लित हो उठता है, और ऑखोमे ज्योति जाग उठती है।

महेन्द्रराय—इस बनके फूलने राज-भवनमे आकर और भी शोभा पकड ली है।

[राजा प्रतिसूर्य्यका वेगसे प्रवेश]

प्रतिसूर्य्य—तुमने कुछ सुना ?

सब—नही, क्या समाचार है, आप घबराये हुए है।

प्रतिसूर्य्य—पवनका कोई पता नही मिलता।

महेन्द्रराय—तो घबरानेकी क्या बात है, मिल जायगा। वह कोई दूध पीता बालक नही है कि उसके लिए चिन्ता की जाय।

प्रतिसूर्य्य—नही, उसने प्रतिज्ञा की है कि यदि अञ्जनाकी खोजमे सफलता न हुई, तो आत्महत्या कर डूँगा। इस लिए यह सुख-स्वप्न त्यागिए, इस सभाको विसर्जन कीजिए और जितनी जल्द हो सके पशुमुखा बनके चप्पे चप्पेको छान डालिए। मैने इसी प्रयोजनसे, दो सौ आदमी भेज दिये है।

(अजना चकित रह जाती है। हृदयसुन्दरी रो उठती है।)

हृदय०—दयामय, मेरी पुत्रीपर दया कर।

महेन्द्रराय—चिन्ता न करो और परमात्मापर भरोसा रक्खो। मै इसी समय प्रस्थान करूँगा।

(वसन्तमाला और अजनाके सिवा सबका प्रस्थान)

अञ्जना—आशाकी किरण मुझे बार बार धोखा दे रही है। क्या अभी कुछ कसर बाकी है, जो अब भी चैन न लेने दिया और इस आनन्दके समयमे फिर चिन्ता डाल दी? विधाता, अब अधिक दु ख सहनेकी शक्ति नही।

वसन्तमाला—धैर्य्य धरो, राजकुमारी, धैर्य्य धरो!

अञ्जना—वसन्तमाला! मेरी सखि! मेरी बहिन! मेरे कानमे कोई कह रहा है कि वे इस समय विपत्तिमे है। उनपर सकट आया हुआ है। मेरी आत्मा शरीरमे फडफडा रही है। ओ, इस अन्धकारके समय वे अधेरेमे घबरा रहे होगे, मुझे वहॉ जाना चाहिए।

वसन्तमाला—तुम प्रेमसे विह्वल हो रही हो, इसीसे यह सोचती हो, परतु वास्तवमे भयका कोई कारण नही।

अञ्जना—वसन्तमाला!

वसन्तमाला—राजकुमारी! कहिए, मै आज्ञापालनके लिए तैय्यार हूँ।

अञ्जना—बालकको सम्हालो, मै बनमे जाऊँगी। मुझे समझानेका यत्न न करो, रोकनेका उपाय मत सोचो। तुमने मुझपर अनुगिनत उपकार किये है। उनमे एकको और वृद्धि करो—मुझे इस समय जाने दो। मै नही रह सकती, वे सकटमे है।

वसन्तमाला—और बालक—

अञ्जना—बालक तुम्हारे पास रह सकता है, तुम्हारे पास रहता आया है। अगर वे मिल गये, तो मै आकर इसे ले लूँगी, नही तो तुम ही इसकी माताके स्थानपर हो। मुझे तुम्हारे सिवा और किसीका विश्वास नही। (बालकका मुख चूमती है।) परमात्मा करे, मेरा यह प्यार अन्तिम न हो। लो अब जाऊँ।

वसन्तमाला—राजकुमारी!

अञ्जना—नही, कुछ न कहो, अनुरोध न करो, समय बीत रहा है और समस्या विषमतर हो रही है। मेरा जाना आवश्यक है।

(वेगसे प्रस्थान)

[हृदयसुन्दरीका प्रवेश]

हृदय०—वसन्तमाला, अञ्जना कहाँ है ?

वसन्तमाला—बनको चली गई है, पुत्रका स्नेह भी उसे रोकनेमे असमर्थ रहा है।

हृदय०—विधाता ! यदि उसके प्रारब्धमे इतने हेर-फेर थे तो तूने उसके हृदयमे इतना प्रेम क्यो भरा—इसकी उसे क्या आवश्यकता थी ? सेनापतिको कहो, कुछ सिपाही उसके साथ कर दिये जावे।

(दोनोंका वेगसे प्रस्थान)

छट्ठा दृश्य

स्थान—रत्नपुरका गुप्त बंदीगृह

समय—रातका पिछला प्रहर

(पवन लेटा हुआ अपने आपसे बाते कर रहा है।)

पवन—धीरे धीरे मृत्युकी घडी समीपतर आ रही है, और मेरे जीवनकी अंतिम रात्रि समाप्त हो रही है। परन्तु क्या वास्तवमे मै अपने जीवनकी एक मात्र अभिलाषाको पूर्ण न कर सकूँगा, और उसे,—जिसे मैने इतने सकटमे डाल रक्खा है, प्रेमके दो शब्द भी न कह सकूँगा। नही, अब यह असभव है। मेरे कुकर्मोका कडवा फल मेरे होठोसे लगा दिया गया है। उसे चखे बिना निस्तार नही हो सकता। तो क्या पर्वा है, क्षत्रियका बालक मृत्युकी छायामे

उत्पन्न होता है, उसके साथ खेलता हुआ बडा होता है, और अंतमे उसीके साथ सग्राम करता हुआ ससारकी दृष्टिसे ओझल हो जाता है। यह कडवा फल मधुर हो जाता, यह भयानक रात्रि शान्तिमय हो जाती अगर एक बार अञ्जनाको देख सकता। (द्वार खुलनेका शब्द होता है) क्या मृत्युका प्रभात हो गया ? तो मुझे उसके लिए तैय्यार रहना चाहिए ।

[सुखदाका प्रवेश]

पवन—कौन सुखदा ! मेरी ऑखे धोखा तो नही खा रही है ! मैने समझा था मौतके जमदूत आ गये ।

सुखदा—मैने आपके साथ अन्याय किया है, आपको दुःख दिया है, और आपकी कीर्तिको कलुपित किया है। इस समय मै आपसे इतनी प्रार्थना करने आई हूँ—

पवन—क्या ?

सुखदा—रात्रि अपने काले पैरोके साथ सवेग उडी जा रही है, और ज्यो ज्यो दिनका उजाला प्रकट हो रहा है, तुम्हारी मृत्युका समय समीप आ रहा है।

पवन—यह मै भली भॉति जानता हूॅ। क्षत्रियका बालक मृत्युको खेल समझता है।

सुखदा—बहुत वर्ष हुए, मैने तुमसे एक वस्तुकी याचना की थी। वह मुझे नही मिली। इस समय मै फिरसे एक विनती करती हूॅ, परमात्माके लिए उसे अस्वीकार न करो, मेरा हृदय टूट जायगा।

पवन—उस वस्तुके सिवा जो मै देनेसे इनकार कर चुका हूॅ, और जो कहो, करूॅगा।

सुखदा—ये क्षत्रियके वचन है ?

पवन—हाँ, क्षत्रियके वचन है।

सुखदा—जो मै कहूँगी, उसे स्वीकार कर लोगे ?

पवन—हाँ हाँ।

सुखदा—तो मेरे वस्त्र पहिन लो और यहाँसे निकल जाओ।

पवन—यह क्या कहा ?

सुखदा—क्षत्रियके वचन पूरे हुआ करते है।

पवन—परन्तु वह भागा नही करता।

सुखदा—इस समय जीवन और मृत्युका प्रश्न है।

पवन—शूरवीरोके लिए दोनो समान है।

सुखदा—तो तुम्हारे वचन झूठे होगे, तुम प्रतिज्ञा-भजक कहलाओगे ?

पवन—यह स्वीकार है, परन्तु यह स्वीकार नही कि एक स्त्रीको फँसाकर स्वय प्राण बचा लूँ।

सुखदा—मै स्वय मरनेको तैय्यार हूँ।

पवन—परन्तु मै नही हूँ।

सुखदा—पवन ! पवन ! परमात्माके लिए मेरी प्रार्थना अस्वीकार न करो। मैने जो पाप किया है, उसके प्रायश्चित्तका यह अवसर मिला है। इसे मुझसे न छीनो, मै बावली हो जाऊँगी।

पवन—सुखदा, यह असभव है। मै सौ बार मरनेकी और सौ बार उत्पन्न होनेकी यत्रणा सहन कर सकता हूँ, परन्तु यह नही कर सकता कि एक स्त्रीको मृत्युके मुँहमे धकेलकर अपने जीवनको बचानेके लिए भाग जाऊँ ?

सुखदा—परन्तु तुम्हे धोखेसे फँसाया गया है।

पवन—इसलिए भाग तो सकता हूँ, परन्तु किसी स्त्रीकी अपने स्थानमे आहुति नही दे सकता ।

सुखदा—तो मेरी प्रार्थना स्वीकार नही होगी ?

पवन—नही ।

सुखदा—तुम यहॉसे भागकर प्राण नही बचाओगे ?

पवन—नही, नही ।

सुखदा—तो मुझे तुम्हारे सरपर चढ़कर आत्म-हत्या करनी पडेगी । (छुरी निकालकर अपने सीनेमे मारना चाहती है ।)

पवन—ठहरो सुखदा, ठहरो, यह पाप मेरे सिर न चढाओ ।

सुखदा—बोलो, स्वीकार है या नही ?

पवन—मुझे सोचने दो ।

सुखदा—सोचनेका समय गया । अब एक शब्द ही बोलो, हॉ या नही ।

पवन—एक क्षण !

सुखदा—नही, बोलो, स्वीकार है या—

पवन—स्वीकार है सुखदा, इस बाजीमे तुम्हारी जीत रही ।

सुखदा—लो, मेरे कपडे पहनो और निकल जाओ ।

(कपडे बदलते हैं)

पवन—रात कितनी बाकी है ?

सुखदा—पॉच छः घडी ।

पवन—तो तुम्हे बचाया जा सकता है ।

सुखदा—इसकी आवश्यकता नही ।

पवन—परन्तु मेरा धर्म है । सुखदा मैने तुम्हे आज तक न पहिचाना था, इस समय तुमने अपना आप मुझपर प्रकट कर दिया

है और दिखा दिया है कि स्त्रीका हृदय कितना उच्च, कितना महान् और कितना विशाल होता है।

सुखदा—परन्तु तुमने मुझे अभी तक नही पहिचाना।

पवन—अगर अञ्जना न होती, तो मै परमात्मासे प्रार्थना करता कि वह मुझे तुम जैसा नारी-रत्न देकर कृतार्थ करे।

सुखदा—कैसे प्रेमपूर्ण शब्द है! मेरा जन्म आज सफल हुआ। परन्तु राजकुमार, तुमने मुझे अभी तक नही पहिचाना। यदि पहिचान लेते तो मुझसे घृणा करते।

पवन—नही, नही सुखदा, अब यह नही हो सकता। तुमने सहस्रो पाप किये हो, परन्तु मेरी आँखे उनपर नही उठ सकती। तुम अद्भुत स्त्री हो। तुम्हारे प्रेममे जलन है, तुम्हारी घृणामे जलन है। तुम अद्भुत स्त्री हो। प्रतीकारके लिए अपनी सारी जवानी भेट कर देना असाधारण घटना है। परतु आँखे खुलनेपर उसका प्रायश्चित्त करनेके लिए अपने प्राण तक निछावर करनेको उद्यत हो जाना, उससे भी अधिक असाधारण घटना है। तुम अद्भुत स्त्री हो।

सुखदा—जी तो नही चाहता, परन्तु विवश होकर कहना पडता है कि इस समय यहाँसे निकल जाओ।

पवन—परमात्मा करे, मै तुम्हे इस मृत्युसे बचा सकूँ।

सुखदा—मै बच जाऊँगी।

(पवनका प्रस्थान)

सुखदा—आज पता लगा कि प्रेम और प्रतीकारमे कितना अन्तर है। इस समय उसके मुँहपर कैसी प्रसन्नता, कैसी कान्ति थी। देख कर हृदयकी ज्वाला शीतल हो गई। कदाचित् मै यह बात पहले जानती तो इस अग्निसे इतने हृदय दग्ध न होते। निर्दोष अञ्जनाके

सास ससुर रो रहे है, माता पिता रो रहे है, पति रो रहा है, परन्तु वह कहॉ है ? ओ. मेरी ऑखे भयसे बंद होने लगी है। मेरे पापी हाथ कॉप रहे है। इन्हीने उसकी छातीमे छुरी भोक दी थी। यदि यह बात पवनको बता देती तो क्या फिर भी वह मुझसे इसी तरह बोलता ? बस, यह उचित प्रायश्चित्त है कि उसके लिए यहॉ मर जाऊॅ। इस समय मौत कैसी प्यारी मालूम होती है ! (सुखदाका कबल ओढकर लेट जाना ।)

[विद्युत्प्रभका प्रवेश]

विद्युत्प्रभ—कैदी ! क्या सो रहा है ?

सुखदा—(एकाएक खडी होकर) राजकुमार !

विद्युत्०—हाय ! तुम कौन हो, सुखदा ?

सुखदा—हॉ हॉ सुखदा, पहिचान लिया ?

विद्युत्०—बोलो, पवन कहॉ है ?

सुखदा—निकल गया, भाग गया ।

विद्युत्०—और इसमे सहायता तुमने दी ।

सुखदा—हॉ हॉ मैने, ये कपडे देखते हो ?

विद्युत०—मूर्खा स्त्री ! तुमने यह क्या कर दिया !

सुखदा—वही जो करना उचित था ।

विद्युत्०—शायद सोया हुआ प्रेम जाग उठा होगा ।

सुखदा—चुप ! तुम इस शब्दके अधिकारी नही हो, नराधम !

विद्युत्०—इसका पुरस्कार तुमको लेना पडेगा ।

सुखदा—यह मैने पहले सोच लिया है ।

विद्युत्०—मेरा क्रोध अब तुमपर उतरेगा ।

सुखदा—इसकी मुझे तानिक भी चिन्ता नहीं ।

विद्युत्०—परन्तु मेरा क्रोध अति भयानक होगा ।

सुखदा—मुझे पहलेसे मालूम है। तुम्हारी प्रकृतिसे मै पूर्णतया परिचित हूँ।

विद्युत्०—तुमने यह क्या किया ?

सुखदा—अपने पापका प्रायश्चित्त !

विद्युत्०—परन्तु मेरे परिश्रमपर तो पानी फेर दिया !

सुखदा—नही, यह न कहो, मैने विषका प्याला जो तुम्हारे होठोतक पहुँच चुका था तोड दिया है। मैने पापका सर्प जो तुमको डसने लगा था, हटा दिया है। मैने अज्ञानकी पट्टी जो तुम्हारी ऑखोपर थी, उतार दी है, अब उसे दोबारा ऑखोपर न चढाओ। विद्युत्प्रभ, तुमने बहुत पाप किये है। परन्तु अभी समय बाकी है, शरीरमे शक्ति है, बुद्धि सोचती है, अधकारसे बाहर निकलो, प्रकाशमे आओ, पाप और पुण्यका विचार करो और सोचो कि तुम यहॉ क्या करने आये थे और क्या कर रहे हो। अभी अवसर है, इसे हाथसे न जाने दो।

विद्युत्०—मुझे तुम्हारे उपदेशकी आवश्यकता नही। तुमने भूखे शेरके मुँहसे उसका शिकार छीना है, तुमने सोते हुए सर्पको ठोकर लगाई है, तुमने क्रोधाग्निको प्रचण्ड किया है, अब मृत्युसे क्यो डर रही हो ?

सुखदा—मै मृत्युसे डरूँगी, यह तुम्हारी भूल है। मैने प्रेम-सुधा रस पान किया है, मैने प्रेमके शब्द सुने है, क्या तिसपर भी मृत्यु भयावनी और डरावनी रह सकती है ? नरपिशाच ! मृत्यु तेरे जैसे दुष्टात्माओके लिए भयजनक होगी। यदि मेरी मृत्यु तेरे सन्मुख आवे तो तुझे दिखा दूँ कि क्षत्रियकी बेटी किस बहादुरीसे मरना जानती है।

विद्युत्०—इतना घमण्ड ?

सुखदा—हाँ हाँ इतना घमण्ड ।

विद्युत्०—मूर्खा ! मृत्यु बड़ी भयानक होती है ।

सुखदा—परन्तु मेरे लिए नहीं ।

विद्युत्०—क्यो ?

सुखदा—मैने अपना ऋण उतार दिया है ।

विद्युत्०—अर्थात्—

सुखदा—एक प्राणीकी जान ली थी, एकको बचा दिया है ।

विद्युत्०—तो तुझे इसपर शोक नही ?

सुखदा—नही ।

विद्युत्०—कुछ भी ?

सुखदा—जरा भी नही ।

विद्युत्०—सिपाही !

[सिपाहीका प्रवेश]

विद्युत्०—ऑखोवाले अधे ! देख, यह स्त्री थी जो कैदीसे मिलने आई थी । परन्तु तू भग पिये पडा रहा और पक्षी पिंजरेसे निकल गया । मगर अब मेरे क्रोधका शिकार यही स्त्री होगी । जाओ, जाकर अपने आदमियोको हुक्म दो कि यहॉ चिता चुन दे । मै इसे ऑखोके सामने जलाकर भस्म कर दूँगा ।

(सिपाहियोका चिता जलाकर आग लगा देना और सुखदाके हाथ-पैर बॉध देना ।)

सुखदा—मेरी मृत्यु ! मै तेरे लिए व्याकुल हो रही हूँ ।

विद्युत्—अभी शान्त हो जाओगी ।

सुखदा—इसकी पर्वा नही, परन्तु तुम्हारी चिन्ता है ।

विद्युत्०—क्या ?

सुखदा—वह समय आनेवाला है, जब तुम इसी तरह—जिस तरह मै तुम्हारे सम्मुख खडी हूँ, पवनके सामने प्राणोकी भिक्षा माँग रहे होगे। उस समय उनसे कह देना कि सुखदा मरते समय तुम्हारा नाम होठोपर और तुम्हारा चितन मनमे लिये हुए मरी है। और कहती गई है कि विद्युत्प्रभको पाप-कर्मपर मैने उभारा था, इस लिए यदि तुम समझते हो कि मैने तुमपर कोई उपकार किया है, तो उसकी स्मृतिमे विद्युत्प्रभको प्राण-भिक्षा दे दो। मेरी आत्मा प्रसन्न हो जायगी।

विद्युत्प्रभ—ओह! यह वाग्बाण असह्य हो रहे है। उठा कर आगमे फैक दो।

(सिपाहियोका सुखदाको आगमे फैकना। अञ्जनाका मरदाना वेशमे सिपाहियो समेत आना और सुखदाको आगसे निकाल लेना। विद्युत्प्रभ और उसके सिपाहियोका भाग जाना। सुखदाका अचेत पडे रहना।)

अञ्जना—परमात्मा! तेरी अपार दया! मैने अपने पतिका ऋण उतार दिया। यही स्त्री है जो मेरी यन्त्रणाका कारण बनी। इसीने मुझ पर दोषारोपण किया। इसीने मुझे ससारकी दृष्टिमे नीचा किया। परन्तु अब इसीने मेरे प्राण-पतिके प्राण बचाये है। अब यह मेरी सखीके समान है। सिपाही! इसे हनुपुर ले जाओ और आरामसे रक्खो। मै उनको खोजकर आऊँगी। उनको अभीतक मालूम नही कि मेरा पता लग गया है। कही वह—ओह परमात्मा! मै क्या करूँगी

(यवनिका पतन)

पाँचवाँ अङ्क

पहला दृश्य

स्थल—हनुपुरका राजमहल

समय—दोपहर

[वसन्तमाला और वैद्यराज]

वसन्तमाला—तो क्या अभी तक कुछ आराम नही हुआ ?

वैद्यराज—अभी नही ।

वसन्तमाला—और उसी तरह पागल है ?

वैद्यराज—उसी तरह ।

वसन्त०—आह ! कैसा भयानक रोग है !

वैद्यराज—सोती सोती बड़बडाकर उठी, पहरेदारोको बुलाया और बोली, मैने यहॉ कुछ आदमी देखे थे, वे कहॉ है । पहरेदारोने उत्तर दिया, यहॉ कोई नही आया । इसपर क्रोधमे आ गई, और कहने लगी, तुम झूठ बकते हो ! इसके बाद रोई, फिर हॅसी । फिर अपना दुपट्टा लेकर अपने हाथ बॉध लिये और पैरोमे जजीर डाल ली । इसके बाद भूमिपर घुटने टेककर बैठ गई, और इतनी रोई, इतनी रोई कि कपडे तर हो गये । फिर हॅसी और चारपाईके नीचे लेटकर गहरी नीदमे सो गई । एकाएक चिल्लाकर फिर उठी और अपना मुॅह नोच लिया ।

वसन्तमाला—और यह सब कुछ बेहोशीमे करती है ?

वैद्यराज—पूरी बहोशीमे, लो वह इधर ही आ रही है ।

वसन्तमाला—ऑखोसे प्रत्यक्ष प्रतीत होता है कि पूरी पगली है ।

वैद्यराज—सुनो, कुछ कह रही है।

[हाथपैर जकडे हुए सुखदाका प्रवेश]

सुखदा—छोड दो, मै अब कुछ न करूँगी, मुझे नीद आ रही है।

वैद्यराज—राजकुमारी, अब क्या हाल है ?

सुखदा—मौतके जमदूत मेरे पीछे पड़े हुए मुझे नरकमे ल जानेका यत्न कर रहे है। मगर मै वहॉ न जाऊँगी। वहॉ अग्नि है, मुझे गरमी लगेगी। वहॉ अथाह सागर है, मै डूब जाऊँगी। वहॉ स्याही है, मेरा रग काला हो जायगा।

वैद्यराज—राजकुमारी, क्या कह रही हो ?

सुखदा—तुम कौन हो, जो मेरा कहना नही मानते ? यहॉसे चले जाओ। तुम्हारी बातोसे हृदय कॉप उठता है। तुम्हारी ऑखोमे कैसी लाली है ! इसे देखकर मुझे अञ्जनाका खून याद आता है। रात अन्धेरी थी, दुनिया चुप थी, वायु सोया हुआ था, परन्तु मेरे हृदयमे भूकम्प उठ रहा था।

वैद्यराज—चलो फिर वही अञ्जना याद आ गई।

सुखदा—तो क्या छुटकारा नही हो सकता ? हाय क्या रिश्वत दूँ ? ऑसू ले लो, ठडी आहे ले लो। पर तुम नही सुनते, क्या तुम नही जानते कि मै कौन हूँ। मै अमृतपुरके राजाकी बेटी हूँ। मैं आज्ञा दे रही हूँ परन्तु तुम नही सुनते। मेरा राज्य ले लो। मै भिखारिन बनकर रह लूँगी, मै नरकमे न जाऊँगी। कौन कहता है मैने अञ्जनाको मारा है ? वह तो ललिता थी, मै सुखदा हूँ।

वसन्तमाला—प्रकृतिका कितना भयानक प्रतीकार है !

वैद्यराज—आज अवस्था बहुत बिगड़ गई है, दवाई दी थी ?

वसन्तमाला—हॉ, दो बार दे चुकी हूँ, परन्तु कोई असर नही हुआ।

सुखदा—नही वह तुम्हारा है, मै कुछ न बोलूँगी, कुछ न कहूँगी, तुम उसे लेकर आरामसे रहो। मै ठडी आह भी न भरूँगी। केवल देखकर ऑखे तृप्त करूँगी। वह देखता है, तुम देवी हो, मै राक्षसी बनकर मध्यमे कूद पडी, परन्तु अब न कूदूँगी। राजकुमारी अञ्जना! मुझे क्षमा करो। मै सजल नेत्रोंसे प्रार्थना कर रही हूँ, क्या तुम्हे मुझपर तरस नही आता? मेरा हृदय टूट गया है।

वसन्तमाला—(कॅधेपर हाथ रखकर) राजकुमारी, होश करो।

सुखदा—तुम स्त्री हो?

वसन्तमाला—हॉ।

सुखदा—उसमे हृदय है?

वसन्तमाला—हॉ।

सुखदा—तो परे हटो, मेरे पास न आओ, उसमे प्रेम छिपा होगा।

वसन्तमाला—शोक, इसका क्या हाल हो गया!

सुखदा—अपने हृदयको निकाल, उसे पीसकर चकनाचूर कर दे और मेरे समीप आ, मै तुझे हृदय-शून्य समझकर प्यार करूँगी। परन्तु हृदयके रहते हुए तेरी छाया भी अपने ऊपर न पड़ने दूँगी, प्रेम फिर मेरे हृदयमे व्याप्त हो जायगा। बोल तेरे हृदय है?

वसन्तमाला—हॉ है।

सुखदा—उसे किसीकी चाह है।

वसन्तमाला—एक स्त्रीकी।

सुखदा—स्त्रीकी?

वसन्तमाला—हाँ एक स्त्रीकी ।

सुखदा—तो कोई हर्ज नही, मेरे पास आ, मुझे थोडा-सा प्रकाश ला दे, मै काले दिलमे रख लूँगी, वहाँ चाँदना हो जायगा । देख मैं गिरी, मुझे कुछ दिखाई नही देता । मेरा हृदय टूटा, थोड़ी-सी महरम दे, उसे जोड लूँगी । क्या तूने अञ्जनाको देखा है ?

वसन्तमाला—हाँ देखा है ।

सुखदा—कब ? कहाँ ? वह तो मर चुकी है ।

वसन्तमाला—नही, वह तो जीती है ।

सुखदा—झूठी ।

वसन्तमाला—तुमने भूलसे चंपाको मार दिया, अञ्जना बच गई है ।

सुखदा—यह प्रकाश कहाँसे आया, मेरा हृदय चमक उठा । तुम्हारी आँखोसे, हाँ उन्होने अञ्जनाको देखा है । वह प्रकाशमयी ज्योतिर्मयी थी, मेरा हृदय चमक उठा है । तुम्हारे कोमल हाथोमे उसकी कोमलता है, उसे मेरे जले हुए हृदयपर फेरो ।

वसन्तमाला—परमात्मा करे, मेरी आँखे तुम्हे आनन्दमे देख सके ।

सुखदा—जब आनन्द बह रहा था, उस समय मेरा आत्मा प्रतिकारके लिए व्याकुल हो रहा था, दौडो ! वे फिर आ गये ।

वैद्यराज—फिर दौरा हुआ ।

वसन्तमाला—कौन आ गये ?

सुखदा—यन्त्रणाके जमदूत । उनके हाथोमे अग्निके गुर्ज है । परमात्मा बचा, मै अब कभी प्रेम न करूँगी । (वेगसे प्रस्थान)

वैद्यराज—रोग दिन प्रति दिन बढ रहा है ।

वसन्तमाला—पापोका दण्ड इस जगतमे ही मिलने लग गया ।

(प्रस्थान)

दूसरा दृश्य

स्थान—पशुमुखा बनका भीतरी भाग

समय—चॉदनी रात

[शेरो और गीदड़ोकी आवाजोमे प्रहसित अकेला खड्ग लिये खडा है।]

प्रहसित—क्या करूॅ, किधर जाऊॅ, कुछ पता नही लगता। बराबर कई दिनसे खोज रहा हूॅ, पैरोमे छाले पड गये है, शरीर जर्जर हो गया है, परतु राजकुमारका पद-चिह्न तक दिखाई नही देता। इधर अञ्जना देवीका भी कुछ पता नही लगा। ऐसे जगलमे कब तक निर्वाह हो सकेगा! घोर असमजसमे पडा हूॅ, न राजकुमारका पता लगता है, न वापस जा सकता हूॅ। महाराजको कौन-सा मुॅह दिखाऊॅगा। जब वे पूछेगे कि राजकुमार तुम्हारे सुपुर्द किया गया था, कहॉ है, तो क्या उत्तर दूॅगा। जब वे निराश होकर ऑसूभरी ऑखोसे मेरी ओर देखेगे तो कैसे सहूॅगा। (शेरकी आवाज) शेर बोल रहा है। निश्चय वह इधर आ रहा है। (चीखकी आवाज) हाय, किसी मनुष्यपर आक्रमण कर रहा है। क्या यह पवन ही तो नही? (तलवार खेंचकर प्रस्थान, और थोडी देरके बाद पवनको उठाये हुए प्रवेश। तलवारसे खून टपक रहा है।) यदि मै समयपर पहुॅच न जाता, तो निश्चय राजकुमार शेरका शिकार हो गये थे। परमात्मा! तुझे धन्य है कि तूने मुझे राजकुमार वापस किया।

(मरहम लगाते हैं। पवन ऑख खोलता है।)

प्रह०—राजकुमार!

पवन—कौन प्रहसित?

प्रह०—हॉ, आपका सेवक प्रहसित।

पवन—कुछ पता चला ?

प्रह०—नही ।

पवन—कुछ ?

प्रह०—कुछ नही ।

पवन—तो मुझे बचानेकी क्या जरूरत थी, तुमने मुझे क्यो चाया ?

प्रह०—राजकुमार उनका पता लग जायगा।

पवन—लग जायगा ? नही, तुम मुझे धोखा दे रहे हो। उसका ता नही लग सकता। वह स्वर्गकी देवी स्वर्गमे पहुँच चुकी और तुम झे व्यर्थ धोखा दे रहे हो। अगर वह जीती होती, तो इस समय रा नाम वनमे गूँजता होता। मेरी आत्माको ज्ञान हो जाता कि वह हाँ है। परन्तु देखते हो, चाँदनी कैसी फीकी है, वनकी शोभा कैसी दास है! नही मित्र, मुझे धोखा न दो, वह इस जगतमे नही है।

(जोशसे खडे हो जाते हैं)

प्रह०—राजकुमार लेट जाइए, घाव खुल जायँगे।

पवन—खुल जाने दो, मुझे इसकी चिन्ता नही। देखो, शेर दहाड हा है। मुझे जाने दो, मै अपना सिर उसके मुँहमे दे दूँगा।

प्रह०—जब तक मेरे हाथोमे तलवार और तलवारमे काट करनेकी क्ति है, तब तक आपकी ओर क्या मजाल है जो शेर पैर भी बढा के। मृत्युकी क्या मजाल है जो आपकी ओर आँखे भी उठा जाय।

पवन—शोक! मुझमे इतना सामर्थ्य भी नही कि मर ही सकूँ। झसे अधिक अभागा कौन हो सकता है प्रहसित ?

प्रह०—राजकुमार!

पवन—तुम मेरे मित्र हो, तुमने मेरी बहुत सेवा की है।

प्रह०—नही, मैने कुछ नही किया।

पवन—एक बात मानोगे ?

प्रह०—आज्ञा कीजिए, मै पालन करूँगा।

पवन—मुझे अकेला छोड दो, मै उसे ढूँढूँगा।

प्रह०—क्या मेरा साथ खोजमे बाधक है ?

पवन—परन्तु मेरा हृदय एकान्त चाहता है।

प्रह०—एक बार साथ छूट गया था, तो कई दिन रोता रहा हूँ। अब साथ न छोड़ूँगा। छायाके समान आपके साथ साथ रहूँगा।

पवन—तो आओ, चलकर उसकी खोज करे, कदाचित् मिल जाय।

(वेगसे प्रस्थान)

प्रह०—ठहरो राजकुमार, ठहरो, मै भी आता हूँ। (प्रस्थान)

[रत्नवीर और श्रीदेवका प्रवेश।]

रत्नवीर—तो कुछ पता चला ?

श्रीदेव—केवल यह कि वह हनुपुरके राजमहलमे है, और वहाँ उसका इलाज हो रहा है।

रत्नवीर—यह पुरानी बात है।

श्रीदेव—इसके बाद कोई समाचार नही ?

रत्नवीर—है।

श्रीदेव—क्या ?

रत्नवीर—वह पागलपनमे बाहर निकल आई है, और इस समय इस वनमे है।

श्रीदेव—इस वनमे ?

रत्नवीर—हाँ हाँ, इसी वनमे। इस लिए सावधान रहो, बदला लेनेका समय आ गया है। वह चम्पाकी आत्मा अशान्तिसे इधर देख रही है। सुखदा, तेरा बचना अब कठिन ही नही, असम्भव है।

श्रीदेव—वह कौन स्त्री इधर आ रही है।

रत्नवीर—(देखकर) सुखदा नही, इस लिए आओ चले और उसको ढूँढे। (दोनोका प्रस्थान)

[अञ्जनाका प्रवेश]

अञ्जना—चाँद! कुछ तू ही बता। वृक्षो! कुछ तुम ही बोलो। भूमि, तू भी चुप है, वायु, तुझसे किसी लाचारकी सहायता नही होती। पता नही, मेरे प्रारब्धमे अभी क्या लिखा है।

[चार सिपाहियोका प्रवेश]

अञ्जना—(एकसे) कुछ पता चला?

पहला—कुछ नही।

अञ्जना—(दूसरेसे) तुम्हे?

दूसरा—हमारे चले आनेके बाद राजकुमार आदित्यनगरके गुप्त बदीगृहमे राजकुमारी सुखदाको छुडवाने गये, परन्तु निराश होकर लौट आये। राहमे उन्हे मालूम हुआ है कि उनके सैनिक उसे छुडवा कर ले गये है। परन्तु यह समाचार उन तक नही पहुँचा कि सैनिकोके साथ आप भी थी। इस लिए वे उसी तरह घबराये हुए आपकी खोजमे चले गये।

अञ्जना—कुछ यह भी पता लगा कि वे किस ओर गये है?

दूसरा—इसी वनकी ओर।

अञ्जना—(तीसरेसे) कुछ तुम्हे भी मालूम हुआ?

तीसरा—कोई दो घडीकी बात है, मै एक ऊँचे वृक्षपर चढकर चारो ओर देख रहा था। क्या देखता हूँ कि राजकुमार चुपचाप चॉदकी ओर टकटकी लगाकर देख रहे है और किसी गहरी निद्रामे निमग्न है। इतनेमे एक भयानक सिह झाडीसे निकला और राजकुमारपर लपका। राजकुमारने चीत्कार किया और मै वृक्षसे उतरकर वेगके साथ उधरको दौडा।

अञ्जना—(घबराकर) इसके बाद फिर क्या हुआ ? तुम वहॉ पहुँचे ?

तीसरा—परन्तु वहॉ पहुचकर क्या देखता हूँ कि सिहकी लाश पडी है और भूमि रुधिरसे लाल हो रही है।

अञ्जना—और राजकुमार ?

तीसरा—उनका कोई पता नही लगा। परन्तु यह साफ प्रकट होता है कि वे है, चिन्ताकी कोई बात नही।

अञ्जना—(चाथस) कुछ तुम्हे पता लगा या नही ?

चौथा—जब सिंहने उनपर आक्रमण किया तो प्रहसित उसी स्थानपर उनकी खोज कर रहा था। चीत्कार सुनकर वह तलवार लेकर चढ दौड़ा और सिहपर लपका। सिहने क्रोधमे आकर राजकुमारका ध्यान छोड दिया और प्रहसितपर झपटा। प्रहसितने तलवार उसके पेटमे भोक दी और राजकुमार और अपने आप दोनोको बचा लिया। परन्तु जोशकी हालतमे राजकुमार प्रहसितसे फिर बिछुड गये है। मैने उनको बता दिया है कि यदि रामकुमारका मिलाप हो तो उनसे कह दे कि आप जीती जागती है और उनकी खोजमे भटक रही है।

[महात्मा अश्वपतिका प्रवेश]

अञ्जना—प्रणाम करती हूँ भगवन् !

अश्वपति—सौभाग्यवती हो पुत्रि ! ऐसी रातमे और ऐसे वनमे तुम कहाँ भटक रही हो ?

अञ्जना—महाराज अभी तक—

अश्वपति—क्षत्रियका उत्साह न छिप सका। रात्रिका अन्धकार चन्द्रमाकी चाँदनीको न हटा सका। शाबाश ! बेटी शाबाश ! यही पातिव्रत्य धर्म भारतकी सम्पत्ति है। वह देखो धुँआ उठ रहा है। वहाँ राजकुमारसे मिलाप होगा। शीघ्रतासे पैर उठाओ। राजकुमार आत्म-हत्या करनेकी तैय्यारियाँ कर रहा है। उसे विश्वास हो गया है कि तुम इस ससारमे नही रही।

अञ्जना—महाराज कही—यदि यह हुआ तो मै कहींकी न रहूँगी।

अश्वपति—शान्ति ! पुत्रि शान्ति ! तुम्हारे बालकके प्रारब्धमे पितृवियोगका दुःख नही लिखा है। निश्चिन्त होकर जाओ, तुम्हारे दुःखोकी यह अन्तिम रात्रि है। कलके सूर्यकी पहली किरण तुमको मुस्कराते हुए देखेगी।

अञ्जना—परमात्मा उनकी रक्षा करे, मै और कुछ नही चाहती।

(एक ओरसे अजना और सिपाहियोका, दूसरी ओरसे अश्वपतिका प्रस्थान।)

[तीसरी ओरसे प्रहसितका प्रवेश]

प्रह०—फिर बिछुड़ गया। पता नही, प्रारब्धमे क्या लिखा है। मै तीरकी तेजीसे गया, परन्तु तिसपर भी उन तक न पहुँच सका। आशाकी बिजली चमककर फिर छिप गई। अन्धकार और गाढ़ा हो गया। महाराज आ रहे है, उनको मै क्या कहूँगा ?

[राजा प्रतिसूर्य्य, महेन्द्रराय और सिपाहियोका प्रवेश ।]

महेन्द्रराय—प्रहसित !

प्रह०—श्रीमान् नरेश !

महेन्द्रराय—यहॉ क्या कर रहे हो ?

प्रह०—महाराज ! राजकुमार बिछुड गये है ।

महेन्द्रराय—वह धुऑ उठ रहा है देखते हो ?

प्रह०—हॉ महाराज, देखता हूॅ ।

महेन्द्रराय—राजकुमार वही है ।

प्रह०—क्या श्रीमानने देखा ?

महेन्द्रराय—नही, देखा नही, एक महात्माने बतलाया है ।

प्रह०—तो चलिए चले, वे कुछ कर न गुजरे ।

प्रतिसूर्य्य—नही, अब यह नही हो सकता । अञ्जना उधरको जा चुकी है । मुद्दतसे बिछुडे हुओका मेल होनेको है, इस लिए तनिक ठहर जाओ, दिलकी भडास निकल जाने दो ।

महेन्द्रराय—आपने कुछ और भी सुना ?

प्रतिसूर्य्य—क्या ?

महेन्द्रराय—राजकुमारी सुखदाने प्रतिकारके लिए अञ्जनाको मारना चाहा था, परन्तु सौभाग्यसे यह तजवीज एक दासी चम्पाने सुन ली । वह जल्दीसे पशुमुखा वनमे पहुॅची और सोती हुई अञ्जनाको उठाकर दूसरे स्थानमे डाल दिया और आप उसके स्थानमे सो गई ।

प्रतिसूर्य्य—फिर ?

महेन्द्रराय—क्रोधसे अधी बनी हुई सुखदा रातके समय छुरी लेकर आई और अन्धकारमे पहचान न सकी कि अञ्जना बच गई और चम्पा मारी गई । अब उसके दोनो भाई रत्नवीर और श्रीदेव

सुखदाके मारू हो रहे है, और उसकी खोजमे लगे हुए है। जब तक वह आपके पास थी, तब तक भय न था, परन्तु अब वह वहाँसे निकल आई है।

प्रतिसूर्य्य—मूर्ख स्त्री नही जानती कि मृत्यु उसके सिरपर खेल रही है, और दुर्भाग्य उसे इस वनमे खेच लाया है। परन्तु आपने विद्युत्प्रभके बारेमे भी कुछ सुना ?

महेन्द्रराय—नही, कुछ नही।

प्रतिसूर्य्य—वह साधू हो गया है और राजपाट त्याग करके इसी मनमे आरहा है। कही पास ही उसकी कुटिया है। वह चाहता है कि अपने कुकर्मोका पश्चात्ताप करे और पहले जीवनमे जितनी बुराई कर चुका है, अब उससे अधिक भलाई करे।

महेन्द्रराय—परमात्मा करे कि उसका मनोरथ सफल हो और वह सन्मार्गपर चल सके। हमारी यही इच्छा है।

(सबका प्रस्थान)

तीसरा दृश्य

स्थान—पशुमुखा बनका एक अन्य भाग

समय—चॉदनी रात

[चिता जल रही है। पवन टूटी हुई ॲगूठी लिये सामने खडा है।]

पवन—इस बातका जीता जागता प्रमाण कि अञ्जना अब इस लोकमे नही है, इस बातका अखण्डनीय विश्वास कि उसका मेल इस ससारमे असम्भव है, यह टूटी हुई ॲगूठी है। वह प्रेममयी थी, प्रेम उसके शरीरमे रुधिरकी धारा बनकर चक्कर लगाता था। प्रेम उसके

जीवनकी ज्योति थी। वह प्रेम खाती थी, प्रेम पीती थी, और प्रेमके वायुमे निवास करती थी। इस वनमे जहाँके काँटे नुकीले और वृक्ष हृदयशून्य है—वह कैसे जीती रह सकती थी? वह कुसुमके समान पवित्र थी परन्तु दुनियाकी आँखोने उसे न पहचाना और निर्दय हृदयोने उसका वह सम्मान न किया, जिसके वह योग्य थी। उसका किसीने विश्वास न किया, उसके कहनेपर किसीने कान न धरा। सास गैर थी, धोखा खा गई, परन्तु माता-पिता भी अंधे हो गये। उनकी तो वह बेटी थी, उनकी बुद्धिपर क्यो पर्दा पड गया? वह प्रेम जो माता-पिताकी दुनियामे कुरूप सन्तानको सुरूपवान् और सामान्य बुद्धिको अद्भुत चमत्कार बना देता है, जो सन्तानके तनिक संकटपर फूट फूटकर रोता है और उसकी प्रसन्नतापर आनन्दसे पागल हो उठता है, उस समय कहाँ सोया हुआ था? सहानुभूतिका वह स्रोत जो माता पिताकी छातीकी सन्तानकी आँखमे एक अश्रुबिन्दु देखकर उबल पडता है उस समय कहाँ छिपा हुआ था? चाँद! देखते देखते मेरा संसार काला हो गया, परन्तु तू अभी तक चमक रहा है। तू उस समय भी चमक रहा था, जब मैंने उसको बारह बरसके लिए परित्याग कर दिया था, और निर्दोषा दिनरात रो-रोकर अपना समय बिताती थी। तू अब भी चमक रहा है, जब मै उसके वियोगमे पागल हो रहा हूँ और जलनेकी तैय्यारियाँ कर रहा हूँ। कुछ घडियोके बाद जब मेरे शरीरके परमाणु अग्निद्वारा बिखर जायँगे और मेरी आत्मा उसकी खोजके लिए परलोकको प्रस्थान करेगी, तू उस समय भी चमकता होगा, और देख रहा होगा कि मेरी चितापर कौन आकर रोता है और कौन अपने शोकको सन्देहके पर्देमे छुपानेका प्रयत्न करता है। विधाताने मुझे अन-

मोल हीरा दिया, परन्तु मैने उसे न पहचाना। मेरी यही अदूरदर्शिता इस समय मेरी स्मृतिमे अग्निके समान जल रही है। (अग्निको देखकर) समय हो गया। अग्निकी ज्वाला मुझे प्रेमका निमत्रण देने लगी। आज यह कैसी प्रिय प्रतीत होती है। अग्नि! मुझे उससे मिला दे। मै तेरा यश गाता हुआ तेरी ज्वालामे भस्म हूँगा। भारतकी स्त्रियॉ इसी मार्गसे अपन प्यारोके पास पहुँचा करती है। क्या कोई पुरुष उनका अनुकरण नही कर सकता ? प्रियतमा ! प्रियतमा ! मै आ रहा हूँ। वियोगका समय गया। अब आनन्द और प्रसन्नताकी घडियॉ . (चितामे कूदनेको उद्यत होना)

[एकाएक अजनाका प्रवेश]

अञ्जना—प्राणनाथ ! प्राणनाथ ! !

पवन—(चौककर) न घबरा ! प्रियतमा, न घबरा ! मै तेरे पास आ रहा हूँ। इस अन्तिम समयमे तेरी मधुर वाणी मेरे कानोमे अमृत टपका रही है।

(अजना पीछेसे आकर पकड लेती है। पवन क्रोध प्रकट करता है।)

पवन—निष्ठुर ! अन्यायी ! ! कौन है, जो मुझे इस समय इस शुभ कार्य्यसे रोक रहा है ?

अञ्जना—वही प्राणनाथ, वही, जिसके लिए आप यह अशुभ कार्य्य करने लगे थे।

पवन—कौन ! अञ्जना ! मेरी प्राणप्यारी ! बोलो, बताओ मेरी ऑखे धोखा तो नही खा रही ? मै स्वप्न तो नही देख रहा ?

अञ्जना—नही प्राणनाथ ! प्राणपति ! आपकी दासी आपके चरणोमे उपस्थित है।

पवन—तो तू जीती है, यह अँगूठी झूठ बोलती है ?

अञ्जना—हाँ प्राणनाथ ! मै जीती हूँ। हनुपुरसे आपकी खोजमे आ रही हूँ।

पवन—तो मुझे सँभालो, मै आनन्दसे मूर्छित हो जाऊँगा। मेरी प्रिया ! मेरी अपनी अञ्जना !

अञ्जना—मेरे जीवन-सर्वस्व ! मेरे चन्द्रमा !

(गले लिपट जाते है। पवन मूर्च्छित हो जाते है। अञ्जना सँभालती है।)

अञ्जना—परमात्मा ! यह तेरी अपार दया।

पवन—(आँख खोलकर) यह स्वप्न तो नही, यह हाथ किसका है ?

अञ्जना—आपकी प्रियाका।

पवन—प्रिया ! प्रिया ! आज मेरा परिश्रम सफल हुआ। प्रिया !

अञ्जना—जीवन-नाथ !

पवन—तू इस समय तक कहाँ थी ?

अञ्जना—इन बातोका अवकाश नही। जब कभी आरामसे बैठेगे उस समय यह सब कहानी सुनाऊँगी।

पवन—(स्वगत) यदि यह हो जाता तो—

अञ्जना—आप क्या सोच रहे है ?

पवन—यह कि यदि तुम देर करके पहुँचती, तो यहाँ क्या हो जाता ?

अञ्जना—न कहो प्राणनाथ ! यह न कहो। मेरा हृदय व्याकुल हो जायगा।

पवन—इस चिताका धुआँ ही हमारे मेलका कारण हुआ।

अञ्जना—इसीको देखकर मै दौडती हुई यहाँ आई हूँ।

(पवनका उठना। राजा प्रतिसूर्य, महेन्द्रराय, प्रह्लाद, विद्याधर और प्रहसितका प्रवेश)

पवन—प्रणाम करता हूँ, महाराज ।

सब—चिरजीवि हो पुत्र, चिरजीवि हो ।

महेन्द्रराय—आजकी रात्रि हमारे वशके इतिहासमे सदा यादगार रहेगी, जब बिछुडे हुए हृदयोका मिलाप हुआ ।

अञ्जना—(सिर झुकाकर) मै भी प्रणाम करती हूँ ।

विद्याधर—सौभाग्यवती हो, बेटी ! सौभाग्यवती हो ! तुमपर हमारे कुलको ही नही भारत-भरको सम्मान है । तुमने स्त्रियोका गौरव बढाया है । तुमने पति-प्रेमका अद्भुत परिचय दिया है । तुमने दिखा दिया है कि भारत-नारियोके हृदयमे भी पुरुषत्व भरा हुआ है और वे पतिके लिए नगर तथा वन दोनोको एक समान जानती है ।

(पर्दा गिरता है)

चौथा दृश्य

स्थान—पशुमुखा वन । एक कुटियाका बाहरी भाग ।

समय—सबेरा

[रत्नवीर और श्रीदेवका प्रवेश ।]

श्रीदेव—लो वह आ रही है ।

रत्नवीर—अधकारकी बेटी, अँधेरीका नमूना ।

श्रीदेव—पगली, मूर्खा अपनी मृत्युकी ओर बढ़ रही है ।

रत्नवीर—नही, प्रकृतिका नियम उसे खेचकर ला रहा है । उसके नीचे मृत्युका जाल बिछा रहा है ।

श्रीदेव—अब बैठकर क्या कर रही है ?

रत्नवीर—हाथ मल-मलकर धो रही है। इसे वहम हो गया है कि अञ्जनाका रुधिर उसके हाथोमे अभी तक लगा है, जिसके धोखेमे इसने हमारी बहनको मार दिया है।

श्रीदेव—उस धब्बेको मिटा रही है।

रत्नवीर—परन्तु अग्निसे गर्मी और रेशमसे नर्मी छीननेका प्रयत्न कभी सफल नही हो सकता।

श्रीदेव—वह उठ बैठी।

रत्नवीर—आ रही है। आओ जरा छुप जायँ। प्रकृति उससे पापोका बदला ले रही है।

श्रीदेव—कैसा भयानक रोग है!

रत्नवीर—वह इससे भी अधिक दण्डके योग्य है।

(सुखदाका जलका लोटा लिये आना।)

सुखदा—तू जल है। तुझसे मल दूर हो जाता है। फिर तू मेरे हाथोको क्यो साफ नही करता? बराबर कई दिनोसे धो रही हूँ परन्तु पापका धब्बा मिटनेमे नही आता। पिशाचिन! चुडैल! तूने क्या कर दिया? इस समय एकान्त है, चारो और सन्नाटा है, कोई आँख नही देखती, कोई कान नही सुनता, उतावलीसे हाथ धो डाल, नही तो प्रकृति निद्रासे जाग उठेगी और तेरे पापोकी दुर्गंधि सूँघती हुई तुझे पकड लेगी। परन्तु मेरे हाथका धब्बा सामान्य धब्बा नही, जो साधारण जलसे दूर हो सके। इसे मेटनेके लिए तो सातो समुद्रोका जल भी असमर्थ है। नही नही, मै अकेली इस कामको नही कर सकती। मुझे किसीकी सहायताकी आवश्यकता है। (द्वारपर हाथ मारकर) अन्दर कौन है? द्वार खोलो और एक दुखिया स्त्रीकी सहायता करो।

[विद्युत्प्रभका द्वार खोलकर बाहर निकलना]

विद्युत्प्रभ—कौन सुखदा ! ललिता !

सुखदा—हाँ सुखदा ! ललिता !

विद्युत्प्रभ—नही सुखदा नही, ललिता भी नही । तुम मेरे हृदयकी स्याही हो, मेरे पापोका भयानक चित्र हो, मेरी बुराइयोका शरीरधारी प्रमाण हो, मेरे कुकर्मोकी स्मृति हो, मेरे आत्माका बोझा हो ।

सुखदा—नही, मै तो इनमेसे कुछ भी नही । मुझसे घृणा न करो, मेरे समीप आओ ।

विद्युत्प्रभ—मै तुमसे भागता हूँ । परतु तुम छायाके समान मेरा अनुकरण कर रही हो, इससे तुम्हारा क्या प्रयोजन है ? क्या इस निर्जन स्थानमे भी मेरे लिए शान्ति नही ?

सुखदा—हम दोनोने एक ही समयमे पाप-मार्गपर चलना आरम्भ किया था । अब जब कि यह भयावना नाटक समाप्तिपर आया है तो क्या हमारा एक ही स्थानपर होना समुचित नही ? मै जलानेवाली अग्नि हूँ, तुम डुबानेवाले अथाह सागर हो । एक साथ चले थे, एक साथ ठहर जायँगे ।

विद्युत्प्रभ—तुम मुझसे क्या चाहती हो ?

सुखदा—इधर आओ ।

(विद्युत्प्रभका समीप आना)

सुखदा—मेरा हाथ देख रहे हो ?

विद्युत्प्रभ—हाँ ।

सुखदा—इसपर जो दाग है, उसे भी देखते हो ?

विद्युत्प्रभ—नही ।

सुखदा—नही ?

विद्युत्प्रभ—नही।

सुखदा—तब मालूम हुआ, तुम अभी अंधे हो। अरे मूढ़! नयन उघाड और ध्यानसे देख।

विद्युत्प्रभ—मुझे तो कुछ भी दिखाई नही देता।

सुखदा—तो मेरी आँखसे देख। इससे रुधिरका फुहारा छूट रहा है। मैने एक स्त्रीका वध किया है, इसीसे हाथ रुधिरसे भर गया है। मै इस रगको छुटाना चाहती हूँ, परन्तु न जल काम आता है, न साबुन सहायता करता है।

विद्युत्प्रभ—सुखदा!—

सुखदा—सुखदा कहाँ है? उसकी तो उसी दिन मृत्यु हो गई थी, जब उसने राजकुमार पवनसे प्रेमकी भिक्षाकी याचना की थी, और उत्तरमे पवनने उसे घृणाकी ठोकर लगाई थी। वह प्रेमकी भूखी थी। प्रेम उसके जीवनकी आशा था। प्रेमके बिना वह इस मृत्यु-लोकमे एक दिवस भी व्यतीत न कर सकी, और असार ससारको लात मारकर दूसरे लोकको प्रस्थान कर गई। अब तुम उसे कहाँ खोजते हो? वह किसीको नही मिल सकती। मृत्युद्वारा उसके परमाणु वायु, जल, मिट्टी, अग्नि और आकाशमे बाँटे जा चुके है। उनसे पूछो, तुम्हे वापस लौटाये जा सकते है—अहह—हा हा हा पागल हो गया है।

(जोरसे हँसती है।)

पागल हो गया है, पागल हो गया है।

विद्युत्प्रभ—कौन पागल हो गया है?

सुखदा—तुम और कौन? पाप-स्मृतिने तुम्हे पागल कर दिया है। किसी वैद्यसे जाकर ओषधि लो। क्या तुम सुखदाके पुत्र हो, जो उसके वियोगमे रो रहे हो? अब वह इस लोकमे नही है।

विद्युत्प्रभ—ललिता !

सुखदा—ललिता ! कौन ललिता ! क्या राजकुमारी अञ्जनाकी दासी ललिता ? वह सुखदाकी सखी थी। उसे याद किया करती थी। उसके लिए ठडी सॉसे भरा करती थी। उसके लिए रुदन किया करती थी। परन्तु इस नीले आकाशके नीचे अब वह भी नही है। जिस दिन उसने वनमे जाकर अपनी स्वामिनीका वध किया था, उसकी तो उसी दिन समाप्ति हो गई थी। अब यह शरीर जो तुम देखते हो, न सुखदाका है न ललिताका, इसपर एक राक्षसीने अधिकार कर लिया है। इसे सबोधन करना है तो ‘ राक्षसी ’ कहकर करो।

विद्युत्प्रभ—(स्वगत) इसके एक एक शब्दसे मेरा आत्मा भयभीत हो रहा है, और ऑखोके सम्मुख अपने भूतकालके पापो और कुकर्मोका दृश्य खिंच रहा है। ओह ! अब मेरे नेत्र इसे देखना पसद नही करते। क्या आज कोई विशेष घटना होनेवाली है, जो मेरा पापी हृदय थर्रा रहा है।

सुखदा—(रोकर) बोलो, कहो, तुम क्या विचार कर रहे हो ? क्या तुम ज्योतिषविद्या जानते हो ? हाथ देख सकते हो ?

विद्युत्प्रभ—हॉ, देख सकता हूँ।

सुखदा—तो लो देखो और बताओ कि मेरा ब्याह कब होगा ? मेरा पति कैसा होगा ?

विद्युत्प्रभ—क्या पूछती हो ?

सुखदा—याद नही रहा।

विद्युत्प्रभ—क्या याद नही रहा ?

सुखदा—कि मैने कितने पाप किये है और उनका बोझा कितना हो गया है ! (रोकर) वह मै कैसे उठाऊँगी। न उठाऊँगी तो क्या

जमदूत अग्निके कोडे मारेंगे ? क्या उस समय तुम मेरी सहायता करोगे, और उन अग्निके कोडोंको अपनी अश्रु-धारासे सर्द कर दोगे ? अहहह, याद आ गया, मैं अपने हृदयके रुधिरसे उन्हें बुझा दूँगी। परन्तु वह तो पापाग्निसे खुश्क हो चुका है। (चौंककर) परन्तु तुम तो मेरा हाथ देख रहे थे, अच्छी तरह देखो !

विद्युत्प्रभ—क्या देखूँ ?

सुखदा—यही कि इसपर पापके कितने धब्बे हैं और उनको मेटनेके लिए कितने पुण्य-कर्मोंकी आवश्यकता है ? (हाथ खेंचकर) हाय, तुमने तो मेरे हाथको और भी काला कर दिया। क्या तुम भी मेरे समान पापके जीते जागते पुतले हो, बुराईके सजीव दृष्टान्त हो, छल कपटके चलते फिरते बदबूदार ढेर हो (धक्का देकर) हटो, दूर हो।

(विद्युत्प्रभका डरकर पीछे हटना)

सुखदा—क्यों ! डरते क्यों हो ? क्या परमात्माने मुझे इस लिए उत्पन्न किया है कि मुझे जो देखे वही डरे ? बाल्यावस्थामें माता डरी, घरसे निकली, तो पवन डरा, रत्नपुर गई तो अञ्जना डरी और सबसे पीछे चम्पा डरी। अब तो मैं सबसे डर रही हूँ और स्वयं अपने आपसे डर रही हूँ। मैंने जगतमें इतनी बदी की है, इतना पाप कमाया है कि अब और शक्ति नहीं रही।

विद्युत्प्रभ—सुखदा ! तुम्हारी अवस्था देखकर मैं पागल हो जाऊँगा।

सुखदा—पागल हो जाओगे ? नहीं तुम पहले ही पागल थे,

नही तो मेरे साथी क्यो बनते ? चिन्ता न करो, मेरी अवस्था देख-कर तुम पागल नही बनोगे ।

विद्युत्प्रभ—परमात्मा ! मेरे पाप क्षमा कर और इस गरीबको भी सतोष दे ।

सुखदा—तू रोता है। क्यो रोता है ? अगर तेरे अश्रु काले नही, अगर तेरा हृदय पापी नही, तो रो और जी खोलकर रो, यहाँतक कि उसमे मेरे सकल पाप धोये जायँ, और मै प्रसन्न-चित्तसे तुझे आशीर्वाद दूँ। (बिजली कडकती है।) ओह ! यह क्या है ?—प्रजापतिकी घण्टी, न्यायकारीका ढोल। काले बादलोपर सफेद बिजली मेरा नाम लिख रही है। जली ! जली ! अग्नि ! अग्नि ! सब ससार जल रहा है। बचाओ ! बचाओ ! मेरे पाप मुझे अग्नि बनकर लिपट रहे है। जम-दूत मुझे पकड़नेको दौड रहे है। अञ्जना मुझे क्रोधसे देख रही है। नही नही, मैने तुम्हे नही मारा, मैने कुछ नही कहा ।

(अचेत होकर गिर जाता है।)

विद्युत्प्रभ—उठ ! दुर्भागिनी उठ ! ओह परमात्मा, यह तो मूर्च्छित हो गई है ! (जल लेने कुटियामे जाता है।)

(रत्नवीर और श्रीदेवका गुप्त स्थानसे निकलना)

रत्नवीर—(सुखदाको जोरसे हिलाकर) पापकी जीती जागती मूर्ति ! जाग और देख, तेरे कर्मोके फलका समय आ गया ।

सुखदा—(आँख खोलकर) तू कौन है ? मृत्युका जमदूत ?

रत्नवीर—हाँ मृत्युका जमदूत !

सुखदा—मुझे न मार ! मुझे न मार ! मैने कुछ नही किया ! मैने कुछ नही किया ! आकाश अभी तक नीला है। प्रकाश अभी तक

नही तो मेरे साथी क्यो बनते ? चिन्ता न करो, मेरी अवस्था देखकर तुम पागल नही बनोगे ।

विद्युत्प्रभ—परमात्मा ! मेरे पाप क्षमा कर और इस गरीबको भी सतोष दे ।

सुखदा—तू रोता है। क्यो रोता है ? अगर तेरे अश्रु काले नही, अगर तेरा हृदय पापी नही, तो रो और जी खोलकर रो, यहाँतक कि उसमे मेरे सकल पाप धोये जायँ, और मै प्रसन्न-चित्तसे तुझे आशीर्वाद दूँ। (बिजली कडकती है।) ओह ! यह क्या है ?—प्रजापतिकी घण्टी, न्यायकारीका ढोल। काले बादलोपर सफेद बिजली मेरा नाम लिख रही है। जली ! जली ! अग्नि ! अग्नि ! सब ससार जल रहा है। बचाओ ! बचाओ ! मेरे पाप मुझे अग्नि बनकर लिपट रहे है। जमदूत मुझे पकड़नेको दौड रहे है । अञ्जना मुझे क्रोधसे देख रही है। नही नही, मैने तुम्हे नही मारा, मैने कुछ नही कहा ।

(अचेत होकर गिर जाता है।)

विद्युत्प्रभ—उठ ! दुर्भागिनी उठ ! ओह परमात्मा, यह तो मूर्च्छित हो गई है ! (जल लेने कुटियामे जाता है।)

(रत्नवीर और श्रीदेवका गुप्त स्थानसे निकलना)

रत्नवीर—(सुखदाको जोरसे हिलाकर) पापकी जीती जागती मूर्ति ! जाग और देख, तेरे कर्मोके फलका समय आ गया ।

सुखदा—(ऑख खोलकर) तू कौन है ? मृत्युका जमदूत ?

रत्नवीर—हॉ मृत्युका जमदूत !

सुखदा—मुझे न मार ! मुझे न मार ! मैने कुछ नही किया ! मैने कुछ नही किया ! आकाश अभी तक नीला है । प्रकाश अभी तक

अञ्जना—पापकी स्मृतिका विषमय परिणाम, भयानक जीवनकी भयानक समाप्ति !

सुखदा—नही जाती ? तू नही जाती ? मैने तुझे कब मारा था ? अरी पाषाणहृदया ! मेरी ऑखोसे ओझल हो जा ! जली ! जली ! थोडा-सा जल ! (तडपती है ।)

अञ्जना—यदि जल तुझे शान्ति दे सके, तो मै ऑखे निचोडनेको उद्यत हूँ ।

सुखदा—अन्धकार हो गया, कुछ दिखाई नही देता। सूरज भी बुझ गया। तारे भी काले हो गये, चन्द्रमाका प्रकाश सर्द हो गया। आह आह मरी म म मरी !

(तडपती और मर जाती है)

अञ्जना—सुखदा ! सुखदा ! शोक है कि तू पापके परिणामसे न भाग सकी, कर्मोकी ऑधीमे टिमटिमाता हुआ दीपक न बच सका।

[पवन, राजा महेन्द्रराय, और राजा प्रतिसूर्य्य, राजा प्रह्लाद, विद्याधर, आयुष और सिपाहियोका प्रवेश ।]

सब—(चौककर) हाय, यह क्या ?–लाशे ?

अञ्जना—ससाररूपी बागकी अतिम बहार, सुन्दरता और यौवनके कुसुमका अतिम दृश्य ।

महेन्द्रराय—(पहिचानकर) कौन विद्युत्प्रभ और राजकुमारी सुखदा ? तो चपाके भाइयोने बदला ले लिया ? पापके जीते जागते पुतले, ईर्षा और द्वेषके शरीरधारी खिलौने !

अञ्जना—मर गये, मार दिये गये । अपने कर्मोका फल इस जगत्मे भोग गये। अब इनके शरीर पवित्र हो चुके है। इनसे

घृणा न कीजिए। इनके बारेमे अपशब्द न कहिए। इनकी आत्मा अभी सुन रही होगी।

विद्याधर—स्वर्गीय देवी! तू धन्य है। तेरा हृदय धन्य है।

प्रतिसूर्य्य—दोनो लाशे उठाकर ले चलो और यथाविधि इनका दाह-कर्म करो और इनके माता-पिताको समाचार भेज दो।

(सबका प्रस्थान)

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—आदित्यपुरका राजमहल

समय—तीसरा प्रहर

[पवन और अञ्जना]

पवन—कहो प्रिये, कहो।

अञ्जना—आप बार बार क्या पूछते है? काले दिन आये और बीत गये, फिर उनको याद रखनेसे क्या लाभ है? अब तो ऐसा प्रतीत होता है, मानो वे केवल स्वप्नमात्र थे। आपके प्रेमकी ज्योतिने उस अन्धकारको मेरे हृदयसे दूर भगा दिया है। अब उसका कही पद-चिह्न तक दिखाई नही देता।

पवन—परन्तु इस दुर्भाग्यका कारण केवल मै हूँ, यह सोचकर मेरा सिर लज्जा और घृणासे नीचे झुक जाता है और ऑखे ऊपर नही उठती।

अञ्जना—नही प्राणनाथ! जीवनाधार! वह मेरे अपने पूर्व-जन्मके कुकर्मोका फल था।

पवन—कैसी सरलहृदया, कैसी नेक, कैसी धर्म्मात्मा स्त्री है! प्रिये, सच कहता हूँ, मुझे तुमपर गर्व और अभिमान है। परन्तु

यह तो कहो कि जब तुम पशुमुखा वनमे थी, तो क्या तुमको अँधेरी रातोमे भय न होता था ?

अञ्जना—नही जीवननाथ, आपका प्रेम उस अन्धकारमे प्रकाश बनकर चमकता था । मै जानती थी, मै समझती थी कि आप जहाँ कही भी है, अञ्जनाके है और अञ्जना आपकी है । मुझे विश्वास था कि आप मिलेगे, फिर बीते हुए दिन लौटेगे, फिर प्रेमके दौर चलेगे, फिर—

पवन—प्रिये ! प्रियतमे ! तुम्हारा प्रेम मुझे पागल बना देगा, तुममे इतना प्रेम क्यो है ?

अञ्जना—वह सब आपके लिए है ।

पवन—इन वचनोसे मै कृतकृत्य हो गया । मै और कुछ नही चाहता, केवल तुम्हारा प्रेम चाहता हूँ ।

अञ्जना—वह तो मै सदा आपको देती ही हूँ नाथ, उसके लिए चिन्ता न करे ।

पवन—उसके लिए चिन्ता न करूँ ? देवी, यह तुम क्या कहती हो ? जो प्रेम बारह सालके त्यागमे नही हिला, जो प्रेम कलक लगानेसे नही हटा, जो प्रेम दो सालके वनवासमे हिमालयके समान स्थिर रहा, मै उसके लिए चिन्ता न करूँ ? यह वह बहुमूल्य वस्तु है, जिसके आगे ससारके सकल पदार्थ इकट्ठे होकर आजायँ, तो भी सिर नही उठा सकते । यह वह स्वर्गीय आनन्द है, जिसके सामने स्वर्गकी कोई अन्य वस्तु नही ठहर सकती । मेरे पास सासारिक धन, सम्पत्ति, राज्य, सुख, सम्मान सब कुछ है । परन्तु यदि यह सब कुछ मुझसे छीनकर मुझे केवल तुम्हारा पवित्र प्रेम दे दिया जाय, तो मुझे उतना भी शोक

न होगा, जितना एक चक्रवर्ती राजाको फटा हुआ वस्त्र फैकनेसे हो सकता है ।

अञ्जना—प्राणनाथ, आपके ये ही भाव है, जिन्होने इतने घोर दुःखोमे मेरी रक्षा की है। कही अब फिर मुझे न बिसार देना, मुझमे और दु ख सहनेकी शक्ति नही है ।

पवन—नही प्रिये, नही, अब तुमने मेरी ऑखे खोल दी है, अब भूल नही हो सकती—कौन ?

[वसन्तमालाका सन्यासिनीके वेषमे प्रवेश]

अञ्जना—सखी, बहन वसन्तमाला, यह क्या ? तेरे सुन्दर शरीरपर यह वस्त्र शोभा नही देते। तूने यह क्यो पहिने है ?

वसन्त०—मै यही पहिनना चाहती हूँ ।

पवन—परन्तु क्यो ?

वसन्त०—ससार असार है, उसके सुख निर्मूल है। अबतक आपकी सेवा की है। अब चार दिन परमात्माकी ओर भी झुक देखूँ।

पवन—भोली बहिन, क्या कहती हो ?

अञ्जना—सखी, मुझे छोडकर न जाओ। मेरे मुखकी ओर देखो, ऑखोसे अभीतक उदासी नही गई। यदि तुम चली गई, तो मेरा सुख थोडा रह जायगा।

वसन्त०—एक दासीके वियोगको इतना मान देना यह आपका ही काम है।

पवन—तुझे दासी कौन कहता है ? तुझे दासी किसने समझा है ? इस स्वार्थी ससारमे जहॉ भाई भाईके खूनका प्यासा हो रहा है, तूने बेगानी होकर जिस प्रकार अपनोसे बढकर ममता दिखाई है, उसके कारण हम तुझे न दासी समझते है, न समझना हमारा धर्म

है। अब तू हमारी दासी नही, बडी बहिनके स्थान है। अपने पेटके लिए नौकरी हजारो और लाखो करते है, परन्तु दूसरोंके लिए नौकरी करना किसी विरलेका ही काम है।

अञ्जना—बहिन वसन्तमाला, तुमने मेरी बात आजतक नही टाली, अब क्यो हठ करती हो। नही, नही, मै तुमको नहीं जाने दूँगी। सिर न हिलाओ, अस्वीकार न करो, मै तुम्हारी छोटी बहिन हूँ।

पवन—यह बैठ बिठाये तुम्हारे दिलमे क्या विचार आया है?

वसन्त०—राजकुमारी!

अञ्जना—आहा! इस शब्दमे कितना माधुर्य्य, कितना प्रेम भरा हुआ है। तो अब तुम न जा सकोगी। इस एक शब्दसे प्रतीत हुआ कि तुम्हारा हृदय प्रेमका स्रोत है, और वह स्रोत इस समयतक सूख नही गया। ऐसा हृदय दूसरे हृदयको ठोकर नही मार सकता। मै तुमसे मिन्नत करती हूँ, मुझे अकेली न छोडो।

पवन—बहिन, तुम जानती हो, माता-पिता दोनो वानप्रस्थाश्रममे जाचुके है। यह घरमे अकेली है, इसे ससारका रास्ता कौन दिखायगा? तुममे दया है, तुम इसका ध्यान रक्खो। यह दुनियाके व्यवहारसे अजान है।

वसन्त०—ये साक्षात् लक्ष्मी है, ससार इनके सामने सिर झुकाना अहोभाग्य समझेगा। मुझे इस समय आज्ञा दीजिए, मै महेश्वरका तप करूँगी। परन्तु यह प्रतिज्ञा करती हूँ कि यदि मुझे यह पता लगा कि आपपर कोई विपत्ति है, तो तपादि ही नही, स्वर्गपर भी लात मारकर सेवामे उपस्थित हो जाऊँगी। परन्तु इस समय—आज्ञा दीजिए।

अञ्जना—तो तुमने यही स्थिर किया है?

वसन्त०—हाँ यही।

अञ्जना—अवश्यमेव जाओगी ?

वसन्त०—अवश्यमेव।

अञ्जना—नही रुकोगी ?

वसन्त०—नही।

अञ्जना—किसी प्रकार ?

वसन्त०—किसी प्रकार नही।

अञ्जना—तो ठहरो, मेरा अन्तिम हथियार अभी बाकी है।

(वेगसे प्रस्थान)

वसन्त०—यह अन्तिम हथियार क्या होगा ?

पवन—बहिन, न जाओ, तुम आगे काफी तपस्या कर चुकी हो।

वसन्त०—राजकुमार, मेरा कर्त्तव्य मुझे बाहर खेच रहा है। मै मनुष्यसे परे भागना चाहती हूँ।

(अञ्जनाका बालकको लिये हुए प्रवेश)

अञ्जना—नही भाग सकोगी बहिन, नही भाग सकोगी। यह लो इस बच्चेका मुँह देखो और फिर बताओ कि क्या तुम इसे देखे बिना रह सकोगी ? जिसे दिनभर गोदमे लिये रहती हो, जिसे रातको साथ सुलाती हो, जो तुम्हे घडीभर न देखे तो महल सिरपर उठा लेता है, जिसे चूम चूमकर पगली हो जाती हो, क्या उसे दिलसे भुला सकोगी ?

पवन—बहिन, इस बालकका ही ध्यान करो। यह रोता रहेगा, तुम्हारा साथ पहिचानता है।

वसन्त०—यह क्या ! मेरे हृदयमे सग्राम होने लगा। मेरा चित्त डोलने लगा। ठहर, हृदय ठहर, मै तुझे समझा दूँ। पापी, उधर न देख, फॅस जायगा।

अञ्जना—(बालकको आगे करके) तुम न देखो, यह अपने आपको स्वय दिखा लेगा। क्यो बेटा हनुमान ?

वसन्तमाला—(दूसरी ओर मुँह फेरकर) राजकुमारी, आज्ञा दो, मै अब न रुकूँगी। (अञ्जना बालक सामने कर देती है।)

अञ्जना—परन्तु, तुम्हे मै नही, यह बालक रोकेगा।

वसन्त०—फिर दिल हिलने लगा। चलते हुए पाँओमे बेडियाँ पड गई। परमात्मा, सहायता कर।

अञ्जना—वसन्त बहिन, इसे देख। यह रोने लगा है।

वसन्त०—बस ! अब मै नही जा सकती। अब यह असम्भव है।

पवन—वसन्तमाला, तेरा प्रेम धन्य है।

वसन्त०—राजकुमारी !

अञ्जना—वसन्तमाला !

वसन्त०—यह तुमने क्या कर दिया ? चित्त शान्त था, आँधी थम गई थी, हृदय महेश्वरकी ओर चल रहा था, परन्तु तुमने इस बालकका मुँह दिखाकर मेरा रास्ता रोक दिया है। अब मै उधर नही जा सकती। बेटा, तूने मुझपर कैसा जादू कर दिया है कि तुझे देखते ही मेरे विचार हार गये है और उत्साह भग हो गया है। क्या तेरे बिना स्वर्गपुरीमे भी रह सकूँगी ? नही,—नही, असभव है। राजकुमारी इसे मेरी छातीसे लगा दो। मै अब सन्यासिनी न बनूँगी।

(परदा गिरता है।)

समाप्त